याग चयन

१ संगतिकरण १४-११-१९८४

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता हैं क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत, अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा हैं, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, मानो वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा हैं, हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में, मानो यागों का प्रायः वर्णन आता रहता हैं, क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ में, हमारे ऋषि-मुनियों ने, मानो एक याग की रचना की, और याग को उन्होंने अपने ब्रह्माण्ड और पिण्ड की, उसकी कल्पना की हैं। मानो उसको संगतिकरण किया हैं, कोई भी संसार का क्रियाकलाप हो, यदि उसके मंगल ब्रीहि यदि उसमें संगतिकरण नही वह कार्य सफलता को प्राप्त नही होगा।

तो इसीलिए हमारे यहां यागों का बड़ा चयन ऋषि-मुनियों ने किया, हमारे यहाँ ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा हुए हैं, तो ब्रह्म के पुत्र अथर्वा ने कुछ ऋषि-मुनियों को एकत्रित किया, और उन्होंने कहा कि यागों का वैदिक साहित्य में मन्त्रार्थ में बड़ा वर्णन आया है, हमारे यहाँ अग्निष्टोम याग का वर्णन आया अश्वमेध याग का भी वर्णन आता रहता हैं, तो ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा जी ने यह कहा ऋषि-मुनियों से क्या महाराज! यह जो याग हैं, यह क्या है? मैंने वेदों का अध्ययन किया हैं, आचार्य के चरणों में, विद्यमान हो करके, इसका निर्णयात्मक करता रहता हूँ, परन्तु मेरे विचार मे यह नही आ रहा हैं, कि इस याग का मानव का के जीवन से भी तो कोई समन्वय होना चाहिए। उसी के पश्चात वह संगतिकरण कहलाता हैं। तो मेरे पुत्रों! अथर्वा जी के इस वाक् उच्चारण करते ही, महर्षि अंगिरस ऋषि ने कहा, क्या यह जो याग है यह मानव जीवन ही तो हैं। मानव इसका समन्वय क्या कर सकोगे? मानो देखो, सुगन्ध आती हैं, उसका घ्राण से उसका समन्वय रहता हैं मानो उसमें तेज होता है उसका मानव के जीवन से समन्वय होता है मानो उसमें अग्नि के मुख में प्रदान किया हुआ, कोई भी पदार्थ हो, उसका वह भेदन कर देती हैं। जैसे मानव के शरीर में, हमारे यहाँ, जब हम प्रारम्भ में भोज करने लगते हैं तो पाचांम ब्रह्म वाचों जैसे अग्नि व्रतस्व स्वाहा प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा मानो इन प्राणों के सम्बन्ध में यह पांच आहुति दी जाती हैं प्रारम्भ में, तो यह जब उसको अपने में पान करते हैं तो प्राण का शोधन होता हैं, और प्राण का सम्बन्ध याग से होता हैं, क्योंकि अग्नि बिना प्राण के अपने में सूत्रित नही होती, अग्नि अपने में प्राण के, वायु में सूत्रित होती रहती हैं, और वही प्राण बेटा! हमारे इस मानव शरीरो में, क्रियाकलाप कर रहा हैं।

याग की उपयोगिता

तो विचार क्या मुनिवरों! एक-एक जो गतियां हैं, प्राण की प्रतिष्ठा कहलाती हैं, इस प्राण को यदि हम, भौतिक याग से विच्छेद करते हैं, तो हमारा संगतिकरण ऊँचा नही बनता। हमारे ऋषि-मुनि जब याग करते हैं तो जिस स्थली पर वह साधना के क्षेत्र में प्रवेश करते हैं तो वहाँ के वायुमण्डल को पवित्र बनाया जाता हैं। मानो देखो, उन्होंने कहा अंगिरस ऋषि ने, कि जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अध्ययन करता था, तो एक समय उनके मेरे पूज्यपाद गुरुदेव के हृदय में, उनका नाम था शौनिक ऋषि महाराज, उनके हृदय में यह आशंका हुई, कि मैं तप करने के लिए चलूं। वह जब भंयकर वन में तप करने पंहुचे, तो वहाँ उन्होंने अपनी साधना में वह परिणत हो गएं जब वह साधना करने लगे तो उनके मस्तिष्क में प्राण की जो तरंगें मानो वायुमण्डल में तरंगित हो रही

थी, तो वह तरंगें अशुद्ध उन्हें प्रतीत हुई। मानो जब अशुद्ध प्रतीत हुई, तो इसमें चित्र सुन्दर नही आ रहे थें, वह जब मस्तिष्क में उसका अध्ययन कर रहे थें, तो उसमें तरंगें प्रिय नही आ रही थी, उन तरंगों के प्रिय न आने पर उन्होंने विचारा कि मुझे क्या करना चाहिए? तो भंयकर वनों से देखो, साकल्य एकत्रित करने लगे। अब उन्होंने विचारा कि इस मानो शोधन के लिए, तो मानो मुझे गो घृत चाहिए, अब वह एक समय भ्रमण करते हुए, मानो महाराजा इन्द्र के द्वारा पंहुचे, और महाराज इन्द्र से यह प्रार्थना की कि महाराज! मैं मानो साधना के लिए याग करने जा रहा हूँ, मुझे अोक गऊ चाहिए, राजा ने बेटा! वह गऊ उन्हें प्रदान कर दी, उस गऊ को ले करके वह भंयकर वनों में मानो उसी स्थली पर आ गएं और आ जाने के पश्चात उन्होंने याग किया अब वायुमण्डल का शोधन होने लगा। क्योंकि याग इतना सूक्ष्मतम रहस्य संगतिकरण माना गया हैं, कि यज्ञमान का हृदय उस याग में रहना चाहिए। यज्ञमान की जो मनोनीत भावना होती हैं, याग में परिणत होनी चाहिए। उसे यह स्वीकार करना चाहिए, कि मेरा जो हृदय हैं, वह भी याग हैं, और यह जो भौतिक याग हो रहा है, यह भी मेरा हृदय हैं। तो मानो जब यह भावना, अपने हृदय से जब यज्ञमान याग करता है, तो वायुमण्डल पवित्र हो जाता है। दूषित तरंगें समाप्त हो जाती है, तो ऋषि ने, जब इस प्रकार याग का प्रारम्भ किया, तो मानो वह नित्यप्रति याग करते, और उसके पश्चात वह साधना करते।

तो साधना करते-करते मानो वह अपने प्राणायाम में अपनी साधना में सफलता के मार्ग के लिए गमन किया। जब गमन किया करने लगे तो एक समय उनके आश्रम में महर्षि कोटक ऋषि महाराज आ गएं, तो कोटक ऋषि महाराज ने उस याग में एक साकल्य प्रदान किया क्योंकि वह कहीं से साकल्य क्योंकि हमारे यहाँ परम्परा से यह माना गया हैं। मानो तीन समिधा ले करके याग के समीप जाते हैं, तीन समिधा ज्ञान कर्म और उपासना का वह प्रतीक मानी गई हैं, आत्मा परमात्मा प्रकृति का वह प्रतीक माने गएं हैं, भू भुवः स्वः यह तीन मात्राओं की प्रतिका मे वह रत्त रहते हैं। तो इस भाव से जब वह कोटक ऋषि महाराज मानो देखो, उस याग में तीन समिधा प्रदान की तो उनके हृदय की तरंगें पवित्र नही थी। वह जब मानो देखो, अग्नि के मुख मे वह समिधा और साकल्य प्रदीप्त हुआ तो ऋषि महाराज को जो साधक बने हुए थे, उनके अनुभव में बेटा! देखो, वह जो तरंगें समिधा में वह अग्नि की धाराओं में प्राण की प्रतिभा में बेटा! जब रत्त हुई तो उन्होंने कहा कोटक ऋषि तुम्हारा हृदय पवित्र नही हैं। इसीलिए तुमने मेरे याग को अपवित्र कर दिया है, जो मैं मानो आधिभौतिक याग को आध्यात्मिकवाद से मैं संगतिकरण कर रहा था। उसका जो समन्वय है उसका विच्छेद होने लगा हैं।

तो मेरे प्यारे! जब कोटक ऋषि से यह वाक् कहा तो उन्होंने ऋषि के चरणों को स्पर्श किया, हे भगवन! वास्तव में मैं तो हृदय को शोधन करने के लिए याग में पधारा उन्होंने कहा कि भई! तुम मेरे से पूर्व मानो इसकी कुछ विचारधारा कर लेते तो बहुत प्रिय होता। तो विचार-विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, जब ऋषि ने यह वाक् सभा में वर्णन किया कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव याग करते थे, याग से वायुमण्डल का शोधन पवित्रतम मानो देखो, साधना का क्षेत्र बन गया, परन्तु देखो, इस याग का अभिप्रायः क्या हैं यागां रूद्रो भागां ब्रीहि व्रतां तो इसीलिए प्रत्येक मानव को यह विचारना चाहिए कि याग मेरा हृदय हैं, और हृदय ही याग हैं, क्योंकि यही तो मानव को वायु की वृत्तियों में रमण करा देता हैं। अग्न्याध्यान करने वाला वह अग्नि के स्वरूप में परिणत हो जाता है, तो बेटा! आज मैं विशेष चर्चाएं तो देने नही आया हूँ, क्योंकि मेरे प्यारे महानन्द जी मेरे दो शब्दों की विवेचना भी करेंगें आज का वाक् तो यह कह रहा हैं कि हम मानो देखो, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, ऋषि-मुनियों ने बेटा! याग की एक रचना की हैं। एक मानो अपने शरीर को संगतिकरण किया हैं और संगतिकरण का अभिप्रायः यह कि एक दूसरे से समन्वय होना चाहिए। मिलान होना चाहिए। तो इसी प्रकार जब ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने यह अंगिरस मुनि महाराज

से चर्चाएं की, तो ऋषि-मुनियों ने बेटा! यह स्वीकार किया और यह जो बुद्धिमानो का यह जो क्रियाकलाप है, यह परम्परा से चला आ रहा हैं। सृष्टि के प्रारम्भ से और वर्तमान के काल तक और सृष्टि के अन्तिम चरण तक बेटा! यह अन्तिम तक समाप्त नही होता। जैसे परमपिता परमात्मा ने मानो सूर्य, चन्द्रमा तारागण और इसी प्रकार बेटा! मानो देखो, बारम्बार प्रलय हो जाती हैं, प्रलय के पश्चात पुनः उसी क्रम से सृष्टि का निर्माण होता हैं, वही मानो देखो, समुद्र, सूर्य इत्यादि का उसी प्रकार निर्माण होता हैं, इसी प्रकार मानो देखो, जैसे वेद है, प्रकाश है, ज्ञान का पुंज हैं, तो मानो देखो, याग के साथ-साथ उसी की रचना हुई, क्योंकि परमपिता परमात्मा ने सृष्टि रूपी याग को ही तो निर्माण किया है, और मानव के शरीर में, जब माता मानो देखो, अपने हृदय से, बालक को जन्म देती हैं, तो यह जानती है कि मेरा हृदय, मेरे हृदय में पनप रहा हैं। तो जब यह भावना और मैं याग कर रही हूँ, यह मेरा याग हो रहा हैं, हमारे यहाँ मानो सन्तानां पुत्राणां भविते सन्तान पुत्र को उत्पन्न करना भी, बेटा! एक याग की संज्ञा प्रदान की हैं। याग क्यों है वह? क्योंकि देखो, माता के हृदय में एक त्याग भावना की प्रवृत्ति होती हीं, और जब माता त्याग भावना से एक सन्तान को जन्म देती हैं। मानो देखो, उसके सुयोग्य बना देती हैं, तो वह प्रतीत नही होता वह राष्ट्रीय सम्पदा बन जाएं, या ब्रह्मवेत्ता बन जाएं, तो वह माता की सम्पदा नही रहती, वह सम्पदा संसार की सम्पदा बन जाती हैं। एक माता का पुत्र यदि ब्रह्मवेत्ता बन जाता हैं, तो वह संसार की सम्पदा बन गई, एक माता का पुत्र यदि योगी बन जाएं, प्राण के निदान को जानने लगे तो मानो देखो, वह विश्व की सम्पदा बन गई। तो माता जब अपने में त्याग पूर्वक सन्तान को जन्म देना अथवा वह याग करती है। यागां हिरण्यं ब्रह्म वाचाः बेटा! मैंने बहुत पुरातन काल में माता मल्दालासा का वर्णन किया था, हमारे यहाँ देखो, एक कोड़क वृत्ति नामक ब्रह्मचारी थे, उनकी माता का भी वर्णन किया मेरे प्यारे! माता के गर्भ में जब बाल्य होता है, तो वह देवपूजा ही क्यों करती हैं, ब्रह्म का चिन्तन करती हैं, सृष्टि को अपने नेत्रों से जहाँ तक दृष्टिपात आती हैं, दृष्टिपात करती रहती हैं। बेटा! माता मल्दालसा ने जब यह विचारा कि मेरा पुत्र ब्रह्मवेत्ता हो मेरा पुत्र राजा नही होना चाहिए, तो उस समय माता मल्दालसा प्रातःकालीन उषा काल में वह मानो सृष्टि की आभा को निहारती रहती थी और नेत्रों से दृष्टिपात करती जहाँ तक नेत्रों की ज्योति जाती मानो देखो, ज्योति को दृष्टिपात करते-करते अन्त मे अन्तर्मुखी हो करके, अपने हृदय में उसी आकार को दृष्टिपात करती रहती माता को जो प्रिय बालक गर्भस्थल में होता हैं मानो देखो, उसके हृदय में भी वही भाव, वही तरंगें उसमें प्रवेश कर रही है। यह प्रभु का विज्ञान बेटा! कितना अनन्तमयी हैं, प्रभु का विज्ञान कितना महान हैं, तो मानो देखो, माता मल्दालसा, जब यही करती रहती, तो बाल्य जब लोरियों में होता, तो उसे निहारती रहती क्या देखो, संसार को दृष्टिपात करो। यह सूर्य को दृष्टिपात करो, यह सूर्य कितना त्याग में हैं, कितना तपस्या में हैं, यह प्रकाश देता ही रहता है, यह इसका प्रकाश थकित नही हो रहा हैं, तो बालक उसको निहारता है, माता निहारती है लोरियों में, जो दुग्ध बालक प्रवेश कर रहा है, वह तरंगें उसमें प्रवेश कर रही हैं। तो कितना प्रिय संगतिकरण हो रहा हैं, विचारने से प्रतीत होता है कि कितना प्रिय संगतिकरण हैं यह प्रभु ने कैसा संगतिकरण निर्णय किया है। तो विचार क्या बेटा! हमें अपने विचारों को विराम दे रहा हूँ मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगें।

पूज्य महानन्द जीः- ओ३म् दधिमा सर्वं भद्रा मां गतौ यज्ञा भविते मानाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषिमण्डल! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, अभी-अभी यागों का चयन करा रहे थे, और हम अपने में यह अनुभव कर रहे थे, कि जैसे हम, यज्ञशाला में विद्यमान हों, ऐसा अपने में अनुभव कर रहे थे, जैसे हम अथर्वा के आश्रम में विद्यमान हों, ऐसा अनुभव कर रहे थे, जैसे साधक मानो अपनी साधना में रत्त हो जाता हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो सदैव ब्रह्माण्ड की नाना वार्त्ताओं में रत्त हो जाते हैं, परन्तु जहाँ यह हमारी आकाशवाणी जा रही हैं, वहाँ भी

मानो देखो, यज्ञशाला ही प्रतीत हो रही हैं। यज्ञं भवितां मयोवर्णानं मानो मेरा सदैव यह भाव रहता हैं, जिस स्थली पर यह आकाशवाणी जा रही हैं वहाँ एक याग का चयन हुआ, मानो मेरा हृदय, सदैव यज्ञमान के साथ रहता हैं। हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, सौभाग्य का अभिप्रायः यह है कि क्या गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, देव की पूजा होती रहे, क्योंकि ऋषि-मुनियों का रचाया हुआ जो पवित्र कर्म हैं, क्रियाकलाप है, जो पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी प्रगट करा रहे थे मानो यह प्रायः इसी प्रकार चला रहे। मेरे हृदय ही यह वेदना रहती हैं।

हमारे यहाँ यागों का चलन, मध्य काल में मानो अशुद्धियों के क्षेत्र में चला गया, ब्राह्मण समाज ने दो वेदियों को बनाना प्रारम्भ किया, एक वेदी पर देवताओं का पूजन और द्वितीय वेदी पर जब अग्न्याध्यान किया जाता, तो स्वार्थ में आ करके, उससे माँसों की आहुति देना प्रारम्भ कर दिया मानो देखो, गो मेध मे गऊ, अजामेध में मानो अजः, बकरी और अश्वमेध से मानो घोड़े की आहुति देना प्रारम्भ किया मानव ने जाना नही वाजपेयी याग में गऊ के बछड़े की बलि देना प्रारम्भ किया परन्तु देखो, इसी प्रकार अग्निष्टोम याग में मानो देखो, और पशुओं की बलियां प्रदान करने लगे। तो बलि के अभिप्रायः को मानव ने जाना नही वर्तमान में प्रायः हमारे यहाँ बलि का अभिप्रायः यह है पुरूषार्थ करना, प्रत्येक मानव जब पुरूषार्थ करता हैं, तो वह बलि का प्रतीक कहलाता हैं, उसको नष्ट करना नही हैं। बलि का अर्थ केवल यह है कि वह पुरूषार्थी बने, इसी प्रकार, अश्वेमध याग में, अश्व नाम राजा का है, उसको पुरूषार्थी होना चाहिए, जब राजा पुरूषार्थी नही होता, राजा के गृह में, देव पूजा नही होती। तो मानो देखो, वह राजा आलस्य और प्रमादी बन जाता हैं। और राजा के आलस्य और प्रमाद के आने पर मानो उसका आत्मा हन्नता को प्राप्त हो जाता हैं, दूसरें के वैभव को मानो अपने में धारण करने लगता हैं, दूसरी पुत्रियों के श्रृगारों को हनन करने लगता हैं, तो इस प्रकार का जो राजा होता हैं देखो, राजा नही होता परन्तु राजा वह होता है जो अश्वमेध, अश्व कहते हैं घोड़े को जब राजा के राष्ट्र में घोड़े ऊँचे हों और मानो देखो, वह समय-समय पर विश्व को विजय करके विश्व को अपने अनुकूल बना करके याग करते रहे, देवपूजा करते रहे, तो वह राजा अश्वमेध यागी होता हैं, और जब वह अश्वमेध याग करता है, तो मानो उसके राष्ट्र में मानो किसी प्रकार की हानि नही होती उस राजा के राष्ट्र में प्रजा सम्पन्न होती हैं। और प्रजा में राजा के प्रति मानो श्रद्धा होती है, और राजा के राष्ट्र में हिंसा नही होती, और मानो देखो, जो अश्वमेध याग राजा करता हैं उसके गृह में देव पूजा होती है। तो राजा के राष्ट्र में रूढ़िवाद नही होता, और जब रूढ़िवाद नही होता तो उसके राष्ट्र में एक वैदिकता एक मानवीय धर्म पनपता रहता है, और वह जो मानवीय दर्शन हैं, मानवीय जो धर्म हैं, वही मानो देखो, राजा के राष्ट्र को ऊँचा बनाता हैं। तो इस प्रकार मेरा तो सदैव यह मन्तव्य रहता है, कि राजा ऊर्ध्वा में रहने चाहिएं। राजा रावण ने जब अश्वमेध याग किया था जो राजा के राष्ट्र मे प्रसन्नता थी, महाराजा अश्वपति के यहाँ देखो, अश्वमेध याग होता तो प्रजा मानो देखो, जब राजा को अपने मानो देखो, अपनी कृतियों में असुतो वर्णा राजा को ब्रह्म ज्ञान होना चाहिए। क्या परमात्मा सदैव तेरे साथ हैं, जब राजा अपने रक्षार्थी के लिए रक्षा करने के लिए मानव का आश्रय लेता हैं। वह राजा ब्रह्मज्ञानी नही होता, वह राजा मानो देखो, राष्ट्रीयतव में महान नही बनता, मैंने परम्परागतों से बहुत पुरातन काल जब राजा दशरथ मानो गमन करते थे तो केवल स्वयं पत्नियां मानो उनके देखो, अस्त्रों से मानो स्थिर रहती, और एक दूसरे में रक्षा होनी चाहिए। परन्तु देखो, इसी प्रकार राजा अश्वपति रात्रि समय अपने राष्ट्र में भ्रमण करते थे और यह दृष्टिपात करते की प्रजा में कोई दुखित तो नही हैं। तो इसी प्रकार वह भ्रमण करते हुए अपने में मानो शान्त रहते थे, आधुनिक काल का जो राजा हैं, आधुनिक काल की जो राष्ट्रीय परम्परा हैं, प्रणाली हैं, वह बड़ी विचित्र बन गई हैं, वह विचित्र क्यों बन गई है? क्योकि निस्वार्थ न रह करके स्वार्थवाद आ गया हैं। जब राष्ट्र

अपनी प्रजा के लिए नही विचारेगे मानव के लिए चिन्तन नही करेगा रूढ़ियों के लिए, रूढ़ियों के क्रियाकलापों को दमन कराता रहेगा, उनकी त्रुटियों को दमन कराता रहेगा तो एक समय वह त्रुटियां ऊर्ध्वा में बन करके राष्ट्र को निगल जाएगी। वह उस राजा को निगल जाती है, प्रजा तो ज्यों कि त्यों रहती हैं, परन्तु उसको निगल जाती हैं।

इसी प्रकार मैं बहुत समय से यह कहता चला आता हूँ, क्या राजा के राष्ट्र में रूढ़ि नही होनी चाहिएं, क्योंकि मानव दर्शन तो एक है, धर्म एकोकी वचन हैं, धर्म में मानो देखो, नाना रूप नही उसमें सजातीय होते, धर्म तो केवल एक ही आभा कहलाती हैं। मैंने मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने, कई काल में ये प्रगट कराया, मैंने भी अपने वाक्यों में हमने भी कहा हैं कि नेत्रों का धर्म दृष्टिपात करना हैं, सुदृष्टिपात करोगे वह धर्म वह कुदृष्टिपात करोगे वह अशोभनीय बन जाता हैं। तो इसी प्रकार मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में भी और मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को परिचय कराया, इसमें विज्ञान का दोष नही होता। इसमें दर्शन का दोषारोपण नही होता, यह तो राष्ट्र की त्रुटियां होती हैं मैंने कई काल में यह कहा कि राजा को चाहिए, जब रूढ़ि हो जाएं, तो रूढ़ियों के आचार्यों का एक सम्मेलन होना चाहिए, और रूढ़ियों को जो प्रवर्तक हैं, उनका एक सम्मेलन हो, और उनका परस्पर शास्त्रार्थ हो, और राजा ब्रह्मवेत्ता हो, राष्ट्र का पुरोहित ब्रह्मवेत्ता उनके मध्य में विद्यमान हो, और जो मानो ज्ञान और विज्ञान पर और योगी को यदि दर्शनों पर यदि मानव दर्शन पर जो स्थिर हो जाएं, मानो उसी को अपनाना चाहिए, वही राजा के राष्ट्र में एक धर्म रहना चाहिए, मानो देखो, वह मानवता से ऊँचा हो, और यदि अज्ञानता की रूढियां बनती रहती हैं, तो वह राजा के राष्ट्र को निगलती चली जाती हैं एक समय वह होता हैं तो मानो देखो, मेरा विचार केवल क्या हैं क्या मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी यागों का वर्णन कर रहे थे। मैं उच्चारण कर रहा था कि हमारे यहाँ मानो देखो, याग का जो क्रियाकलाप है, वह केवल मैंने बलि का वर्णन किया, बलि के विषयों को जाना नही समाज ने। बलि का अर्थ है मानव को पुरूषार्थ करना चाहिए, और उसकी बलवती होनी चाहिए। परन्तु अपनी रसना के आनन्द में आ करके, स्वार्थी अज्ञानी ब्राह्मणों ने मानो देखो, बलि देना प्रारम्भ किया। आज भी मानो देखो, पर्वतीय क्षेत्रों में, प्रायः कहीं-कहीं ऐसे याग होते हैं, उनका मानो देखो, वह नष्ट कर देना चाहिए। ऐसे ब्राह्मणों को नष्ट कर देना चाहिए। मानो देखो, जो रूढ़ि और जो यागों में इस प्रकार के वायुमण्डल को अशुद्ध कर दे, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने, अभी-अभी यागों के सम्बन्ध में कहा था, क्या याग तो हृदय है, मानव का और हृदय चाहता है कि मैं मोक्ष में जाऊं। तो याग यदि विचारों से, जैसे पूज्यपाद गुरुदेव मानो कुछ कोटक ऋषि इत्यादि की चर्चा कर रहे थे, मानो देखो, उनके कैसे ऊर्ध्वा में विचार, वायुमण्डल को उससे पवित्र बना रहे हैं। साकल्य घृत के द्वारा, आत्मीय साधना कर रहे हैं, वायु मण्डल को अशुद्ध को शुद्धता में मानो देखो, परिवर्तित कर रहे हैं। आधुनिक काल का विज्ञान भी मानो यह कुछ संघर्ष कर रहा हैं, आधुनिक काल का विज्ञान भी इससे लग रहा है कि हमारा वायुमण्डल कैसे पवित्र हों? क्योंकि वायुमण्डल में, वैज्ञानिकों का, यह कथन है क्या कुछ समय के पश्चात मानो वह काल आ रहा है जब वायुमण्डल दूषित हो रहा हैं, क्या वायुमण्डल में श्वास लेने में भी आपातकालीन प्राणी बन सकता हैं।

आधुनिक काल के वैज्ञानिकों का, यह मानो तत्पर यह एक विचार बन गया हैं, और वह इस विचार में लगे हुए हैं, कि क्या करना चाहिए? तो कुछ वैज्ञानिक के विचार रहे हैं कि वह वाघनं गो घृतानित व्रतं क्या गौ घृत में ये सत्ता है क्या उसे अग्नि में प्रवेश करने से उसे अग्नि में दाह करने से अग्नि के मुख में देने से वायुमण्डल पवित्र बन सकता हैं। ऐसा कुछ विचार, वैज्ञानिकों का बन रहा है, अरे, परन्तु देखो, ये कर्मकाण्ड क्रियाकलाप ऊंचे वैदिक महा ब्राह्मणों से प्राप्त करो। हे वैज्ञानिकों! आओ, हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों ने सृष्टि के प्रारम्भ में जो मानो क्रियाकलाप बनाया था वह वायुमण्डल को शोधन का आज मानो देखो, उसमें अपवाद आ गया अपवाद के आने

से मानो देखो, उसको केवल एक अपवाद ही है अशोभनीय कृतियां बन गई। याग मानो देखो, जितना मानव का अंग हैं वहाँ याग, जहाँ मानव का सर्वत्र क्रियाकलाप ही याग हैं। तो वहाँ मानो देखो, इसको अशुद्धियों में परिणत किया, यह महाभारत काल के पश्चात, बहुत-सा अज्ञान आया। परन्तु आज मैं विशेषता देने नही आया हूँ, विचार क्या, बलि का केवल अभिप्रायः यह है, कि हम मानो देखो, याग करें, जैसे वाजपेयी याग हुआ, वाजपेयी याग का अभिप्रायः यह है क्या वृष्टि होती है, उस याग से जब वृष्टि हुई और वृष्टि होते ही बैल की बलि का वर्णन आता है।

वहाँ गऊ के बछड़े की बलि का वर्णन क्या है? क्या जब वृष्टि हुई, तो पृथ्वी मानो देखो, जल मग्न, जल उसका शुष्क हुआ, तो उस समय गऊ के बछड़े को मानो देखो, पृथ्वी की चमड़ी को उधेड़ करके, उसमें ब्रीहि वाचन नमाः अन्नाद भूतानि उससे अन्न उत्पन्न करते हैं तो वह बैल की मानो उसका जो पुरूषार्थ है वह उसकी बलि का वर्णन हो गया हैं मानो उसमें संगतिकरण हो गया, इसी प्रकार जैसे अजामेध याग है, अजामेध याग होता है, किसी को हमें विजय करना हैं, चाहे हमें अपने हृदय को विजय करना हैं, चाहे हमें अपनी किसी भी इन्द्रिय पर विजय करना हैं, यदि हमें किसी भी मानो देखो, जैसे सत्य, अस्तेय किसी ब्रह्मचर्य को इस प्रकार अपने में धारण करना है तो हमें अजामेध याग होना चाहिए अजा कहते हैं, हमारे यहाँ बकरी को भी कहते हैं, और उसकी बलि का वर्णन आता है, अजा नाम इन्द्रियों का भी हैं, मानो देखो, वह अकृतां देवाः जब वह याग करता है, अजामेध राजा याग करता है तो दूसरे राष्ट्र को विजय कर लेता हैं, उसे अजय कहते हैं, मानो देखो, अजामेध याग का अभिप्रायः यह, कि हम अपने लिए अपनी इन्द्रियों को विजय करना चाहते हैं, अजय चाहते हैं, तो वह अजामेध याग करता हैं, तो उसकी बलि दी जाती है, बलि का अभिप्रायः यह है कि जो उसमें चंचलता हैं, इन्द्रियों में किसी भी प्रकार की चंचलता हो, परन्तु उस चंचलता को हम याग में आहुति दे देते हैं उसको मानो साकल्य बना करके, उसको स्वाहाः कह देते हैं।

तो वह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने तो बहुत मुझे वर्णन कराया था किसी काल में मानो जब हम अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अध्ययन करते थे तो वह अजामेध याग करते थे और अजामेध याग का अभिप्रायः यह होता था कि वह जो पशु वहाँ, पशु किसे कहते हैं इन्द्रियों को पशु कहा जाता हैं। वहाँ बकरी को कोई समन्वय नही होता, तो मानव ने स्वार्थी प्राणियों ने महाभारत काल के पश्चात अजामेध में बकरी की आहुति देना प्रारम्भ कर दिया। अभिप्रायः तो यह था कि हम अपनी इन्द्रियों का शोधन करें। परन्तु देखो, आधुनिक काल में या महाभारत काल का अभिप्रायः अब भी मानो पर्वतीय क्षेत्रों में प्रायः ऐसा होता रहता हैं, तो अब्रहे ब्रह्म वाचाः तो मैं पूज्यपाद गुरुदेव से यह उच्चारण करा रहा था परिचय दिला रहा था कि क्या आधुनिक मानो देखो, यागां भविते देवाः राजा के यहाँ जो घटनाएं होती हैं। उसके मूल में उसका आत्मबल उसके मूल में उसकी आत्मीय जो ऊर्ज्वा हैं, मानो वह इतनी बलवती नही कि उसको ब्रह्मज्ञान होना चाहिए। आत्म प्रकाश उसे देना चाहिए, तो मानो देखो, उसे निर्भयता हो जाएं, राष्ट्रीयता में अपने राष्ट्र को ऊँचा बना सके। प्रजा को महान बनाना प्रजा को ऊर्ध्वा में ले जाना हैं। तो इस प्रकार का यह विचार आज मैं अपने विचारो को अब पूज्यपाद अव्रतां देवाः इन्होंने मुझे आज्ञा दी, विचार क्या मेरे पूज्यपाद गुरुदेव प्रगट कर रहे थे। आज का मैं पुनः से जहाँ हमारी आकाशवाणी जा रही हैं। वहाँ देखो, अस्तो यज्ञमान मानो देखो, मेरे जीवनं ब्रहा उनके जीवन की प्रतिभा सदैव अखण्ड बनी रहे। जीवन का सौभाग्य प्रतिपादित रहे और उनका हृदय पवित्रतम में परिणत होता हुआ पुनः वह यज्ञमान सौभाग्यशाली होते हैं। जिनके यहाँ द्रव्य का सदुपयोग होता हैं। अग्नि के मुख में चरू प्रदान की जाती हैं। हमारे यहाँ यही तो त्याग भावना की प्रवृत्ति होती हैं। अब मैं अपने वाक्यों को विराम दे रहा हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः- मेरे प्यारे ऋषिवर! अभी-अभी मेरे प्यारे महानन्द जी ने कुछ शब्दों को उच्चारण किया

इनके शब्द प्राची संगतिकरण में कहलाए गएं हैं मानो देखो, इनके हृदय मे एक दाह है त्रुटियां नही रहनी चाहिए इनके हृदय में एक दाह है कि राजा के राष्ट्र मे रूढ़ि नही रहनी चाहिए रूढ़ि ही राष्ट्र का विनाश हैं, रूढ़ि ही समाज में रक्त की क्रान्ति हैं, तो इसीलिए आज का विचार क्या क्या हम परमपिता परमात्मा की महिमा और हे यज्ञमान! तुम्हारे जीवन की प्रतिभा महान बने, यह आज का वाक् अब समाप्त होने जा रहा हैं। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह, कि हमारे यहाँ याग जो कर्म हैं, यह सृष्टि के प्रारम्भ से, जैसे परमपिता परमात्मा सृष्टि का प्रादुर्भाव करते हैं, इसी प्रकार ज्ञान वेदों में हैं, ऋषि-मुनि वेदों में से आख्यिका मानो धारण कराते रहते हैं वह क्रियात्मक कर्म होता रहता है, वह याग कहलाता हैं। यह आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन अच्छा भगवन्! आनन्द मंगलम।

२ प्रजापति के आयाम १३-०४-१९८५

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस पवित्र वेदवाणी का प्रसारण किया जाता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना, जो संसार का नियंता है, अथवा इसका निर्माण करने वाला है, उसकी महिमा का प्रायः वर्णन आता रहता है, और उसी परब्रह्म परमात्मा का उद्गीत, प्रायः गाते रहते हैं, क्योंकि प्रत्येक मानव का गान तो गा ही रहा है, मानव ही गान नहीं गा रहा है, प्रत्येक धारा गान गा रही है, अथवा उद्गीत गाया जा रहा है। तो विचार क्या? हमें भी परमपिता परमात्मा के प्रायः उद्गीत हमें गाने चाहिए, क्योंकि प्रत्येक मानव का अन्तर्हृदय मानो उसका जो समन्वय है, वे परमपिता परमात्मा से प्रायः रमण करता रहता है, उसी में आभायित होता रहता है।

विदेहवाद

परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र हमें कुछ कह रहा है, हमें कुछ प्रेरणा दे रहा है। हम उसी प्रेरणा से प्रेरित हो करके, अपने प्रभु की महती का वर्णन करते रहते हैं। मानो वह उद्गीत गाने वाला है, उद्गीत गा रहा हैं, मानव के अन्तःकरण की जब अनुपम धाराएं इस वायुमण्डल में प्रवेश करती है, तो वायुमण्डल में पवित्रवाद छा जाता हैं। आज, बेटा! मैं तुम्हें विशेष चर्चाओं में तो नहीं ले जाऊंगा। आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है? प्रत्येक मानव अपने में विदेह रहना चाहता है, और वह यह, अपने में धारणा बना रहा है कि हम करते हुए भी अकर्त्ता की आभा में रत्त रहते हैं। परन्तु हम यह कहा करते हैं कि जब तक मानव इस पंच महा भौतिक पिण्ड में, मानव का अन्तरात्मा, बेटा! गम्भीर चिन्तन कर रहा है। एक समय आता है कि चिन्तन भी समाप्त हो जाता है, एक समय आता है जबकि वह अपनी द्वितीय दिशा को अपना लेता है, मानो देखो, वह राजा बनता है, और राजा बन करके, नाना प्रकार की आभाओं में रत्त रह करके, पुरोहित उसे प्रेरणा देता है, वेद का मन्त्र उसे प्रेरणा देता है और वह प्रेरित हो करके, बेटा! ब्रह्मवेत्ताओं के समाज को एकत्रित करता रहता है।

विदेहराज जनक

हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की उपाधियों का वर्णन आता रहता है। बहुत पुरातन काल तक, बेटा! एक उपाधि चली आयी, जिस उपाधि का नामोकरण जनक कहा जाता है। मानो वह जनक उपाधि, उसमें विदेह मानो करता हुआ अकर्त्ता की प्रवृत्ति को बनाना है, अथवा उस साधना को करना है, जो मानो देखो, राष्ट्र को भोगा जा रहा है, और राष्ट्र की प्रजा प्रसन्न है, परन्तु एक राजा अपने में उदासीन होना चाहता है, तो मानो उदासीन हो करके, वह अपने में अकर्त्ता को दृष्टिपात कराता है। परन्तु जब गम्भीर चिन्तन हुआ तो राजा जनक यह एक उपधि मानी जाती है, जो जनकोऽब्रहो सम्भवा जो ऋषि-मुनियों को एकत्रित करके कहीं वह मानो देखो, ब्रह्म-याग में गमन करने लगते हैं, कहीं मानो देखो, और भी भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों की प्रतिभा में रत्त हो गएं हैं। परन्तु देखो, वह तो राजा जनक की उपाधि है, राजा जनक की जो अनुपम उपाधि है, जिस उपाधि को पान करके मानो मानव जनक बनता है। और, वह जनक कैसे बनता है? जब तक ऋषि-मुनि, ब्रह्मवेत्ता आ करके, बेटा! उसे जनक की उपाधि नहीं प्रदान कर देते। एक स्वर आता है, प्रातःकालीन एक ध्वनि हुई और उस ध्वनि में ध्वनित हो करके, मेरे प्यारे! ध्वनि में ध्वनित हो करके अपने में अनुभव करने लगे कि हमें भी जनक बनना है, राजा जनक की आभा में रत्त होने लगे।

परन्तु राजा जनक को विदेह कहा जाता है। विदेह का अभिप्रायः यह है कि वह राष्ट्र में विद्यमान है, परन्तु

प्रीति है, मोह नहीं। कर्त्तव्य का पालन है, स्वार्थवाद नहीं है। मानो देखो, जब वह राजा, अपने में राजा बन जाता है, तो बेटा! देखो, अपने में विदेह कहलाता है। विदेह का अभिप्रायः यह है कि जिसके हृदय में मनोनीत शान्ति हो, जिसमें आसक्ति न हो, परन्तु जो आसक्तियों से रहित हो, और उस परमपिता परमात्मा का धीमा गान भी गाने वाला हो। मानो देखो, वह जनक कहा जाता है, वह विदेहराज जनक कहा जाता है।

बेटा! यह उपाधि सतोयुग के काल तक चली। परन्तु देखो, जब वह उपाधियाँ चली, तो उपाधि का अभिप्रायः रहा कि वह अपने में तपस्वी बन करके अपने जीवन की सुरक्षा करें। परन्तु राजा जनक का यही कथन है कि गृह-गृह में उसके यहाँ ब्रह्मवेत्ता विद्यमान होते थे और समय-समय पर ब्रह्मवेत्ताओं के समाज को एकत्रित किया करते थे और वह ब्रह्मवेत्ता के द्वारा कुछ उपदेश-पान करते थे। वह मानो देखो, अपनी धारा को धारा में रत्त कराना, वह प्रियतम माना गया है। परन्तु राजा जनक का यह कथन था कि उसके यहाँ नाना प्रकार के याग होते रहते थे। प्रातःकालीन मानो देखो, उनकी यज्ञशाला में, ब्रह्मवेत्ता विद्यमान होते, और उद्गीत गाते रहते, परन्तु वह अपनी आभा में रत्त रहते। परन्तु जब मैं यह विचारता हूँ कि राजा जनक के यहॉं, प्रातःकालीन ब्रह्म का चिन्तन होता रहता था, नाना ऋषिवर आते थे। उनकी पत्नी जो रम्भेश्वरी थी, वह अपने में मानो उससे ममता नहीं थी, कर्त्तव्यवाद रहता था। और ममता में, मानो देखो, नाना प्रकार का दूरीकरण होता है। ममता में दूरीकरण है कर्त्तव्यवादी जो प्राणी होता है, वह अपने कर्त्तव्य को ही तो ले करके अमूल्य, एक महान् से महान् रचना को रचता है।

राजा जनक का ब्रह्म-चिन्तन

परन्तु राजा जनक के यहाँ, बेटा! भिन्न-भिन्न प्रकार के याग होते रहते थे। सबसे प्रथम जो याग था, उनके यहाँ वह देव-पूजा अथवा देवपूजा से भी पूर्व जो ब्रह्म का चिन्तन है, वह होता था। बेटा! उनकी पत्नी रम्भेश्वरी और राजा जनक, एक समय रात्रि का मध्यकाल था, दोनों जागरूक हो गये। परन्तु जब जागरूक हो गये, तो राजा जनक ने कहा- हे रम्भेश्वरी! तुम परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में क्या जानती हो? उनकी पत्नी ने कहा- प्रभु! मैं क्या जानती हूँ ब्रह्म के सम्बन्ध में यह तो एक ऐसा शब्द है, जिस शब्द में एक महानता का, प्रतिपादन मुझे दृष्टिपात नहीं आ रहा है राजन्! उन्होंने कहा ऐसा क्यों? सु सम्भवा लोकं वाचन्नमं ब्रह्मे वाचो सम्भवे लोकां भूः मेरे प्यारे! जब आख्यिका स्मरण आने लगी, तो ब्रह्म के चिन्तन में उन्होंने कहा कि - ब्रह्म सर्वत्र है। ब्रह्म मानो देखो, एक ब्रह्म के रूप में रहता है और वह प्रत्येक प्राणी को मानो प्राणी मात्र को वह अपनी भिन्न-भिन्न प्रकार की कामना प्रगट करता रहता है। मानो देखो, राजा जनक ब्रहे, उनकी पत्नी ने कहा- मानो ब्रह्म सर्वत्र है। उसी का मानो वह रचा हुआ, एक ब्रह्म-सूत्रीय, यह मानो ब्रह्माण्ड कहा जाता है, इसको ब्रह्म-सूत्र कहते हैं।

प्रातःकालीन प्रभु की याचना

राजा जनक, एक समय प्रार्थना करने लगे। प्रातःकालीन माता रम्भेश्वरी भी चिन्तन करने लगी, और यह प्रभु से कह रही थी, अपने प्रभु से, हे प्रभु! तुम तो महान् हो। हे प्रभु! तुम महान् पंच महाभूतों में जो प्रेरणा देना वाले, तुम प्रेरक हो। मानो देखो, उसी की प्रतिभा, इस संसार में, दृष्टिपात आ रही है। तो मेरे पुत्रो! देखो, राजा जनक और उनकी पत्नी चिन्तन करने लगे। चिन्तन करते, परन्तु ब्रह्म को अपने में दृष्टिपात किया और अपने को ब्रह्म में पिरोने के पश्चात् प्रातःकालीन उनके यहाँ, मानो देखो, यज्ञशाला है उस यज्ञशाला में याग अग्नि का चयन कराया गया।

राजा जनक का याग-चिन्तन

दोनों विधाताओं ने अग्नि का चयन किया। परन्तु देखो, अग्नि प्रचण्ड हो गई। अग्नि में जब साकल्य दिया,

आहुति देने लगे, जब मानो वह याग की प्रतिक्रियाओं में रत्त होने लगे, आपो का जब सिंचन करने लगे, तो मुनिवरों! देखो, ऋषि-मुनियों ने कहा- राजन! यह क्या कर रहे हो? उन्होंने कहा, मैं उस क्रियाकलाप को कर रहा हूँ, जो पूर्व था मानो परम्परागतों से ऋषि-मुनि जिस क्रियाकलाप में रत्त रहे हैं, उसी को, मैं उसी क्रियाकलाप में जा रहा हूँ। उन्होंने कहा, यह क्या क्रिया है? उन्होंने कहा कि- मैं एक मानो देखो, जल का जल की धारा को मैं पूर्व दिशा में देना चाहता हूँ, और पूर्व दिशा में जब मानो वह जल की धारा है, तो वह कहता है हे प्रभु! आप तो वरुण है वेद का ऋषि कहता है आप तो वरुण है भगवन! आप वरुण बन करके हमारी रक्षा करें, आप तो भगवन! देखो, महान् से महान् हो। मेरे पुत्रो! देखो, जब इस प्रकार की याचनाएं, याग में अग्नि के प्रचण्ड होने के समय उद्धृत हो रही हैं, तो बेटा! मानो एक स्वर्ग का वायुमण्डल बन रहा है।

मेरे प्यारे! देखो, याग प्रारम्भ किया। अग्नि प्रदीप्त होने लगी तो मुनिवरों! देखो, राजा जनक ने ऋषियों से कहा- हे प्रभु! मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह जो आप ने वरुण-माला के सम्बन्ध में मानो जो हमने याग किया, यागां भविते थे याग हम क्यों करें? परन्तु आचार्य ने कहा, नहीं, वत्स! याग तो करना हमारा कर्त्तव्य है, याग हमारा मौलिक सिद्धान्त है और यह मौलिक रूपों में रत्त हो रहा है। मुनिवरों! देखो, राजा जनक इत्यादियों ने यह वाक् स्वीकार कर लिया और उसमें रत्त रह करके राजा जनक जब पश्चिम विभाग में जल की धारा को परिणित करने लगे, तो बोले कि, प्रभु! आप तो वरुण बन करके रहते हो, भगवन्! आप तो वरुण हो, मानो देखो, जब वह पूर्व दिशा में परिणित हुए तो वह दक्षिणाय सरस्वती बन करके तू हमारा कल्याण कर। सरस्वतीं भविते ब्रह्मः वाचन्नमं ब्रह्मा परमाणु वस्वस्तो ब्रह्वे , वेद का आचार्य कहता है, कि यह जो अन्नाद भूत प्रह्वा , यह अन्नादं एक भूत बन करके हमारे जीवन की एक धारा बन करके रहता है।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है, जब राजा जनक मानो देखो, वह अपने में यागां भविते देवाम् वे याग में परिणत हो गये। वह नाना पन्था मानो परम्परागतों के पन्थ को अपनाना, उसे अपने में धारण करना ही मानो देखो, उसका सुसज्जित कर्त्तव्य कहलाता है। तो राजा जनक के यहाँ, मानो याग हो रहे हैं। मानो देखो, माता याग कर रही है, वह याग करती हुई कहता है- हे वत्स! मैं याग कर रही हूँ। हे वत्स! तुम भी याग में परिणत हो जाओ। परन्तु माता के शब्दों की प्रतिभा, एक महान् तो बन करके रहती है, परन्तु वह एक मानव दुःखद का कारण बन गया, मेरे प्यारे! देखो, तुम्हें मैं यह विवेचना करा रहा हूँ कि राजा जनक एक उपाधि है, राजा जनक के यहाँ उपाधि क्यों प्राप्त होती है? जब अग्नि प्रचण्ड हो जाती है, अग्नि की धारा, जहाँ द्यौ-लोक में, जहाँ उन्होंने प्रवेश किया तो मानो देखो, पवित्र सा एक ब्रह्माण्ड, पवित्र सा एक जगत् पवित्रता सी धाराएं, हमारे समीप आ जाती हैं।

मेरे प्यारे! देखो, देखो, राजा जनक अपने में याग करके, जब ऋषि-मुनियों ने यह प्रश्न किया, तो उन्होंने कहा कि- याग करना तो मानव का जन्मसिद्ध अधिकार होता है। सृष्टि के प्रारम्भ में जब मानो यह संसार, अपने स्वरूप में था, तो उस काल में ब्रह्मा के पुत्र एक अथर्वा हुए, परन्तु वह जो ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा थे, वह याग करते रहते थे। नाना प्रकार कि उपाधियों के सम्बन्ध में चर्चा करते रहते थे परन्तु देखो, जब यह विचार आता है, विश्वभो देवो ब्रह्म वायु रथ ब्रह्मः अकाय स्वस्ते।

जल-धारा-करण विज्ञान

मेरे प्यारे! देखो, अग्नि की धाराओं में जब जल की धाराएं राजा ने प्रारम्भ कीं, तो देखो, धाराएं क्या, मुनिवरों! देखो, वह पूर्व दिशा में अग्नि बन करके रहती है, मानो दक्षिणाय में वह इन्द्र बन करके रहते हैं, वह मानो देखो, वरुण बन करके रहते हैं, वह सोम बन करके रहते हैं कि सोम को ऋषि-मुनि पान करते हैं, वह सोम बन करके रहते हैं। सौम्यम्भवा सम्भवेलोकाम , हे सोम! तू सोम है, तू हमें अमृत बनाने वाला है। तो मेरे प्यारे!

देखो, वह पश्चिमामभा देवस्या उत्तरायणा वह सोम बन करके रहते हैं। परन्तु ध्रुवा में आप ही मानो देखो, विष्णु बन करके हमे हमारा पालन कर रहे हैं। ऊर्ध्वा में बृहस्पति बन करके मानो देखो, धारा विद्या की धारा प्रदान कर रहे हैं। तो जब राजा जनक ने यह कहा कि - जब मैं याग में परिणात हुआ, तो मुझे कोई स्थली ऐसी दृष्टिपात नहीं हुई, जहाँ मैं ब्रह्म को यह उच्चारणा करूं कि ब्रह्म हम से ओझल है। मानो देखो, इस प्रकार जो क्रियाकलाप राजा के यहाँ होता है, तो वह विदेह है। विदेह इसलिए कि मोह नहीं होता, ममता नहीं होती है, परन्तु देखो, राजा का नाम जनक उपाधि प्रदान किया गया है। बाल्य-काल का नामोकरणा कुछ है और जब उपाधि को प्राप्त करते हैं तो और कुछ बन जाते हैं।

उपाधिवाद की उपादेयता

मुनिवरों! देखो, तुम्हें इस क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जिस क्षेत्र में नाना प्रकार की उपाधियों का निर्माणा हो रहा हैं, नाना प्रकृ की उपाधियां जन्म लेती हैं संसार में तो मानो देखो, संसार-राष्ट्र का एकोकीकरणा होता है, राष्ट्र मानो ऊँचा बनता है। यह विदेह राज जनक मानो देखो, महापुरूषों की पवित्र सेवा करना, मानो उनके चरणों की वन्दना करते रहना है उस परब्रह्म परमात्मा की प्रतिभा का जन्म हो जाता है। एक महान् राजा मानं ब्रह्मे वाचां भविते लोकाम् मेरे प्यारे! देखो, जब वह प्रभु सर्वत्र हे तो कहाँ जाएं पाप-कर्म करने के लिए।

माता अपने बालक का पालन कर रही है और माता जब पालन करती है तो यह विचारती है कि मेरा बालक, मेरा बाल्य देखो, महान् बनेगा। माता उसे मानो यह उपदेश देती है कि यह बालक महान् बनेगा, पवित्र बनेगा परन्तु देखो, यह राष्ट्र का, राष्ट्रवेत्ता बनेगा, तो माता केवल कर्त्तव्य का पालन कर रही है, ममता-मोह में जाना उसका अधिकार नहीं है, केवल पालना का उसका अधिकार है। वह पालना करके मानो राष्ट्र को प्रदान कर देती है। तो मानो वह कर्तव्य का पालन हो रहा है, वह निष्पक्ष कर्त्तव्यवाद है।

मेरे प्यारे! देखो, राजा जनक से एक समय महात्मा अर्द्धभाग ने कहा कि- महाराज! आप को विदेह क्यों कहते है? राजा जनक कहता है कि मैं नहीं जानता, मुझे विदेह क्यों कहते है। मेरे प्यारे! एक समय शोभनी ऋषि आए। उन्होंने भी वह प्रश्न किया कि, आपका मानो देखो, विदेह क्यों कहते है? तो मुनिवरों! देखो, राजा जनक के अश्वल पुरोहित ने भी यह उत्तर दिया कि- इनको राष्ट्रं ब्रह मानो इनको विदेह राज इसलिए कहते हैं, क्योंकि यह विदेह है, इन्हें मोह नहीं है, कर्त्तव्यवाद है। मानो राष्ट्र से मोह नहीं है, यह राष्ट्र सब त्याग सकते हैं, परन्तु राष्ट्र का कर्तव्य क्रियाकलाप में लाना ही मानो, राष्ट्रवाद की प्रतिभा कहलाती है।

प्रजापति विमर्श

जब मैं यह विचारता हूँ कि हमारे यहाँ प्रजापति की विवेचना आती हैं, मैं उन्हीं क्षेत्रों में जाने वाला हूँ, जहाँ मुनिवरों! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि के आश्रम में, महाराजा सोमकेतु ने यह कहा था कि इन्द्रो भवितां मोक्षणां भविते उक्ता आचार्य कहता है कि महाराज! यह जो इन्द्र है, इसकी प्रतिष्ठा ये कहाँ है? यह अपने में खिलवाड़ कर रहा है। तो मेरे पुत्रो! उन्होंने जब यह प्रश्न किया, ऋषि ने, तो राजा जनक ने, मानो देखो, राजा जनक की उपाधि प्रदान करते हुए, जनक आदि का उद्दतां देते हुए, उन्होंने कहा,- प्रजापति वासं भो वर्णा , क्योंकि राजा के तीन प्रकार के स्वरूप हैं, परन्तु विज्ञान का दुरूपयोग राजा के राष्ट्र में यदि हो गया, वह प्रजा के वैभव को यदि अपने में धारणा करेगा, प्रजा राष्ट्र के वैभव को धारणा करेगी तो रक्त-भरी क्रांतियाँ आ जाएगी। मेरे प्यारे! देखो, वह राजा प्रजापति है, जो अपने राष्ट्र में क्रियाकलाप बना रहा है कि मेने राष्ट्र में नियमन होना चाहिए और नियमबद्ध मेरा राष्ट्रीय क्रियाकलाप बनता रहे।

परमात्मा का प्रजापति रूप

मेरे पुत्रो! जब इस प्रकार की धाराएँ, उन्होंने वर्णन कीं। उन्होंने कहा - प्रजापति नाम परमपिता परमात्मा का है, जो सबका स्वामित्व है। कोई स्थली ऐसी नहीं, जहाँ परमपिता परमात्मा न हो स्वामी मानो देखो, माता के गर्भस्थल में जब बालक का निर्माण होता है, पुत्र का निर्माण होता है, तो मानो वह प्रजापति, वे परमपिता परमात्मा प्रजापति बन करके ही मानो उसका निर्माण करता है। वह प्रजापति है, नाना प्रकार की नस-नाड़ियों का निर्माण, मेरे प्यारे! देखो, उसके प्रत्येक अंग का निर्माण कर देता हैं। प्रभु तो इतना वैज्ञानिक है, इतना महान् प्रजापति है। बेटा! वह प्रजापति नहीं, वह विश्वकर्मा कहा गया है।

प्रकृति का रस-मन

तो मेरे पुत्रों! देखो, उस परमपिता परमात्मा को हम एक धारामयी, देखो, विष्णु के रूप में वर्णन करते हैं। परन्तु वह प्रजापति विद्यमान हो करके, कहीं मानव के मनस्त्व का निर्माण कर देते हैं, जो प्रकृति का रस माना गया है। एक समय,बेटा! - कि यह मन क्या है? उन्होंने कहा द्द यह मन प्रकृति का अन्तिम सूत्र है, अन्तिम चरण है। मानो यह प्रकृति का रस है, जिस रस के द्वारा मानो प्रजापति अपने में प्राजावत आभरण में रत्त होने लगता है। तो मानो यह प्रजापति कहलाता है। सम्भवा ब्रह्मवाचो देवं लोकाः वायु सम्भवा दिव्यं गतं प्रमाणां लोकां वसु त्नुद्रो गमं प्रमाणस्ति विद्यं भवा , वेद का आचार्य कहता है, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज- महाराज कहते हैं कि वह जो प्रजापति है, मानो वे परमपिता परमात्मा, वह मेरा स्वामितव है। जब माता के गर्भ में हम थे, तो कौन निर्माण कर रहा था? मानो देखो, मन ही, प्रकृति के रस को निर्धारित कर दिया।

चार प्रकार की बुद्धियों के क्षेत्र

जब वह प्रकृति का रस बहने लगा, इस मानव के शरीर में, तो बेटा! उसी से चारों प्रकार की धाराओं का जन्म हो गया। एक धारा का नाम बुद्धि है, एक का नाम मेधा है, एक ऋतम्भरा और एक प्रज्ञावी कहलाती है। यह मन की मानो चार प्रकार की उग्र गतियाँ कही जाती हैं। मेरे प्रभु ने वह मस्तिष्क और हृदयस्थल, दो उनके स्थानों की चुनौती प्रदान की है। मेरे प्यारे! जैसे मन की धाराओं का जन्म हुआ, तो बुद्धि पुनः उपलब्ध हो जाती है। मानो जब बुद्धि अपने में दृष्टिपात करके मौन होने लगती है, तो वह प्रज्ञा का जन्म हो जाता है। मेरे प्यारे! प्रज्ञा में मेधा का जन्म हो जाता है। वह मेधावी बन करके संसार के मानो लोक-लोकान्तरों में क्रियाकलाप करने लगता है। वह लोकों की धाराओं में रत्त हो जाता है। मानव जब उससे मौन हो जाता है, ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करके, बेटा! कहॉ तक जाता है, मानव का यह प्रज्ञावी यह मानो देखो, मेधा कहाँ तक जाती है? मेधा, मुनिवरों! देखो, पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर जाती है। वह मेधा है, जो मानो परमाणु में रमण कर जाती है। इसी प्रकार यह कहाँ तक, सूर्य मण्डल में चली जाती है। यही प्रज्ञा है, यही मेधा है, मानो जो सूर्य से चन्द्रमा में गति करने लगती है। और, वही मेधा है, जो मानो देखो, एक आकाश-गंगा में प्रवेश कर जाती है, आकाश-गंगा के लोक-लोकान्तरों को गणना में लाने लगती है।

मेरे प्यारे! जब मुझे महर्षि वशिष्ठ मुनि और महर्षि सोमकेतु ऋषि का जीवन स्मरण आता है, तो बेटा! वे दोनों चिन्तन करते थे। एक समय, बेटा! एक ही चिन्तन करते रहे, बारह वर्ष हो गएं थे, बेटा! एक आकाश-गंगा पर चिन्तन करते-करते, उस आकाश-गंगा में सूर्यों को जानने के लिए। मुनिवरों! उन्होंने अगणित सूर्यों की गणना कर ली थी। यह आकाश-गंगा को कौन धारण करता है? बेटा! योगेश्वर उस आकाश-गंगा को धारण कर लेता है, जहाँ आकाश-गंगा की माला बन करके, बेटा! अपने में धारण करने लगता है। वह माला बना करके जब माला में सूत्रित हो जाता है। आगे वह मानो देखो, उसी आकाश-गंगा को, एक आकाश-गंगा नहीं, दो आकाश-गंगा नहीं, बेटा! देखो, एक अरब छयानवें आकाश-गंगाओं को एक निहारिका के रूप में, बेटा! योगेश्वर दृष्टिपात करता है।

वह प्रज्ञा वाला है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने इस ब्रह्माण्ड की चर्चा पुरातन काल में भी की। मेरे प्यारे! देखो, एक अरब पचानवे करोड़ नवासी लाख बावन, निहारिकाओं में मानो देखो, एक अवन्तिका, मुनिवरों! देखो, उसे एक अवन्तिका दृष्टिपात होने लगी। यह अवन्तिका बन जाती है, बेटा! मेरे प्यारे! अवन्तिका-निहारिका, आकाश-गंगा से सौर-मण्डल और सौर-मण्डलों में, बेटा! यह सूर्य इत्यादि समाहित हो जाते हैं।?

मेरे प्यारे! जब मैं इस विचार पर जाने लगता हूँ, बारह वर्षो के अनुष्ठान में, उन्होंने यह ज्ञान पाया कि यह तो बड़ा विचित्र एक ब्रह्माण्ड है। देखो, प्रभु ने जगत् को, इस हमारे मानव-शरीर को रचा था माता के गर्भ में, जब मानो वह निर्माण कर रहा था, वह प्रभु विश्वकर्मा बन करके माता के गर्भ में हमारे शरीरों का निर्माण कर रहा था, तो मानो देखो, बुद्धि और मेधा, मानो देखो, बुद्धि से मेधा का अभिप्रायः मानो देखो, मेधा में, बेटा! यह सर्वत्र समाहित हो रही है। मेधा ऋतम्भरा, और प्रज्ञावी बन करके, बेटा! जब इससे भी उपराम हो गया, लोक-लोकान्तरों से उपराम हो गया, तो मौन हो करके, बेटा! देखो, उसी मेधा-प्रज्ञा में प्रवेश कर गया। जब वह प्रज्ञा में प्रवेश कर गया तो प्रज्ञा उसेकहते हैं, जहाँ इस संसार को दृष्टिपात करने के पश्चात् बेटा! वह साधक योगेश्वर मौन हो जाता है। जब वह मौन हो गया, मौन होने के पश्चात्, मेरे पुत्रो! देखो, बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा में, बेटा! देखो, वह ऋतम्भरा से प्रज्ञा में प्रवेश कर गया। प्रज्ञा, बेटा! उसे कहते है, जहाँ केवल सुषुम्णा ब्रह्मरंध्र में, बेटा! इंगला, पिंगला, सुषुम्णा नाड़ियों का मिलान करके ब्रह्मरंध्र की एक गतियाँ होने लगती हैं। मानो बारह प्रकार के लघु मस्तिष्कों को जाना जाता है।

सृष्टिकर्त्ता प्रजापति

बेटा! देखो, उसके पश्चात् वह इनका सबका एकोकीकरण करता है। उस समय, मुनिवरों! देखो, वह चित्त के मण्डल को अपने में निहित करके, उसी में समाहित हो जाते हैं। परमपिता परमात्मा की धारा उनके समीप आ जाती है। तो परिणाम क्या? मेरे पुत्रो! मैं दूरी न चला जाऊं, विचार यह देना चाहता हूँ, विचार मैं यह दे रहा हूँ, कि मुनिवरों! देखो, ऋषि-मुनि अपने में कितने तत्पर रहते हैं। प्रजापति कौन है? जो प्रजापति बन करके, बेटा! निर्माण कर रहा है। मैं माता से जब यह प्रश्न करता हूँ हे मातेश्वरी! यह तेरा पुत्र है? तो माता कहती है पुत्र मेरा है। परन्तु जब यह प्रश्न करता हूँ कि ह माता! पुत्र का निर्माण कैसे हुआ है? तो माता निरूत्तर हो जाती है। कहती है, मैं निर्माण को नहीं जानती जब मानो देखो, मैं यह कहता हूँ, हे माता! जब तेरा पुत्र है, तो तू निर्माण को क्यों नही जानती? मानो देखो, माता का पुत्र क्या है? माता का वह एक संकल्प ही बन गया है। एक संकल्प मात्र केवल कर्त्तव्यवाद के लिए, वह पुत्र बन गया है। परन्तु निर्माण करने वाला कौन है? एक शिशु है। वह शिशु कदापि भी मानो देखो, उसका आधार नहीं रहता। वह सदैव रहने वाला है। मानो वह शिशु है, वह माता के गर्भ में वह परमाणुवाद है। वह अणुवाद है, वह वृत्तवाद है, परन्तु देखो, निर्माण करने वाला कौन? प्रजापति है।

हृदय के दो प्रकार

मेरे प्यारे! देखो, ये चार प्रकार की बुद्धि और उसी में मानो हृदय भी, दो प्रकार के हृदयों की कल्पना की है, ऋषि-मुनियों ने, बेटा! एक कल्पना, हृदय में है, एक कल्पना लघु-मस्तिष्क में रहती है। एक मानो देखो, अप्रतिम् एक हृदय लघु-मस्तिष्क में, एक हृदय मानो अनुष्ठानं ब्रह्मे वाचो मानो देखो, अनुष्ठान की स्थलियों में देखो, हृदय रहता है। जब हृदय की कल्पना करते हैं, तो ऋषि-मुनियों ने, बेटा! बड़ी विचित्र उड़ाने उड़ी हैं, योग-साधना में प्रवेश हो करके बड़ी विचित्र उड़ाने उड़ी हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, वह उड़ान क्या है? ऋषि-मुनियों की? व, मुनिवरों! देखो, हृदय दो प्रकार के हैं। मानो एक कण्ठ के ऊर्ध्वा भाग में, एक मानो देखो, हृदय-स्थली में रहता है। मानो देखो, बुद्धि चार प्रकार की हैं। अवस्था, मेरे प्यारे प्रभु ने चार प्रकार की निर्धारित कीं। मानो देखो, सबसे

प्रथम जागरूक, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीया है। इसका मानो नियमन कौन कर रहा है? पुत्रो! यह कौन नियमन करने वाला है? वही, एक प्रजापति है।

प्रजाओं का स्वामी-प्रजापति

वह प्रजाओ का स्वामी है, मानो प्रत्येक प्रजा में, यह नियमन हो रहा है, एक धारा बन रही है। तो मेरे पुत्रो! देखो, हम प्रभु के आधार, अगाध, उस महा-तरंग में प्रवेश कर जाएं, जहाँ वह अगाधता उत्पन्न होती है। हमें उसकी रचना के ऊपर विचार-विनिमय करना है। माता को ज्ञान नहीं, पितर को ज्ञान नहीं है। राजा से कहा, हे राजा! तू प्रजापति है, तू प्रजा का स्वामित्व है? उन्होंने कहा - मैं प्रजापति नहीं हूँ, परमपिता परमात्मा प्रजापति है। वह भी यही कह देते हैं, मैं तो केवल एक नियम में चलाने के लिए, चरित्र की धारा को जन्म देने के लिए मैं प्रजा का निधित्त्व करने वाला हूँ?

मेरे पुत्रो! देखो, वह प्रभु महान् है। माता के गर्भ में निर्माण करने वाला है। माता के गर्भ में, बेटा! स्वर्ण है, माता के गर्भ में, बेटा! नाना प्रकार का धातु-पिपाद गति कर रहा है, परन्तु देखो, वे देवता अपनी-अपनी आभा को ले करके गतियाँ कर रहे हैं। वह बहत्तर करोड़, बहत्तर लाख दस हजार दो सौ दो, नाड़ियों का निर्माण करने वाले हैं। प्रत्येक नाड़ी का सम्बन्ध, बेटा! देखो, बुद्धि-पिपाद से लगा हुआ है। यह कैसा विचित्र, बेटा! यह प्रभु का जगत् है! यह प्रभु का कैसा नवीन् एक ब्रह्माण्ड है, जिसके ऊपर मानव ऊँची कल्पना करता रहता है।

तो महात्मा वशिष्ठ ने कहा, हे सोमकेतु! यह प्रजापति है, जो प्रजा का स्वामी है। वह परमपिता परमात्मा प्रजा का स्वामी है। जैसे पृथ्वी मण्डल है, वे नाना पृथ्वियाँ, मानो तीस लाख पृथ्वियाँ तो हमारी गणना में आ गई हैं, इन पृथ्वियां पर प्राणी मात्र रहता है। मानो देखो, चन्द्र-लोकों पर और भी नाना प्रकार के लोक-लोकान्तर हैं, जहाँ पर प्राणी वास करता है, मानव वास कर रहा है। यह अनुपम एक जगत् चल रहा है। तो प्रभु! का अनुपम एक जगत् है, बेटा! इसके ऊपर हम विचारते रहते हैं। मानो हमारा अन्तर्हृदय भी आश्चर्य में परिणत हो जाता है और विचारते हैं कि वास्तव में यह प्रभु का कैसा अनूठा जगत् है, जिसके ऊपर, बेटा! परम्परागतों से मानव अनुसन्धान अथवा अन्वेषण करता रहा है, विचारता रहा है और चिन्तन में लाता रहा है, प्रजापति के ऊपर।

प्रजापति राजा

मेरे प्यारे! वे परमपिता परमात्मा प्रजापति है, राजा प्रजापति है, राजा विदेह है, राजा जनक है, परन्तु देखो, वह जो अधिराज है, वह महाधिराज वह महादिव्य कहलाता है, बेटा! राजा को जब हम जनक कहते हैं तो जनक और विदेह, मेरे पुत्रो! देखो, जनक और विदेह क्यों कहते हैं? क्योंकि वह निर्मोही होते हैं, उन्हें मोह नही होता, ब्रह्मज्ञान में रत्त रहते हैं, राष्ट्र को मानो देखो, ब्रह्मज्ञानी बना देते हैं। इसी प्रकार जो प्रजापति राजा है, वह राजा प्रजापति है, जो अपने राष्ट्र में ज्ञान को, विज्ञान को लाते हैं, परन्तु विज्ञान का दुरूपयोग नहीं होने देते।

मानो देखो, इस प्रजापति में यह ब्रह्माण्ड समाहित हो रहा है। अरे, कौन प्रजापति है? वे परमपिता परमात्मा, जो ब्रह्माण्ड का नेतृत्त्व करने वाला है। जो इसको निर्माणित कर रहा है। बेटा! मुझे तो ऐसा स्मरण है, वशिष्ठ मुनि महाराज और सोमकेतु ने बारह वर्ष के अनुष्ठान में एक निर्णय ओर दिया है कि मानो देखो, कोई-कोई लोक तो ऐसा है, जिस लोक के लिए देखो, बहत्तर-बहत्तर सूर्य प्रकाशित करते हैं। परन्तु देखो, कुछ ऐसे लोक हैं, जो मानो देखो, कुछ ऐसे मण्डल हैं कि मण्डलों में मानो देखो, तीस हजार पृथ्वियाँ उसमें समाहित हो करके और मानो देखो, उसमें बीस हजार सूर्य समाहित हो करके, मानो देखो, उनको पुनः प्रकाशित किया जाता है। बहुत से मण्डल ऐसे हैं, मानो जिनको जानते-जानते, मुनिवरों! देखो, उनका प्रकाश भी पृथ्वी मण्डल तक नहीं आ पाता और सृष्टि का काल समाप्त हो जाता है। तो बेटा! यह कैसा अनुपम प्रजापति का ब्रह्माण्ड है।

बहत्तर लोकों की यात्रा

मानो देखो, मंगल ब्रीहि वाच प्र्हे लोकाम!, बेटा! एक समय, मुझे महर्षि भारद्वाज मुनि ने एक वाक्य बड़ा आश्चर्य का प्रकट किया था। उनका यान मानो जब उनके आश्रम में गति करने लगा तो मानो देखो, वह गति करता हुआ पृथ्वी से उड़ान उड़ करके जब वह मानो देखो, अस्वतं शुक्राय शुक्र में पहुंचां, शुक्र से उड़ान उड़ी, तो मंगल में चला गया, मंगल से उड़ान उड़ी, तो स्वाति नक्षत्र में चला गया, स्वाति नक्षत्र से उड़ान उड़ी, तो रोहिणी कृतिका में चला गया, कृतिका से उड़ान उड़ी, तो उड़ेनकेतु मण्डल में चला गया, उड़ेनकेतु मण्डल से उड़ान उड़ी, तो चन्द्रीती मानो मृचि-मण्डल में पहुंचा तो मानो देखो, एक मण्डल का प्रकाश आ रहा था तीव्र गति से और वह मृचि-मण्डल से मानो उसका समन्वय हुआ, तो मृचि-मण्डल से समन्वय हो करके वह सूर्य से हुआ और सूर्य से हो करके, चन्द्रमा से होता हुआ जब वह मानो देखो, पृथ्वी की दिशा को आने लगा तो मानो देखो, वह दिशा में भ्रमित हो करके प्रकाश मानो देखो, वह बृहस्पति के आंगन को चला गया। परिणाम यह हुआ कि वह जो प्रकाश है, वह ऐसे मण्डल का प्रकाश है, जो इस पृथ्वी को प्रकाशित नहीं करने वाला था। मानो इस तक उसकी ज्योति आ ही नहीं सकती। तो मुनिवरों! देखो, जब वह बृहस्पति के आंगन में रमण करता हुआ पुनः देखो, द्वितीय दिशा बन गई तो पृथ्वी से ओझल हो गया। मानो यह प्रकाश, मुनिवरों! देखो, आज से तेरह लाख वर्षो पूर्व महर्षि भारद्वाज मुनि के विद्यालय में, बेटा! यन्त्रों के द्वारा दृष्टिपात किया गया।

विभिन्न रुपों में प्रजापति

आज, मुनिवरों! देखो, मैं विशेष विवेचना में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। आज मैं विज्ञान के युग में भी तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार केवल यह है कि मुनिवरों! मैं आज प्रजापति की उपासना कर रहा था। आज प्रजापति के गुणों का गुणवादन कर रहा था। वह प्रजापति, मानो देखो, जो लोक-लोकान्तरों का स्वामित्व करने वाला है, वह प्रजापति है। राजा भी प्रजापति है और मुनिवरों! देखो, माता को भी प्रजापति कहते हैं। कहीं-कहीं जननी माता को भी प्रजापति कहते हैं, क्योंकि वह प्रजा जिसको हम प्रजा कहते हैं, वही माता की लोरियों का पान करती हुई, मानो उसी में पनपती हुई, मुनिवरों! देखो, वही तो -प्रजा के स्वरूप को धारण करती है, वही तो प्रजापति है। उस माता को हम प्रजापति के रूप में दृष्टिपात करते हैं, उसको निहारते रहते हैं। हे माता वेद तुझे प्रजापति कहता है, क्योंकि जिसको हम प्रजा कहते हैं, वही मानो तेरे पथ से हो करके, तेरे ही गर्भ से हो करके लोरियों का पान करके ही मानो वह प्रजा के रूप को धारण कर लेती है। हे प्यारी मां! तू अपने कर्त्तव्य का पालन कर रही है। मोह करना तेरा कर्त्तव्य नहीं है। मानो देखो, ममत्त्व को धारण करके तू उसका निर्माण, मानो उसको तू महान् बना करके तू संसार को प्रदान कर देती है। मेरे प्यारे! देखो, वही तो उसका कर्त्तव्यवाद है, वही तो उसकी धारा है।

मेरे प्यारे! आज मैं विशेष विवेचना में तुम्हें नहीं ले जा रहा हूँ, केवल विचार यह चल रहा था, प्रजापति कौन है? मुनिवरों! देखो, प्रजापति वे परमपिता परमात्मा है जो स्वामित्व करने वाला है,जो इस ब्रह्माण्ड का नियन्ता है, नाना प्रकार की निहारिकाओं में रत्त रहने वाला है और लोकों का नियमन में, मानो नियम में परिणित कर रहा है। उनको गति दे रहा है, नियमन हो रहा है। वह नियमन हो करके ही, मेरे प्यारे! अपने में रत्त हो करके, इस संसार को निर्माणित कर रहा है। आओ, मेरे प्यारे! मैं विवेचना में नहीं ले जाना चाहता हूँ। प्रजापति कौन? देखो, आत्मा को भी प्रजापति कहते हैं, क्योंकि आत्मा जब तक शरीरों में विद्यमान रहता है, तब तक यह मानव का शरीर प्रजाओं में गणनीय माना जाता है, परन्तु जब आत्मा निकल जाता है, आत्मा चला जाता है, तो बेटा! यह शून्यता को प्राप्त हो करके यह परमाणुवाद बन करके, यह प्रकृति का समूह बन जाता है। प्रकृति का

मूर्धा बन जाता है।

बेटा! कैसा यह विचित्र जगत् है। आज जब मैं इसके आश्चर्य मे प्रवेश करता हूँ,? तो मेरा अन्तर्हृदय तो प्रसन्न हो जाता है, हम अपने में यह अनुभव करते हैं कि यह कैसा प्रभु का अनुपम जगत् है। मानो एक-एक वस्तु पर चिन्तन करते रहो, विज्ञान में रत्त रहो, परन्तु यत्रता में दृष्टिपात भी करते रहो, तो मेरे प्यारे! विचार यह चल रहा था कि बेटा! प्रजां ब्रह्म वाचा लोकम् आत्मा आत्मा में मानो देखो, कितनी प्रजा विद्यमान है। बेटा! मानो देखो, इसी के कारण सूर्य है, इसी के कारण चन्द्रमा है, इसी के कारण मानो तारामण्डल है, इसी के कारण में यह अग्नि विज्ञान है, इसी के कारण यह शब्द-विज्ञान है। मेरे प्यारे! देखो, सब इसी के कारण हैं और जब यह निकल जाता है तो मानो देखो, यह सब मृतक बन जाता है। ये सब अन्धकार में चले जाते हैं। बेटा! जो आज एक वैज्ञानिक बना हुआ है, वह वैज्ञानिक कल्पना कर रहा है, विज्ञानशाला में कि यह सूर्य है, यह मानो चन्द्रमा है, यह तारामण्डलों की माना बनी हुई है, जिससे आकाश वृत्तियों में रत्त रहने वाली है।

यही विचार रहा है कि अग्नि है। अग्नि कितने प्रकार की है? आयुर्वेदाचार्य बन जाता है, तो पिचासी प्रकार की अग्नियों की धाराओं का जन्म हो जाता है। परन्तु यही अग्नि गार्हपथ्य बन करके रहती है, यही अग्नि वैश्वानर बन करके रहती है, यही अग्नि मानो देखो, गृहपथ्याम् मानो गृहपथ्य नाम की अग्नि बन करके रहती है। बेटा! ये अग्नि के कितने स्वरूप बन गएं हैं। परन्तु यही अग्नि शब्दों के रूप में है। शब्द, मुनिवरों! देखो, राष्ट्रों को पवित्र बना देता है। शब्द ही मानो जब कटु हो जाता है तो राष्ट्र में अग्नि प्रदीप्त कर देता है, मानो वह भी शब्द-अग्नि के रूप में परिणत हो करके।

जब बेटा! इस मानव के शरीर से मानो आत्मा निकल जाता है, चला जाता है अपने स्वरूप में, तो बेटा! यह लोक-लोकान्तर भी मानो वैज्ञानिकों से ओझल हो जाते हैं। वह कहाँ चला गया जगत्? बेटा! वह कहाँ चला गया? आत्मा के निकलते ही मानव के शरीर से माता रूदन कर रही है। कहती है मेरा पुत्र है। पत्नी कहती है मेरा पति है मानो भौजाई कहती है, मेरा विधाता है। तो एक विचित्र जगत् बन गया है। मेरे प्यारे! वह शून्य है, वह मानो देखो, जो आज से पूर्व कह रहा था, यह चन्द्रमा है, यह सूर्य है, मैं वैज्ञानिक बन करके गणना कर रहा हूँ। परन्तु एक आत्मा के न रहने से वह विज्ञान कहाँ चला गया? वह प्रजा कहाँ चली गई, परमाणुओं की?

मेरे प्यारे! देखो, वह प्रजा अपने ही स्वरूप में परिणत हो गई। मेरे प्यारे! वह अपने स्वरूप में चली गई। आत्मा का हृस नहीं होता, वह सदैव अमृत रहने वाली है। परमाणुवाद का मानो देखो, ह्रास नहीं होता, वह अपने-अपने स्वरूप में चला गया। परन्तु जो उन्हें दृष्टिपात कर रहा था, वह न रहा। माता से प्रश्न कर रहा हूँ, माता! तू जो रूदन कर रही है, क्यों कर रही है? वह कहती है, मेरे पुत्र था, नहीं रहा। परन्तु जब यह प्रश्न करता हूँ, माता! क्या शरीर तेरा पुत्र है, या आत्मा तेरा पुत्र है? परन्तु यदि आत्मा को पुत्र कहती है, तो आत्मा को माता नहीं जानती, वह कितना विशाल है। परन्तु यदि शरीर को अपना पुत्र कहती है, शरीर उसके संग विद्यमान है, मानो उसे अपने कंठ में धारण नहीं कर सकती। मेरे प्यारे! देखो, यह कैसा विचित्र एक महान् जगत् है, जिसके ऊपर मानव विचारता रहता है, चिन्तन करता रहता है, मनन करता रहता है। अन्त में, बेटा! देखो, यह सर्व जगत् माता के संकल्प में पुत्र बन गया है। वह केवल आत्मा प्रजापति है, वह जो प्रजा, लोक-लोकान्तर, मानो पंच-महाभूत बना हुआ था, वह प्रजा तो अब समाप्त होकर के प्रजापति में परिणत हो गया है। तो इसीलिए आत्मा को प्रजापति कहते हैं।

मेरे प्यारे! यह प्रजापतित्व हमारे समीप चला आता है, तो आश्चर्य चकित होने लगता है। यही प्रजापति है, बेटा! जो याग में परिणित हो जाता है, यही प्रजापति है, मानो देखो, जो याग में प्रतिष्ठित हो जाता है। यागां

भविते देवाम् जितना मानो देखो, सुकर्म है, सु-चिन्तन है, मानो देखो, वह सर्वत्र याग के इस रूप को धारण करके और वह सर्वत्र प्रजापति उसमें ओत-प्रोत हो जाता है।

यह है, बेटा! आज का वाक्। मैं विशेष चर्चा देने नहीं आया हूं। केवल, बेटा! मैं एक सूक्ष्म सा परिचय देने के लिए चला आता हूँ, क्योंकि यह परिचय है। वेद हमें कुछ परिचय देता है, जो परमपिता परमात्मा की अमूल्य देन है अथवा सौगात है, वह सुसज्ञनीय है। मानो हमें वह कुछ प्रेरणा देती है और प्रेरणा के आधार पर वेद क्या कहता है? वेद हमें कौन-कौन से मार्ग पर ले जाता है? वह मानो प्रत्येक वेदमन्त्र हमें घोषित कर रहा है, घोषणा कर रहा है, हे मानव! आ, तू सत् के पथ को अपनाने वाला बन!

राजा जनक की दिनचर्या

मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या? आज मैं तुम्हें कुछ चर्चा कर रहा था। मुनिवरों! देखो, राजा जनक विदेह कौन है? जो निर्मोही रहने वाला है, जो कर्त्तव्यवाद का पालन करता है। राजा जनक के जब राष्ट्र को हमने किसी काल में दृष्टिपात किया, तो वह स्वयं राष्ट्र में उस अन्न को ग्रहण करते थे, जिस अन्न का कोई अधिकारी न हो कहीं पर। मानो स्वयं कला कौशल करके द्रव्य को पान करते थे। वह राजा मानो परमपिता परमात्मा का चिन्तन करते थे, पंच-याग करते थे। संगतिकरण में, यागों में परिणित हो करके, मानो प्रजा का पालन करना और अपने को ऊँचा बनाना, सुसज्जित मानो उनका क्रियाकलाप था। उनके विश्राम की एक सूक्ष्म सी स्थली रहती, मानो देखो, राष्ट्र का क्रियाकलाप करते रहते थे। राष्ट्र से मानो उन्हें अवकाश प्राप्त होता तो देखो, प्रभु का चिन्तन, ऋषि-मुनियों के सत्संग, ऋषि-मुनियों की मानो सभाएं होती रहतीं। ब्रह्म-चिन्तन होता रहता। प्रश्न होता रहता, कौन ब्रह्मवेत्ता है? कौन ब्रह्म की उड़ान ऊंची उड़ रहा है? कहीं याज्ञवल्क्य को ऊंचा कहा, कहीं मानो अष्टाचक्र को ऊँचा कहा है कि मेरे पूज्य गुरु रहे हैं , कहीं मानो देखो, अर्द्धभाग को, कहीं महात्मा दिग्ध को, नाना देखो, कहीं अश्वल को अपना पुरोहित कर करके राष्ट्र करे, मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म-विद्या में परिणत करा दिया।

प्रभु प्राप्ति

देखो, जिस भी काल में राजा के यहाँ कोई भी ध्वनि आई तो देखो, ब्रह्म की आ रही है, ब्रह्म-ज्ञान की आ रही है, तरंगवाद की आ रही है, मानो देखो, उसका राष्ट्र एक भव्य पवित्र रहा है। मुनिवरों! देखो, अकाल पड़ता तो राजा स्वयं कृषिका उद्गम करते, तो समय पर वृष्टि हो जाती थी। तो मेरे प्यारे! देखो, राजा जनक विदेह कहलाते थे। आज मैं, बेटा! साहित्य में तो नहीं पहुँचा हूँ केवल मैंने कुछ शब्दों का प्रतिपादन अथवा उसके ऊपर कुछ चर्चाएं की हैं।

आज का विचार क्या? मेरे प्यारे! आज का विचार यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुण-गान गाते हुए, बेटा! इस संसार-सागर से पार हो जाएं, जो यह संसार नाना प्रकार के मान और अपमान का जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है। यह मान-अपमान की तरंगें आ रही हैं, जो प्राणी को स्पर्श करके, मुनिवरों! प्राणी को प्रभावित कर रहा है। प्राणी अपने में अनुभव कर रहा है, मानो मान-अपमान का त्याग करके। जो मानव त्यागता है, वही मानो प्रभु को प्राप्त हो जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! आज का विचार अब हमारा समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती में सदैव रत्त होते रहें और प्रजापति परमपिता परमात्मा के जो, मेरे प्यारे! देखो, एक मण्डल से, एक परमाणु से ले करके, अणु से ले करके और जो, मेरे प्यारे! देखो, लोक-लोकान्तर, निहारिका क्या, अवन्तिका क्या, मानो देखो, यह निहारिका-अवन्तिका-आकाश-गंगा ये सब, मानो प्रभु इनका नियमन कर रहा है। वह प्रजापति है, जैसे मानव के शरीर का नियमन करने वाला इस

शरीर में आत्मा है। आत्मा जब तक रहता है, तो मानव-शरीर क्रियाशील रहता है, वह प्रजा बनी रहती है, परन्तु आत्मा के निकल जाने से शून्यता प्राप्त हो जाती है। यह है, बेटा! आज का वाक्, मुझे समय मिलेगा, मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। श्री वैजनाथ अवरोल, पंजाबी बाग, दिनांक १३-०४-१९८५

३ यज्ञोमयी विष्णु १४-०४-१९८५

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना मेरे देव, जो यज्ञोमयी स्वरूप है, मानो याग उसका आयतन माना गया है मानो उस परब्रह्म परमात्मा की प्रायः हम महती का वर्णन कर रहे थे। क्योंकि वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा का निर्वाचन करता रहता है। उसके गुणों का वर्णन प्रत्येक शब्द में प्रायः हो रहा हैं, जितना भी यह ब्रह्माण्ड है, मानो यह उसकी गाथा और उसकी प्रतिभा है अथवा यह सर्वत्र जगत् उसका आयतन माना गया है।

आज मैं विशेषता में कोई वाक्य प्रगट करने नहीं आया, केवल विचार यह देने के लिए कि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है। वेद का मन्त्र उसे विष्णु कहता है और उसका उद्घोषकर रहा है कि वह पालन करने वाला है, अनुपम है, विष्णु है, वह ध्रुवा है, मानो वह ऊर्ध्वामें भी गति करने वाला है। तो वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है।

ब्रह्मचारी के याग इन्द्रिय अनुशासन

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं यागों के सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा तो नहीं, परन्तु हमारे यहाँ सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक यागों का चयन ऋषि-मुनियों के मस्तिष्कों में नृत्य करता रहा है। विद्यालय में ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहा है, परन्तु उसको सबसे प्रथम यह उपदेश देते हैं कि हे ब्रह्मचारी! तू याग में परिणित हो जा। मुझे स्मरण है, जब महर्षि - को उनके पितर रेंगणी भारद्वाज ने जब मानो देखो, महर्षि तत्त्व मुनि आश्रम में उन्हें प्रवेश कराया तो सबसे प्रथम उन्होंने यह कहा- चक्षुम्मे शुन्धामि, हे ब्रह्मचारी! तू मानो चक्षु में ब्रह्मचारी है। आओ, मानो यज्ञोमयी याग का संकल्प करो कि तुम्हारी प्रत्येक इन्द्रियाँ यागमय होनी चाहिए। चक्षुम्मे शुन्धामि, श्रोत्रम्मे शुन्धामि ,जब प्रत्येक इन्द्रिय को आचार्य अपनी आभा में निहित कर लेता है, तो मानों वही आचार्य ब्रह्मचारी को पवित्र बनाता है, यज्ञोमयी बना देता है।

गोमेध-याग

मानो वही ब्रह्मचारी को पवित्र बनाता हुआ, वह गो-मेध याग हो रहा है। क्योंकि गो और मेध दो ही शब्द हैं, जो मानव के जीवन में सार्थक बन करके आते हैं। मानो गो नाम पशु का है और मेधनाम प्रकाश में रत्त रहने वाला है, वहाँ प्रकाश है। तो मानो देखो, गो-मेध भविते ब्रह्मब्रह्वा कि गो से मेधावी की वह उड़ान उड़ता है, गो से मेधा को प्राप्त करता है। मानो जब वह मेधावी बन जाता है, तो उसका जीवन यज्ञ में परिणित हो जाता है, यज्ञ में ही ओत-प्रोत हो जाता है। यज्ञोमयी संकल्प ब्रहे , क्योंकि हमारे यहाँ आचार्यो ने प्रारम्भ में ही मानो देखो, याग का वर्णन किया कि ब्रह्मचारी को याग करना चाहिए। याग क्या यहाँ तक ऋषि ने कहा है कि वागृति वाचप प्रहे लोकाम् मानो वह गार्हपथ्य नाम की अग्नि की पूजा करे।

गार्हपथ्याग्नि-पूजक

गार्हपथ्य नाम की अग्नि की पूजा कौन करता है? यज्ञमान करता है। मानो ब्रह्मचारी कर रहा है। विद्यालयों में प्रवेश हो करके, आचार्य करता है।

वाजपेयी याग

बेटा! मैंने कई काल में तुम्हें निर्णय कराया था, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की चर्चाएं प्रायः होती रहती हैं,

परन्तु देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, माता अरून्धति और नाना ब्रह्मचारी, उनके यहाँ नित्यप्रति मानो वाजपेयी याग का चलन होता रहता, वाजपेयी याग होता रहता। जब भी मानो ऋषि-मुनि आश्रम में उनका आगमन होता, तो वे ब्रह्म और आत्मा की कुछ चर्चाएं करते रहते थे। विशेष कर महर्षि कागभुषुण्ड जी तो प्राण की ही चर्चा करते रहते थे। यागां भविते ब्रह्मवाचा, बेटा! यहाँ राजा को भी याग करना है, जैसा पुरातन काल में हमने वर्णन किया।

प्रजापति-चाक्रायण का याग-विज्ञान-मन्थन

उद्गीत का देवता

आज मैं कोई विशेषता में नहीं ले जाऊँगा। प्रजापति के यहाँ याग हो रहा है। मानो देखो, चाक्रायण ऋषि, बेटा! याग में परिणित हुए और याग में उद्गाता बने। जब उद्गीत गाने लगे जो राजा ने यह प्रश्न किया कि तुम बिना आज्ञा के उद्गाता बन गएं हो, परन्तु जिस उद्गीत को तुम गा रहे हो, उसका देवता कौन है? मेरे प्यारे! ऋषि ने यह वर्णन कर दिया कि उसका देवता सूर्य है। उद्गीत गाने वाला सूर्य के समान तेजोमयी बन जाता है। वह तेज की उपासना करता है। अग्नि से अग्नि का चयन करता है। राजा सन्तुष्ट हो गया।

उद्गाता का प्रेरणा स्रोत

राजा ने पुनः यह प्रश्न किया कि हे उद्गाता! तुम बिना आज्ञा के उद्गाता बने हो, यह किससे तुम्हें आज्ञा अथवा प्रेरणा प्राप्त हुई है? तो चाक्रायण कहता है कि प्रेरणा का सूत्र मानव का हृदय है। हृदय ही प्रेरणा का स्रोत माना गया है। उसी हृदय की प्रेरणा से, उसी हृदय के उद्गार से मानो में उद्गाता बना हूँ। राजा सन्तुष्ट हो गया।

उद्गाता का दिशा-समन्वय

राजा ने कुछ समय पश्चात् यह प्रश्न किया कि हे उद्गीत गाने वाले, उद्गाता! मनो जो तुम उद्गीत गाओगे, वह उद्गीत को देवता कौन है? मेरे प्यारे! ऋषि चाक्रायण ने कहा उद्गीत का देवता कौन है? मानो ये दिशाएं मानी गई हैं। दिशाओं में ही तो शब्द गति कर रहा हे और दिशाओं से ही हमारा जब समन्वय होता है तो उद्गारों का प्रारम्भ हो जाता है। उसका देवता मानो दक्षिणाय है, उसका देवता सोम कहलाता है।

उद्गाता का दिशा-स्थान

मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा कि सोम और दक्षिणाय, दो शब्द बन गएं हैं। दक्षिणाय और यह सोम दोनो शब्द कैसे बने हैं? इसको परस्पर समन्वय कैसे होगा? तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा कि शब्द प्रथम मानो दक्षिण दिशा, दक्षिणाय को प्राप्त होता है, उसमें पितर रहते हैं और पितरों से जो शब्द आता है, वही मानो देखो, उत्तरायण में जा करके उद्धृत होता है, इसीलिए उद्गाता का स्थान यज्ञशाला में उत्तरायण कहलाता है। राजा! बेटा! यह उच्चारण करके मौन हो गया।

स्वाहा का देवता

जब वह मौन हो गये तो कुछ समय के पश्चात् राजा ने पुनः उनसे प्रश्न किया कि मानो तुम जो उद्गीत गा करके स्वाहा उच्चारण करते हो, मानो इसका देवता यह कहाँ समाहित होता है? तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि चाक्रायण ने कहा कि महाराज! यह तो दो वाक्य हो गएं कि एक समाहित होना है और एक देवता होना है उन्होंने कहा, दोनों का दत्तर दीजिए। चाक्रायण ने कहा कि मानो देखो, यह सम्भविता ब्रह्मवाचा अग्नि यह अग्नि में ही तो समाहित हो जाता है, और अग्नि में समाहित हो करके मानो देखो, उद्गीत गाने वाला समिधा कहा जाता है और समिधा के समन्वय से ही तो मानो देखो, अग्नि का चयन होता है, और वह अग्नि उद्धृत हो जाती है, प्रकाश में रक्त हो जाती है। मेरे पुत्रो! जब चाक्रायण ने यह उत्तर दिया तो उस समय राजा ने कहा, यथार्थ ब्रहे!

उद्गाता का कर्त्तव्य

याग चयन

मेरे प्यारे! कुछ समय के पश्चात् उन्होंने एक प्रश्न और किया तुम जो उद्गीत गाने वाले हो, माना है तुम्हें, वह किसके लिए, मानो क्यां गाओगे? महाराजा चाक्रायण ने कहा कि मैं जो उद्गीत गा रहा हूँ, सबसे प्रथम तो देवताओं को मैं प्रदीप्त करना चाहता हूँ, उसके पश्चात् मैं अपनी अन्तरात्मा में, जो मेरे हृदय में जो एक मानो उद्गीत गाया जा रहा है, उसका बाह्य स्वरूप बन करके, मेरा अन्तर्हृदय मानो यज्ञमान के हृदय से उसका समन्वय हो जाएगा और मेरे हृदय से उसका समन्वय हो, जाएगा और मेरे हृदय की यह कामना है। कि यज्ञमान की वाणी और उसका हृदय दोनों का एक समन्वय हो करके, मानो वह श्रद्धा में परिवर्तित हो करके, मानो देखो, वह द्यौ-लोक को प्राप्त हो जाएं, द्यौ में उसकी स्थिति हो जाएं। मेरे पुत्रो! देखो, जब चाक्रायण ने यह उत्तर दिया तो प्रजापति ने कहा, यथार्थ।

मेरे पुत्रो! देखो, उन्होंने कहा कि यज्ञमान उद्गीत जो गा रहा है, मानो इसका उद्देश्य क्या है? मुनिवरों! देखो, उन्होंने चाक्रायण ने कहा कि इसका जो उद्देश्य, यह जो उद्देश्यां ब्रीहि ब्रहो वाय प्रह्वा वेद की आख्यिका कुछ ऐसी कहती है, मानो देखो, जो यज्ञमान है वह चाहता है कि मेरे हृदय की जितनी ग्रन्थियाँ हैं, जितना मेरे हृदय का उद्गार है, मानो वह तो मेरा राष्ट्र है, मेरा राष्ट्र पवित्रता में परिवर्तित हो जाएं, सदाचार और मानवता की प्रतिभा में रत्त हो जाएं, ऐसा मानो देखो, यह उच्चारण करके, बेटा! राजा ने उच्चारण किया कि तुम्हारा जो ज्ञान है, वह अपार है, मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ।

यज्ञशाला का देवता

उस समय जब विराजमान होने लगे तो चाक्रायण ने कहा राजा! बस, शान्त हो गएं हो? आगे तुम्हारा प्रश्न तो रह ही गया है। राजा ने कहा प्रभु! उस प्रश्न को मैं नही जान रहा हूँ। वह कौन-सा है? उन्होंने कहा तुमने यह प्रश्न नहीं किया कि इस यज्ञशाला का देवता कौन है? उन्होंने कहा प्रभु! वास्तव में मैं यह नहीं जान पाया। मानो देखो, यह जो यज्ञशाला है, यह रथ है और अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके यह द्यौ-लोक को प्राप्त हो जाता है। यह उत्तर देकर के चाक्रायण मोन हो गएं और उद्गीत गाने लगे, उद्गाता बनकर के उद्गीत गाने लगे तो मानो याग प्रारम्भ हो गया।

तो मुनिवरों! देखो, विचार-विनिमय हमारा क्या है कि हम याग में जब परिणित होते हैं तो याग के देवताओं को अंगो-उपांगों से जानने लगते हैं तो हमारा अन्तर्हृदय पवित्र हो जाता है, हम उस पवित्रता की वेदी में रत्त हो जाते हैं।

विष्णु

सूर्य का नाम विष्णु

जहाँ मानो देखो, यह विष्णु शब्द आया है, वेद में विष्णु शब्द आ रहा है। तो मुनिवरों! देखो, विष्णु नाम सूर्य का है और उसका एक, केवल एक ही अभिप्रायः है-वह जो पालन करने वाला है, उसका नाम विष्णु कहा जाता है, वैदिक साहित्य में। कई काल में मैंने ये चर्चाएं की हैं, आज भी मैं उसकी पुनरूक्ति ले रहा हूँ। हम कह रहे हैं कि जो भी पालन करता है, वह विष्णु के रूप में रत्त रहता है।

प्रथम विष्णु-परमात्मा

सबसे प्रथम विष्णु परमपिता परमात्मा को कहा जाता है, जो परमपिता परमात्मा, मानो देखो, महान् बन करके पालन करता है। सर्वत्र प्राणी का निर्माण, पालन करना, मानो देखो, संहार की प्रतिभा में रत्त कर देना, परन्तु अभिप्रायः यह कि पालन करने वाले को ही विष्णु कहते हैं\

माता का नाम विष्णु नाम

वैदिक साहित्य और बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं, जैसे विष्णु नाम परमपिता परमात्मा का है। विष्णु नाम माता को भी कहा जाता है, क्योंकि वह पालन कर रही है।

राजा का विष्णु रूप

विष्णु नाम सूर्य को कहा जाता है, जो प्रकाश दे रहा है, जो प्रकाश दे रहा है, जो पवित्र बना रहा है, तेजोमयी बना रहा है। मानो विष्णु नाम राजा का है, जो अनुशासन में लाने वाला हैं। स्वयं अनुशासन में रक्त रहने वाला, प्रजा को अनुशासन में लाना, उसका नाम भी विष्णु है। तो बहुत से पर्यायवाची शब्द आते हैं, परन्तु अभिप्रायः केवल एक ही है कि जो पालन करता है उसका नाम विष्णु है।

पृथ्वी का विष्णु रूप

यहाँ पृथ्वी को भी विष्णु के रूप में वर्णन किया है, क्योंकि यह नाना प्रकार के व्यंजनों को प्रदान कर देती है, नाना प्रकार के खाद्य और खनिज-पदार्थों को प्रदान करती हुई मानव के जीवन का संचालन करती है। इसीके गर्भ में तो, बेटा! मानव पनप रहा है, इसी के गर्भ में तो नाना प्रकार की वनस्पतियों को पान कर रहा है, इसी के गर्भ में तो नाना प्रकार के अन्नाद को पान कर रहा है। वाह रे, मेरे देव! तेरे मानो देखो, विष्णु के रूप में यह पृथ्वी ही पालन कर रही है, अपने गर्भ में धारण कर रही है। मानो यह कहीं वसुन्धरा के रूप में, कहीं पृथा के रूप में, कहीं गो के रूप में, कहीं धेनु के रूप में, मानो इस पृथ्वी का वर्णन वैदिक साहित्य में होता रहा है। तो आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ यह वाक्य अब मैं समाप्त करने वाला हूँ।

विष्णु रूपी अखण्ड ज्योति से समन्वय

मानो देखो, आज का हमारा जो विचार है, वह यह है कि हमें अपने हृदय में अगम्य-ज्योति को जानना चाहिए। वह जो हृदय में अनुपम एक ज्योति जागरूक हो रही है, जिसका समन्वय अखण्ड-ज्योति से रहता है। वह अखण्डमयी ज्योति हमारा पालन करने वाली है। तो मानो देखो, अब मैं अपने विचारों को विराम दे रहा हूँ। मेरे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जी- ओ३म् सर्वा गायनत्वा मां भविन्धमाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि-मण्डल! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ऊर्ध्वा में जाने वाले उपदेश, मानो उनके उद्गार हमारे अन्तःकरण को स्पर्श करने वाले हैं। हमारा अन्तःकरण जभी पवित्र बनता है, जब तपे हुए विचार, दर्शनों से गुथे हुए विचार, जब मानव के अन्तःकरण को स्पर्श करते रहते हैं, तो अन्तःकरण में एक पवित्र प्रकाश आने लगता है।

आज हमारी यह आकाशवाणी जिस स्थलों पर जा रही है, वहाँ एक याग का चयन हुआ। मानो मैं सदैव दृष्टिपात करता रहता हूँ कि मानव अपने कर्त्तव्य की आभा से आभा में रक्त हो करके कहीं का कहीं परिवर्तित होता रहता है। पूज्यपाद गुरुदेव के जीवन के ऊपर जब मैं दृष्टिपात करने लगता हूँ, तो मानो हृदय में एक विडम्बना उत्पन्न हो जाती है। मैं उस विडम्बना के स्रोत में भी जाना नहीं चाहता हूँ, क्योंकि यह प्रत्येक आत्मा के साथ में जो अन्तःकरण लगा हुआ है। अन्तःकरण, चित्त का एक मण्डल कहलाता है, उसमें जो संस्कार हैं, जो क्रियाकलाप हो रहे हैं मानो उसके ऊपर मानव का जीवन निर्धारित हो जाता है और उसी में वह रक्त रहता है।

आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को अपनी आभा में दृष्टिपात कर रहा था। परन्तु मैं आज इन वाक्यों को न लेता हुआ, केवल क्या, आज मेरा अन्तरात्मा, अन्तर्हृदय प्रसन्न हो करके, यज्ञमान के साथ मेरा हृदय रहता है और मैं यह कहा करता हूँ कि हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे! क्योंकि जीवन की धाराएं ही एक याग का स्रोत माना गया है। मानो जब यज्ञमान अपने जीवन की धारा को महानता में ले जाता है, तो मेरा अन्तःकरण यह कहता रहता है, हे यज्ञमान! याग तेरी एक मौलिक आभा है, क्योंकि तू त्याग और तपस्या में रक्त

हो करके, तू अपना देखो, द्रव्य का सदुपयोग कर रहा है। जिस गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता है, वह गृह वास्तव में देव की प्रतिभा कहलाती है। तो हे यज्ञमान! मेरे जीवन में सदैव यह कामना रहती हे यज्ञमान! के लिए कि तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे।

परम्परा का वैष्णवी राष्ट्रवाद

मानो देखो, इस प्रकार जैसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी कुछ याग के विज्ञान की चर्चा कर रहे थे, याग का कहाँ-कहाँ समन्वय होता है। परन्तु राजा बुद्धिमानों से प्रश्न कर रहा है और बुद्धिमान उसका उत्तर दे रहा है, उसका उद्गीत गा रहा है। यह मैं क्या दृष्टिपात कर रहा हूँ! परन्तु कहाँ वह महाराजा प्रजापति वाला पालन, कहाँ आधुनिक काल की चर्चाएं। पूज्यपाद गुरुदेव को मैं परिचय देता रहता हूँ, और वह परिचय यह है कि पुरातन राष्ट्र की प्रतिभा कितनी विचित्र रही है। मानो देखो, ऊँचे-ऊँचे, महान् से महान् पवित्र आत्माओं को भयंकर वनों से लाया जाता और यागों की रचनाएं हुआ करतीं। परन्तु राजा प्रसन्न हो रहा है, प्रजा प्रसन्न हो रही है। राजा अपने में स्वयं कला-कौशल करके उदर की पूर्ति करता है। प्रजा के वैभव को संग्रह नहीं कर रहा है। प्रजा के वैभव को ग्रहण नहीं कर रहा है। वह यह जानता है कि मेरा यह कर्त्तव्य नही। मेरा कर्त्तव्य है, मुझे सेवा करनी है। मेरा कर्त्तव्य है कि मैं स्वयं कला-कौशल करके उदर की पूर्ति करके मैं अपने गृह में याग करूं।

महाराजा सुनीत का राष्ट्रवाद

मानो देखो, पूज्यपाद जिस राजाकी चर्चा कर रहे थे, वह सुनीत नामक राजा थे। और, सुनीत राजा के यहाँ, इन्होंने नियम बनाया था कि पति-पत्नी अपना स्वयं कला कौशल करते मानो कृषि का उद्गम करते और उसमें अपने उदर की पूर्ति करते और मानो एक वर्ष में जितना भी अपने उदर से अतिरिक्त कृषि में द्रव्य का उपभोग होता, परन्तु उसी के द्वारा बुद्धिमानों की ऋषि-मुनियों को ला करके उसका याग करते थे। प्रातःकालीन् तो याग होता ही था। देव-पूजा किया करते थे, क्योंकि देवता प्रसन्न रहें राष्ट्र में। राष्ट्र में समय पर वृष्टि हो जाएं, अनावृष्टि नहीं, मानो इन्द्र प्रसन्न रहे। मानो अग्नि में पदार्थों को देकर अग्नि उसका विभाजन कर देती है। वही तो विभाजन-क्रिया है, जो सुनीत राजा अपने राष्ट्र में किया करते थे। परन्तु ऋषि-मुनि जाते उस अन्न को वह पान कराते थे जिस अन्न को मानो कृषि में उद्यम करके उन्हें प्राप्त होता।

राष्ट्र का प्राण

राजा यह जानता था कि मेरे राष्ट्र में, मेरे राष्ट्र का यदि कोई प्राणी है तो बुद्धिमान पुरूष है, राष्ट्र का यदि कोई प्राण है, तो वह बुद्धिजीवी है। मानो यदि बुद्धिजीवी का ह्रास हो गया तो राष्ट्र का प्राण चला जाएगा। मानो देखो, महाराजा सुनीत वेदों की प्रतिभा, दर्शनों की आभा में अपने वाक्य को उच्चारण करते थे। क्योंकि यदि बुद्धिमान की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, तो वह बुद्धि रूढ़ि में परिवर्तित हो जाती है और वह रूढ़ि में परिवर्तित हो करके वह स्वार्थ की परता पर आ जाती है और वह स्वार्थपरता पर आ करके मानो राष्ट्र में रक्तभरी-क्रांति के अवशेषों का जन्म हो जाता है।

वेद का आदेश

मानो देखो, इस प्रकार हमें राजा को विचारना चाहिए। राजा चाहता क्या है? राष्ट्र क्या चाहता है? मानो यह वेदमन्त्र क्या कहता है? वेदमन्त्र, वेद के ऋषि क्या कहते हैं? और क्या उनकी इच्छाएं हैं? परन्तु वेद का ऋषि केवल यही कहता है कि यदि राजा को अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना है तो उसके राष्ट्र में याग होने चाहिए, परन्तु यागों से सुगन्धित होनी चाहिए। यदि सुगन्धि होगी, तो वायुमण्डल पवित्र रहेगा और वायुमण्डल के पवित्र रहने पर समय-समय पर वृष्टि होगी, अनावृष्टि नहीं होगी।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में राजाओं की गाथाएँ प्रगट की हैं कि राजाओं के यहाँ इच्छा हुई कि वृष्टि होनी है तो मानो वह याग करते थे, बुद्धिमानों के द्वारा। मानो देखो, वह स्वयं कृषि में रक्त हो करके, कृषि को प्राप्त करते थे। विचार क्या? मानो देखो, आज मैं पूज्यपाद गुरुदेव को तो क्या परिचय दूँ। पूज्यपाद गुरुदेव तो इस विद्या को जानते हैं।

सुनीत से प्रजापति

परन्तु मैं तो केवल इतना उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि यह सुनीत राजा की मेरे पूज्यपाद चर्चा कर रहे थे। वही सुनीत मानो आगे चल करके प्रजापति के रूप को उन्होंने धारण किया। क्योंकि जब प्रजा में कुशलता आ गई, प्रजा में सुगन्ध को ऋणों से उऋण होने वाला राष्ट्र बन गया तो मानो उन्हीं को प्रजापति कहने लगे। वह प्रजापति, मानो देखो, सुनीत राजा के रूप में सुचेता के रूप में भी रहे। परन्तु विचार मेरा उच्चारण करने का यह है कि उनमें कितनी बुद्धि, कितना उद्धार, कितनी ब्रह्म-विद्या में पारायण राजा रहता है, जो ऋषि से प्रश्न कर रहा है! चाक्रायण वह ऋषि, जिन्होंने मानो देखो, एक सौ एक वर्ष तक तो अनुष्ठान किए मानो देखो, आयु को बलवती करने के लिए। मानो देखो, चाक्रायण तपस्वी, जो सूर्य की किरणों के साथ में विज्ञान को भी जानते थे।

आध्यात्मिक और भौतिक-विज्ञान समन्वय

ऋषि-मुनियों का यह कथन रहा है कि जो आध्यात्मिक विज्ञान को जानता है वही भौतिक विज्ञान में पारायण है। प्रत्येक मानव के हृदय में, राजा के हृदय में यह आकांक्षा रहती रही है कि मेरे राष्ट्र में विज्ञान होनो चाहिए। परन्तु जब तक विज्ञान का आध्यात्मिक विज्ञान से समन्वय नहीं होगा, जब तक आध्यात्मिक विज्ञान का और भौतिक विज्ञान का, दोनों का समन्वय नहीं होगा, तब तक राजा अपने राष्ट्र में शान्ति की स्थापना नहीं कर सकता। क्योंकि राजा स्वयं मानो देखो, शान्ति चाहता है, हृदय को अगम्य चाहता है, मानो देखो, परमपिता परमात्मा की महती से वह ऋषि-मुनियों के जीवन को उद्धार और आयुशील बनाना चाहता है। तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव से मैंने कई काल में वर्णा किया कि जब मैं परम्परा के राष्ट्रों को विचारता हूँ, जब मैं पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा यागों में परिणित होता रहा, राजाओं के यहाँ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, उनकी मानो देखो, श्रद्धा, उनकी आस्था, उनका ज्ञान, मानो कितना नम्र विचारणीय रहता था।

आधुनिक राष्ट्र-व्यवस्था

जब मैं आधुनिक काल के राष्ट्र में प्रवेश करता हूँ, आधुनिक काल, जो वर्तमान का काल है, जब मंज उसे दृष्टिपात करता हूँ तो मेरा हृदय मानो विडम्बनित हो जाता है। मेरा हृदय विडम्बनित क्यों होता है? क्योंकि जो वह क्रियाकलाप है, वह न रहने से प्रजा और राष्ट्र दोनों में अशान्ति का वायुमण्डल छाया हुआ है। वायुमण्डल की प्रतिभा में प्रत्येक प्राणी मानो देखो, रक्त हो रहा है।

याग-कर्म पाखण्ड नहीं

मैंने बहुत पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुदेव को यह वर्णन कराया है कि याग जैसे क्रियाकलाप को आधुनिक काल का मानव एक पाखण्ड की भाषा उच्चारण कर रहा है। मानो जब मैं यह विचारता हूँ कि तेरे जीवन का जो नित्यप्रति का क्रियाकलाप है, मानो क्या यह पाखण्ड में परिणित नहीं है? पाखण्ड उसे कहते हैं, जो वेद के विपरीत, जो प्रकाश के विपरीत अन्धकार में ले जाने वाला क्रियाकलाप हो, उसी का नाम पाखण्ड कहलाया जाता है। मानो देखो, इसके ऊपर मानव को सदैव विचार-विनिमय कर लेना चाहिए। इसके ऊपर मनन करते हुए चिन्तन करना चाहिए, क्योंकि पूज्यपाद गुरुदेव इससे पूर्व काल में यह उच्चारण कर रहे थे कि राष्ट्र में राजा ऊँचा बनेगा, जो प्रजा ऊँची बनेगी, प्रजा ऊँची बनेगी तो मानो देखो, इस समाज में स्वर्ग आ जाएगा, वायुमण्डल पवित्र

बनेगा। वायुमण्डल पवित्र बनेगा तो परमाणुवाद में एक क्रान्ति आ जाएगी, सु-क्रान्ति आ करके मानो देखो, वायुमण्डल में अपनी इच्छा के अनुकूल वृष्टि और सर्वत्र क्रियाकलाप होना प्रारम्भ हो जाता है।

इस प्रकार मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराया कि आधुनिक काल का जो राष्ट्र है, जब प्रातःकाल ही वह हिंसा में परिणित होने लगता है। आहार भी उसका हिंसामयी बन जाता है, तो वायुमण्डल कैसे पवित्र बना सकता है? परन्तु देखो, मैं इन वाक्यों में जाना नहीं चाहता हूँ। आहार और व्यवहार की प्रतिभा में जब मैं रत होने लगता हूँ, ऋषि-मुनियों ने क्या आहार किया और क्या उन्होंने हमें प्रदान किया है। मानो महर्षि कणाद जब आहार करते थे तो मानो वह कणक को ले करके जल में खरल बना करके उसका दुग्ध बना करके उसका पान करते थे और उनकी जो उड़ान थी, वह विज्ञान की रहती थी। वह मानो परमाणुवाद में रत्त रहते, उड़ान उड़ने रहते थे। यह उन्होंने कहा हे प्रभु! मेरी यदि सहस्रों वर्ष की आयु हो, और मैं तेरे विज्ञान के ऊपर अध्ययन करता रहूँ, तो प्रभु! हे भगवन्! वह भी मेरी आयु सूक्ष्म है। इतना विशाल विज्ञान प्रभु का है।

आज के विज्ञान की विडम्बना

मानो देखो, आज का मानव उससे विपरीत है। वह कहता है कि जो भी कुछ हम जान रहे हैं, परन्तु जो जान रहा वहकुछ समय के पश्चात् निष्क्रिय बन जाता है और निष्क्रिय बनने के मूल में यह कि जो विज्ञान में आज जिस परमाणु को जाना है, जिस तरंग को जाना जाता है, वे तरंगें कल परिवर्तित हो जाती हैं, क्योंकि देखो, प्रभु के विज्ञान में अनन्तता है। एक तरंग को जाना, वही तरंग ऐसी नहीं है जो उसी को जान करके हम विज्ञानवेत्ता बन गएं हैं। परन्तु द्वितीय तरंगे जो उपस्थित होती हैं, तो मानो देखो, वह जो प्रथम तरंग को जाना है उसका मूल रूप मानो देखो, द्वितीय तरंग में प्रवेश कर जाता है, द्वितीय तरंग को जानता है, तृतीय तरंग में वह प्रवेश कर जाता है। मानो एक परमाणु, परमाणु में ओत-प्रोत हो रहा है और ओत-प्रोत हो करके देखो, जिस यन्त्र का आज निर्माण किया है, वह यन्त्र ही नहीं कि यन्त्र का एक ऊर्ध्वा रूप बन करके मानो देखो, विज्ञान इससे भी ऊंचा एक परमाणु-अस्त्रों का निर्माण हो जाता है। तो उच्चारण करने का अभिप्रायः हमारा यह है कि हम, मुनिवरों! देखो, विज्ञान में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव को तो यह सब प्रतीत है, मानो देखो, कहीं याग से विज्ञान की धाराओं का जन्म होता है, कहीं मानो अग्नि के परमाणु जल की धाराओं में रक्त होने से परमाणुवाद का जन्म होता है और जन्म क्या अनावृत्तियों में रक्त रहने वालों से उनको जाना जाता है। तो किस प्रकार, हम किस माध्यम से अपने जीवन को ऊँचा बनाना चाहते हैं?

मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन कराया था, बहुत पुरातनकाल में कि आधुनिक काल का जो विज्ञानवेत्ता है, वह समाज को मृत्यु का त्रास देता रहता है, जो मैंने पुरातन काल में भी कहा हैं यह कहता है। यह कहता है कि एक ऐसा यन्त्र अमुक राष्ट्र ने निर्माणित कर लिया है, जो वायुमण्डल में त्यागा जाएगा तो मानव मात्र समाप्त हो जाएगा। अरे, भोले प्राणी! हे वैज्ञानिक! तू मानो प्रजा को त्रास क्यों दे रहा है? यह विज्ञान को आधुनिक काल में ही नहीं, यह सृष्टि के प्रारम्भ से ही मानो देखो, विज्ञान की उपलब्धि तो मानो परमपिता परमात्मा ने सूक्ष्म रूपों मे वर्णित की है। इसको मानव जानता रहता है और जानता हुआ इसको ऊर्ध्वा में ले जाता है, समय आता है, वह निम्न चला जाता है, निचली स्थलियों में प्रवेश कर जाता है। परन्तु तू त्रास क्यों दे रहा है? हे वैज्ञानिक! तेरा त्रास देने का कर्त्तव्य नहीं है। हे वैज्ञानिक! आज जहाँ तू मृत्यु का दण्ड, मृत्यु का मापदण्ड देना चाहता है, वहाँ जीवन का भी तो मापदण्ड देना चाहिए कि जीवन कितना है, जीवन को उद्बुद्ध बनाने के मानो हमने इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया, इससे मानव का जीवन ऊँचा बनेगा। परन्तु वह भी तो यन्त्र होने चाहिए। जहाँ आग्नेय अस्त्र हैं, अग्नि प्रचण्ड हो रही है, वहाँ मानो वरुणास्त्र, शान्त होने वाले भी होने चाहिए। परन्तु देखो, इस

प्रकार मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कई काल में यह वाक्य प्रगट कराया है।

आधुनिक विज्ञान और भस्मासुर

आधुनिक काल का विज्ञान कैसा है। आधुनिक काल का विज्ञान ऐसा है, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गाथा वर्णन करते रहते हैं, वह गाथा मुझे भी स्मरण आती रहती है। एक समय, भगवान् शिव अपने आसन पर विद्यमान थे। क्योंकि शिव-विज्ञान में रक्त रहते थे, विज्ञानवेत्ता थे। मानो देखो, जब वह विज्ञानवेत्ता थे तो उनके द्वारा भस्मासुर आ गएं और भस्मासुर ने मानो उनके द्वारा एक मानो देखो, कणु-अस्ति था, एक मानो देखो, यन्त्र था और वह भुजों में मानो देखो, पारित वस्तुत होता था, जब उसको मानो उन्होंने प्रदान किया कि महाराज! इसको मुझे प्रदान कर दीजिए। जब वह मानो वह यन्त्र प्रदान कर दिया वह कौड़ी-जुड़े रूप में, कड़े के रूप में मानो देखो, उन्होंने अपने भुज में अर्पित कर लिया, मानो उसे धारण कर लिया। धारण करने पश्चात् उसमें यह विशेषता थी कि यदि वह सिर, देखो, वह सिरों के ऊर्ध्वा भाग में गति कर जाएं मस्तिष्क के ऊर्ध्वा भाग में, तो वह भस्म हो जाएगा। मानो देखो, उस यन्त्र में यह विशेषता थी, उस कड़े में यह विशेषता थी।

एक समय, मानो देखो, भस्मासुर के मन में बहुत समय के पश्चात् यह आ कया कि मैं महाराजा शिव को भस्म कर सकता हूँ और मेरे हृदय में यह अमृती आनी चाहिए कि यह जो पार्वती है, यह सती है, यह मानो मेरी अर्धांगिनी बन करके रहे। ऐसा जब भस्मासुर के मन में विचार आया तो मानो देखो, उन्होंने एक समय महाराजा शिव से कहा महाराज! मैं आपको, इससे मानो आपको भस्म करूंगा अपने भुजों से। मैं पार्वती को अपनाना चाहता हूँ। यदि मुझे अर्पित नहीं करोगे तो मैं आपको भस्म करूंगा। मेरे प्यारे! पाप ब्रहे मानो यह वाक्य बड़ा विचित्र बन गया। महाराजा शिव ने विचारा, यह तो मर्यादा का विनाश होने जा रहा है। अब क्या करें? उन्होंने वहाँ से गमन किया। वह महाराजा विष्णु के द्वार पर पहुँचे और विष्णु से कहा कि महाराज! मानो देखो, भस्मासुर का यह कथन है और मैं नष्ट हो जाऊंगा। यह मर्यादा का विनाश हो रहा है। इस मर्यादा की रक्षा होनी चाहिए। महाराज विष्णु ने कहा कि महाराज! आप ब्रह्म के द्वार जाईएं। वह बुद्धिमान हैं, ब्रह्मवेत्ता हैं, वह इसका निर्णय देंगे। जब ब्रह्मवेत्ता के द्वारा ब्रह्म के द्वार पर पहुँचे तो ब्रह्मा जी ने शिव का स्वागत किया और चरणों की वन्दना करके बोले कहो, भगवन! आप तो बड़े मानो ह्रास में हो रहे हैं, इसके मूल में क्या है? आप किसी भी काल में हृस नहीं होते हो। आज कैसे हृसता आ रही है? उन्होंने कहा मैं क्या करूं, महाराजा भस्मासुर को मैंने यह एक मानो कड़वा प्रदान कर दिया था और वह यन्त्रों की प्रतिभा है और वह मानो देखो, मस्तिष्क के ऊपरले भाग में जा करके भस्म कर देता है तो इसलिए मुझे ही वह भस्म करना चाहता है, पार्वती को अपनाना चाहता है, क्योंकि यह मर्यादा का विनाश है।

मेरे प्यारे! देखो, ऐसा प्रतीत है कि महाराजा! शिव ने मानो देखो, जब यह कहा तो महाराजा ब्रह्म ने, ब्रह्मवेत्ता ने कहा कि महाराज! यह तो बड़ा सहज है, आप इस वाक्य को मानो देखो, माता पार्वती से क्यों नहीं उच्चारण कर रहे हैं? वह तुम्हें कोई युक्ति प्रगट करेगी। तो मानो देखो, उन्होंने वहाँ से गमन किया और पार्वती के द्वारा विद्यमान हो गये। पार्वती बोती कि महाराज! आप इस प्रकार क्यों हृसता में हैं? उन्होंने कहा, देवी! तुम्हें प्रतीत नहीं है? महाराजा भस्मासुर ने यह घोषणा की है कि मैं शिव जी को भस्म करूंगा और पार्वती को अपनाना चाहता हूँ। उन्होंने कहा, प्रभु! इसकी युक्ति तो बड़ी सहज है। मानो देखो, मेरा और भस्मासुर का, दोनों का नृत्य हो जाना चाहिए और जहाँ मेरा भुज जाएगा, वहाँ भस्मासुर का अवश्य जाएगा वह मस्तिष्क के ऊपरले भाग में पहुंचेगा, तो वह स्वतः भस्म हो जाएगा।

मानो देखो, सती ने जब यह वाक्य कहा तो वह वाक्य महाराजा शिव को स्वीकार हो गया। तो उन्होंने

महाराजा भस्मासुर से कहा हे भस्में! आओ, देखो, तुम, मानो देखो, पार्वती और तुम्हारा दोनों का मैं नृत्य दृष्टिपात करना चाहता हूँ। तो मानो देखो, उस समय दोनों ने नृत्य किया और जब नृत्य होने लगा तो जहाँ पार्वती का भुज जाता, वहीं नृत्य में उनका जाता तो मानो देखो, भस्मासुर को जो ऊपरले मस्तिष्क के ऊर्ध्वा भाग में भुज पहुंचा तो वह स्वतः भस्म हो गया। तो यही दशा आधुनिक काल के समाज की है, आधुनिक काल के विज्ञान की है, जो मैं दृष्टिपात करता हूँ। तो पूज्यपाद गुरुदेव ने यह गाथा मुझे बहुत पुरातन काल में प्रगट की थी कि मानो देखो, विज्ञान अपने को ही, मानो देखो, अपने ही यन्त्र को भस्म करना चाहता है, अपने में ही भस्म होने के लिए तत्पर हो रहा है। ऐसा मानो देखो, मुझे दृष्टिपात हो रहा है। आज मैं विज्ञान के वांगमय में तो नहीं जाना चाहता हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव को मुझे यह प्रगट कराना है कि आधुनिक काल का मानव मानो देखो, त्रास देता है समाज को, सामाजिक-ह्रासता उससे हो रही है और यह विचारता है कि विज्ञान का क्या बनेगा? परन्तु मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को पूर्व भी कहा, आज भी मुझे यह वाक्य पुनः से स्मरण आ रहे हैं कि विज्ञान मानो देखो, अपनी स्थलियों पर विचित्र रहता हे और वह मानो मानव को नष्ट करने में लगा हुआ है। परन्तु देखो, मानव इस प्रकार नष्ट नहीं हुआ करता है। यह तो विज्ञान है। परन्तु विज्ञान अपने में अधूरेपन में रहता है विज्ञान में विडम्बना, अभिमान जागरूक हो जाता है और स्वतः विज्ञान अपने आप में समाप्त हो जाता है। यह परम्परा का एक समय-प्रताप कहलाता है। राजा रावण के राष्ट्र में पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा, कितना विज्ञान था, जो अभी तक वह राजा रावण की भांति विज्ञान ईकाई में भी नहीं पहुंचा है। आधुनिक काल का विज्ञान ईकाई में भी नहीं है, मानो देखो, पुरातनकाल के विज्ञान के आगे।

रक्तभरी क्रान्ति का कारण

आज मैं जब इन वाक्यों का उच्चारण करता हूँ, तो मेरा हृदय विडम्बनित हो जाता है। हे राजन! तू अपने राष्ट्र को ऊँचा बना। परन्तु एक राजा का वैज्ञानिक मानो चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, या मंगल की यात्रा कर रहा है, राष्ट्र में रक्तभरी-क्रान्ति के अवशेषों का जन्म हो रहा हैं तो वह जो विज्ञान है, चन्द्रमा में जाने वाला जो यन्त्र है, मानो वह राजा के राष्ट्र में शान्ति को स्थापित नहीं करेगा। सबसे प्रथम राष्ट्र का कर्त्तव्य है कि वह अपने राष्ट्र में शान्ति की स्थापना करे और शान्ति उस काल में आती है, मानो देखो, जब प्रभु को एकोकी वचन में मानो उच्चारण होने लगता है। धर्म एक है, नाना धर्म नहीं कहलाते हैं। जब राष्ट्र नाना धर्म उच्चारण करता है, तो वही मानो देखो, निन्दनीय दशा बन जाती है, निन्दनीय एक विचार बन जाता है। हमारा क्योंकि धर्म तो एक ही है, वह नाना धर्मो में क्यों प्रवेश कर रहा है। जब नाना धर्मों को उच्चारण करने वाला राजा जो तो रक्तभरी-क्रान्ति अवश्य आयेगी। हे मानव! इसे कोई भी शान्त नहीं कर सकता।

रूढ़ि-निराकरण

राजा को चाहिए कि बुद्धिमानों के सम्मेलन होने चाहिए, और मानो देखो, जिस रूढ़ि का जो प्रर्वतक है, उसके द्वारा मानो देखो, शास्त्रीय विचार होना चाहिए। दर्शनों की आभा में, विज्ञान में उसको रक्त करके विज्ञान के मार्ग से हो करके जो मानो ऊर्ध्वा में गति करने वाला एक नृत्य हैं। तो मानो देखो, इस प्रकार का जब राष्ट्र, अपने राष्ट्र को शान्ति और महानता में ले जाना चाहता है तो उसके द्वारा एकोकी वाक्य है, एकोकी क्रियाकलाप हे कि वह मानो रूढ़ियों को न पनपने दे। यहाँ जितनी भी रूढ़ि होगी राजा के यहाँ, अशांति का कारण बन करके रहेगी। यह परम्परा में भी कई राष्ट्रों में, कई काल में ये रूढ़ियाँ आई हैं। परन्तु आज मैं उन रूढ़ियां में तो जाना नहीं चाहता हूँ, मेरा तो केवल एक ही वाक्य है कि रूढ़ियां, रक्तभरी-क्रान्ति का एक मूल कारण बनती है। मैं तो यह कहा करता हूँ कि राजा को, बुद्धिमानों को अपना संरक्षक बना देना चाहिए। जब राजा के बुद्धिमान उसके अंग-संग

रहेंगे और बुद्धिजीवी यौगिक पुरूष रहेंगे, यौगिक पुरूषों को देखो, निर्माणित किया जाएगा। राजा के राष्ट्र में, तो राजा निर्भय रह करके ब्रह्मावेत्ता बन करके वह मानो भ्रमण करेगा। जब तक राजा को मृत्यु का भय रहेगा, वह राजा राष्ट्र का पालन नहीं कर सकता। मानो देखो, यह परम्परा का शब्द है। हमारे यहाँ राजा देखो, परम्परागतों में मैंने दृष्टिपात किया है, पूज्यपाद की अनुपम कृपा से, राजा रात्रि-समय प्रजा के दुःखो को मानो श्रवण करते रहते थे और वह श्रवण करके उनको प्रातःकालीन उनके दुःखो की चर्चा करके उनको निमन्त्रण दिया करते और यह कहते कि दुःखित है, परन्तु उसक दुःखो का निवारण, उनकी मानो दुःखद आभाओं का निवारण करने वाला एक राजा ही होता है। परन्तु राजा इतना पवित्र होना चाहिए कि प्रजा में शान्ति और मानवता की स्थापना हो जाएं।

आज मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा। मुझे बहुत पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा राजाओं के यहाँ, मानो देखो, सुनीति राजा के यहाँ भी जाने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। जो राजा इतना बुद्धिमान है, याग कर रहा है, याग में प्रसन्न हो रहा है, परन्तु यह परीक्षा ले रहा है कि यह इतना बुद्धिमान है, या नहीं हैं। इस पदाधिकारी का इसको अधिकार है अथवा नहीं। आज जब अनधिकार-चेष्टा हो रही है, वर्तमान में वह अनधिकार चेष्टा ही अन्धकार के मूल में ले जा रही है, प्रजा को।

यह आज का वाक् समाप्त होने जा रहा है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा, परन्तु देखो, मेरा तो मन्तव्य सदैव एक ही रहता है, हे यज्ञमान! तेरे जीवन की प्रतिभा महान् बनी रहे। गृह के सदुपयोग, द्रव्य का सुदपयोग हो करके देवताओं का भोज बनता रहे। वायुमण्डल में पवित्रता होने से तेरे शब्द द्यौ-लोक को प्राप्त हो जाएं। परन्तु ऐसी मेरी सदैव कामना रहती है। उसके हृदय में अपने हृदय का सामंजस्य करने वाला मानो अपनी आभाओं में मैं यह उच्चारण करता रहता हूँ, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे! म्हान् और पवित्रता की वेदी पर अपने जीवन की ऊर्ध्वा में गति में ले जाने का प्रयास कर! और अब मेरा आज का विचार यह समाप्त।

पूज्यपाद गुरुदेवः-मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मेरे प्यारे महानन्द जी ने मानो राष्ट्र के हृदय में इनकी एक विडम्बना बनी हुई है। मुझे तो यह प्रतीत नहीं की वर्तमान का काल, राष्ट्र किस प्रकार की आभा में है? परन्तु इन्होंने पुरातन काल का जो राष्ट्र अथवा उसको जो रूपन्तर किया है, उसको रूपक के रूप में जो उद्धृत किया है, वह प्रायः ऋषि-काल में रहा है। मेरे प्यारे महानन्द जी ने बहुत युक्ति संगत कहा कि राष्ट्र में रूढ़िया नहीं होनी चाहिए। यह परमपिता के नामों की जो नाना रूढ़िया बन जाती हैं, वे अपने में स्वाभिमान चाह करके अन्धकार में प्रवेश हो जाती हैं। तो इस प्रकार यह पुरातन काल में भी राष्ट्रों में ऐसा होता रहा है और जिस काल में हुआ, वह राष्ट्र अन्धकार में प्रवेश कर गया है। तो आज का विचार, अब यह समाप्त होने जा रहा है। हे यज्ञमान! जैसा पुत्र ने कहा है, मेरा तो यही आशय है कि तेरे जीवन का सौभाग्य में परिणित रहे! आज का विचार समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। श्री वैजनाथ अबरोल, पंजाबी बाग, दिनांक १४-०४-१९८५

४ मृत्युंजयी दर्शन २९-०१-१९८८

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं और जितना भी यह जड़ जगत् अथवा चैतन्य-जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। हम उस परमपिता परमात्मा की प्रायः महिमा का वर्णन करते रहते हैं, क्योंकि प्रत्येक के द्वारा हम उस महामना का वर्णन करते रहते हैं, क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र के द्वारा हम उस महामना जो हमारा पुरोहित है अथवा हमारा निर्माण करने वाला है, और जगत् का नियंता है, उस महान् प्रभु की महिमा का गान गाते चले जा रहे थे।

आपोमयी ज्योति

आज का हमारा वेदमन्त्र उस आपोमयी ज्योति की महिमा का वर्ण कर रहा था, क्योंकि आपोमयी जो ज्योति है, यह मानवीयता में सदैव निहित रहती है, और प्रत्येक मानव उस आपोमयी ज्योति के आंगन में सदैव निहित रहता है। मानो देखो, आपोमयी एक अनुपम ज्योति है जो ज्योति, मुनिवरो। माता के गर्भ-स्थल से ले करके और देवत्त्वम् क्या सूर्य और द्यौ-लोक तक वह ज्योति ही बनी रहती है। तो विचार क्या? मानो देखो, विज्ञान के वांग्यम हमें भी वह प्रायः ज्योति नई बनी रहती है। तो आज का हमारा वेदमन्त्र हमें आपोमयी ज्योति की आभा का प्रायः दिग्दर्शन करा रहा था और यह हमें प्रेरणा प्राप्त हो रही थी कि महान वह जो प्रजापति है जो स्वामीतव है, हम उस महान् देव की महिमा का गुणगान अथवा उसके गुणों की प्रतिभा में हम सर्दव रत्त रहें।

मानवीय ज्योति

जहॉं हमारा वेदमन्त्र यह कह रहा है, वहाँ देव का मन्त्र, बेटा! विष्णु की याचना भी कर रहा है। वह विष्णु, जो हमारा कल्याण करने वाला है, जो मानो देखो, रक्षक है, हम उस महान् विष्णु को अपने अन्तर्हृदय में धारण करते चले जाएं-जिससे, बेटा! हम अपने में मानवीय ज्योति को अपनाते हुए सागर से पार हो जाएं।

आत्म-ज्योति

मेरे प्यारे! देखो, तीसरा विषय ब्रह्मण आत्मा लोकं बह्मेक वर्चो देवाः वह जो आत्मा है वह वर्चोमयी देवत्त्व को प्राप्त होती रहती है जो मानो देखो, आत्मा की ज्योति में ज्योतिवान् रहते हैं। और मानो शरीर में जब वह ज्योति नहीं रहती तो मानव एक शून्यता को प्राप्त हो जाता है।

भौतिक-आध्यात्मिक उड़ान

आओ,मेरे प्यारे! मैं इस सम्बन्ध में भी विशेष विवेचना नहीं करना चाहता हूँ। आज का हमारा वेदमन्त्र दो प्रकार की आभाएं हमें प्रकट कर रहा था-एक वह मानो देखो, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता है और दूसरा भौतिक विज्ञानवेत्ता है, बेटा! जो अपने में भौतिक उड़ाने उड़ते रहते हैं। हमारे यहाँ, उड़ान भी दो ही प्रकार की होती हैं-एक उड़ान जो हमारे यहाँ भौतिक विज्ञानमयी कहा जाता है, जिसमें अणु और परमाणु और त्रेसेणु के ऊपर प्रायः विचार-विनिमय होता रहता है और द्वितीय मानो आध्यात्मिकवाद है, जिसमें आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता आत्मा के ऊपर प्रायः, अपने में चिन्तन करते रहते हैं और यह विचारते रहते हैं कि हम आत्मवत् बन जाएं, हम आत्मामयी ज्योतिवान् बन करके मानो उस परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाएं।

बेटा! एक वह मानव है, एक वह मनस्तव कहलाते हैं,जो आत्मा के ऊपर आत्मवान बनना चाहते हैं। तो

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें आत्मवेत्तओं की चर्चा करने के लिए तो नहीं, केवल संक्षिप्त परिचय देने के लिए आया हूँ। आत्मा ही, बेटा! देखो, ज्योतिवान् कहलाता है, और यही संसार में मानो प्रकाश का द्यौतक बना हुआ है। मेरे प्यारे! इससे पूर्व काल में हमने यह वर्णन करते हुए कहा था कि प्रत्येक मानव मृत्यु से मानो दूरी होना चाहता है, और अपने अन्तर्हृदय में यह विडम्बना लगी रहती है कि हम मानो देखो, आत्मवान बन करके सागर से पार हो जाएं, अन्धकार हमारे समीन न रहे। अन्धकार से मानव दूरी होना चाहते हैं।

जगदग्नि-आश्रम में आत्म-चर्चा

मेरे प्यारे! आओ, आज मैं तुम्हें मानो एक क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ, बेटा!् एकान्त स्थलियों में विद्यमान हो करके ऋषि-मुनि, बेटा! आत्मा की प्रायः चर्चा करते रहे हैं और मृत्यु के ऊपर विचार-विनिमय करते रहे हैं। तो मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आ रहा है, जिस काल मे, बेटा! देखो, महात्मा जमदग्नि के यहाँ ऋषि-मुनियो का एक समूह एकत्रित हुआ जिस समूह मे, बेटा! देखो, चाक्राणी गार्गी, सोमकेतु ऋषि महाराज, देवर्षि नारद और श्वेतकेतु मुनि, महर्षि विभाण्डक, महर्षि वैशम्पायन और महर्षि प्रवाहण, जानो ही मानो देखो, अन्धकार और मृत्यु के रूप में वर्णन किया गया है। परन्तु इसमें श्वेतकेतु मुनि बोले - हे दिव्या! मानो यह हमारे विचार में नहीं आ रहा है, क्योंकि शरीर और आत्मा तो विच्छेद हैं। यहाँ प्रसंग यह है कि यह मृत्यु क्या है? अन्धकार किसे कहते है? जो नाना प्रकार की आभा में सृष्टि के प्रारम्भ से मानव लगा हुआ है, चिन्तन और मनन करता रहता है। तो मेरे प्यारे! वह चाक्राणी गार्गी मौन हो जाती है।

मृत्यु पर महर्षि पिप्पलाद का निर्णय

मेरे प्यारे! बहुत समय हो गए, सभा शून्य है। विचारा नहीं जा रहा है। महर्षि पिप्पलाद मुनि महाराज उपस्थित हुए और पिप्पलाद मुनि ने कहा कि - मेरे विचार में तो यह आता है कि मृत्यां ब्रह्मः अभावां ब्रीकि वृत्तं देवाः और उन्होंने वेद का, न्यौदा में से मन्त्र उच्चारण किया और वह वेदमन्त्र यह कह रहा था कि यह मृत्यु का अभाव हैं, यह मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नहीं है। मानो देखो, मृत्यु का अभाव है। अन्धकार का नाम मृत्यु है। मेरे प्यारे! देवर्षि नारद मुनि ने इस वाक्य की सराहना की और देखो, इसका उद्घोष किया और उद्गीत गाने लगे कि वास्तव में मृत्यु कोई वस्तु नहीं है।

मेरे प्यारे! इसी विचार को ले करके उन ऋषि-मुनियो में नाना प्रकार के प्रसंग उत्पन्न हुए, परन्तु वह सब दमन होते रहे। मुनिवरों! देखो, विचार होते-होते, मुनिवरों! देखो, सांयकाल का समय हो गया, सन्धिकाल आ गया, सन्धिकाल में ऋषि-मुनि अपने-अपने कक्षों में जा पहुंचे, परन्तु महर्षि पिप्पलाद मुनि को बहुत समय हो गया था आश्रम को त्यागे, परन्तु निकटतम् ही आश्रम था वह, वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते हुए, मुनिवरों! देखो, जैसे ही उन्होंने आश्रम में प्रवेश किया तो उनकी पत्नी शकुन्तका महर्षि शिलभ, महर्षि दालभ्य, आदि, आदि ऋषि-मुनियो का, बेटा! इसमें महर्षि पिप्पलाद मुनि विद्यमान थे। तो महर्षि पिप्पलाद महाराज अपने आसन् पर विद्यमान थे।

मृत्यु क्या है?

महात्मा जमदग्नि मुनि ने, बेटा! एक मन्त्र उच्चारण किया और वह वेदमन्त्र कह रहा था यशस्वं ब्रह्मं मृत्यु लोकां वाचन्नमं ब्रह्मः वृत्तं लोकः, मेरे प्यारे! वृत्तं लोकः की जब चर्चा आई तो उस समय जमदग्नि ने कहा- हे ब्रह्मवेत्ताओं! हे ब्रह्म निष्ठो! आज तुम इसलिए इस आसन् पर एकत्रित हुए हो, परन्तु एक वेद का मन्त्र यह कहता है, हमें मृत्यु से पार होना है और मृत्युंजयी बनना है, क्योंकि प्रत्येक मानव मृत्यु का त्रासी रहता है और मृत्यु से भयभीत होता रहता है। प्रत्येक मेरी प्यारी माता अपने पुत्र का जब विच्छेद हो जाता है, तो व्याकुल होती है, परन्तु

देखो, अपने में व्याकुल बनी रहती है। तो इसमें विचारना यह है कि, यह मृत्यु क्या है? क्या मानव देखो, मृत्यु के आंगन में सदैव रत्त रहता है, और नाना प्रकार के अनुष्ठान करता रहता है, उन अनुष्ठानों में लगा रहता है कि मैं मृत्यु से पार हो जाऊं परन्तु देखो, आनन्द की पिपासा में वह सदैव विचरता रहता है।

मेरे पुत्रो! देखो, वेद का आचार्य यह कहता है-यह मृत्यु क्या है? मेरे प्यारे! देखो, ऋषि-मुनियो में इस प्रकार का जब विचार आया तो एक-दूसरे के मुखारबिन्दु को दृष्टिपात करने लगे। तो चाक्राणी गार्गी उपस्थित हुई और चाक्राणी गार्गी ने कहा- हे ब्रह्मवेत्ताओं! मैं भी दो शब्द उच्चारण कर सकती हूँ? ऋषि-मुनियो ने कहा- उच्चारण करो। गार्गी ने कहा- मेरे विचार में तो यह आता हे कि शरीर और आत्मा का विच्छेद बड़ी व्याकुल हो रही थी। ऋषि ने कहा- देवी! तुम व्याकुल क्यों हो रही हो? उन्होंने कहा- प्रभु! मेरा एक सात वर्षीय पुत्र था, वह मृत्यु को प्राप्त हो गया है। महर्षि पिप्पलाद मुनि बोले- हे देवी! तुम्हें यह प्रतीत है कि ब्रह्मवेत्ताओं के समाज में से मेरा आगमन हो रहा है, और में ब्रह्मवेत्ताओ के आगमन मे से मानो यह निर्णय कर चुका हूँ कि मृत्यु अपने में कोई वस्तु नहीं है, यह केवल अभाव और कृताक माना गया है।

शरीर क्या है?

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि पिप्पलाद ने जब यह वाक्य कहा तो देवी ने कहा- प्रभु! चलो मैंने यह वाक्य स्वीकार कर लिया कि मृत्यु का अभाव स्वीकार करते हैं, परन्तु यह जो मेरा शरीर है, यह क्या है? ऋषि ने कहा - देवी! यह तो परमाणुओं का संघात हे, मानो देखो, परमाणुवाद है, इसमें यह मानो देखो, बलवती होते रहते हैं, अपने-अपने समय पर अपनी-अपनी प्रतिभा में सदैव रत्त रहते हैं। तो देवी! मैं यह स्वीकार करता हूँ कि यह अभावाकृतक माना गया हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह वर्णन किया तो उन्होंने कहा- प्रभु! मेरा यह शरीर परमाणु का संघात है? उन्होंने कहा- देवी! परमाणु का संघात है। इन परमाणुओं को स्थिर करने वाली मानो देखो, इस शरीर में आत्मा है। आत्मा इन परमाणुओं को संगठित करती रहती है।

शरीर निर्माण की पूर्व-स्थिति

मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि ने जब ऐसा कहा तो शकुन्तमा ने, देवी ने कहा- हे प्रभु! मैं जानना चाहती हूँ, जब यह परमाणु मेरे शरीर में इस रूप में नहीं होते तो यह परमाणुवाद कहाँ रहता है? उन्होंने कहा- हे देवी! यही परमाणु जब तुम्हारा शरीर इस रूप में नहीं होता तो यह परमाणुवाद ही मानो तुम्हारे उस माता के गर्भस्थल में निहित होत हैं। इन्हीं परमाणुओं से तुम्हारे मानव-शरीर का निर्माण होता रहता है।

निर्माणवेत्ता

वह निर्माणवेत्ता जब निर्माण करता है, तो मेरी भोली माता को यह प्रतीत नहीं होता कि कौन निर्माण कर रहा है? कौन निर्माणवेत्ता है? मेरे पुत्रो! देखो,- कहीं इसमें बुद्धि का निर्माण होता है, कहीं आज्ञा-चक्र का मानो देखो, कहीं सूचना-केन्द्रों का निर्माण होता रहता है। बुद्धि भी एक प्रकार की नहीं है, मानो बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा, और प्रज्ञा के रूप में परिणत होती रहती है। तो हे दिव्या! मानो देखो, वह निर्माण करने वाला विश्वकर्मा निर्माण कर रहा है। माता के शरीर में ही, गर्भस्थल में, जब इस मानो शिशु का निर्माण होता है, तो बहत्तर करोड़, बहत्तर लाख दस हजार दो सौ दो (७२,७२,१०,२०२) नाड़ियों का निर्माण हो जाता है। वह मेरा प्यारा प्रभु कितना निर्माणवेत्ता है। कितना भव्यतम माना गया है। वह निर्माण करने वाला है तो वह विश्वकर्मा कहा जाता है। तो मानो तुम्हारा शरीर इस रूप में नहीं होता तो माता के शरीर में निर्माण होता रहता है। निर्माणवेत्ता निर्माण करता रहता है, वह विश्वकर्मा है, वह जनिता है, वह आनन्दवत् कहलाया गया है।

वीरांगना और वीरत्त्व में ब्रह्मवर्चस्वी देवत्त्व

मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार निर्णय दिया तो देवी ने कहा - प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ, जब मानो यह माता का गर्भाशय नहीं होता, तो यह परमाणुवाद कहाँ होता है। उन्होंने कहा- हे देवी! जब माता का गर्भाशय नहीं होता तो यही परमाणुवाद है, जो मानो देखो, एक वीरांगना के रूप में, एक वीरत्त्व के रूप में रहता है। हे देवी! जो इन परमाणुओं की रक्षा करने वाली वीरांगना है, वह मानो देखो, वीरांगना बन करके, दिव्या बन जाती है और मानो जो इन परमाणुओं की रक्षा करने वाला वीरत्त्व बन जाता है, ब्रह्मचारी बन करके ब्रह्मवर्चोसि बन करके उस परब्रह्म परमात्मा की महिमा में सदैव रत्त रहता है। वही तो देवताओं की सभा में सुशोभनीय रहता है, जो देवतव कहलाए गएं हैं।

देवत्त्व और याज्ञिक की बन्धन-मुक्ति

तो मेरे प्यारे! जो यज्ञ में हवि प्रदान करने वाले, जो देवता कहलाते हैं, तो देवत्त्व मानो देखो, अपने ब्रह्मरन्ध्र से ले करके मूलाधार तक या यूँ कहो मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक मुनिवरों! देखो, अपने नाना प्रकार के बन्धनों से मुक्त होता हुआ, नाना वृत्तियों में रत्त होता हुआ, वह अपने में महान् और पवित्र बनता रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन कराया ऋषि ने जब इस प्रकार कहा वही देवता है, जो ब्रह्मवर्चोसि कहलाता है। जो ब्रह्मचारी है अपनी आभा में निहित रहने वाला है, मानो देखो, वही तो मृत्यु से पार होता है वह मृत्युजंयी बन जाता है।?

चाक्राणी का देवश्रावी गान

मानो! देखो, एक वीरांगना है अपने भयंकर वनों में उद्गान गा रही है। मानो देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, जब चाक्राणी गार्गी, बेटा! वेदों का गान गाती रहती थी, जब मानो वह जटा-पाठ, धन-पाठ, माला-पाठ में उदान में जब गान गाती रहती थी, तो बेटा! एक पंक्ति में सिंहराज विद्यमान हैं, एक पंक्ति में मृगराज हैं, मानो सर्पराज भी उनके शब्दों को ग्रहण करते रहते। तो विचार यह आता रहता है, जब प्रभु का जिज्ञासु, वीरांगना बन करके, दिव्या अपने में गाना गाना प्रारम्भ कर देती हैं, तो बेटा! देवताजन भी उसको श्रवण करते रहते हैं, उसको अपने में धारयामि बनाते रहते हैं। तो विचार आता रहता है, बेटा! जब मैं इस आभा में रत्त होने लगता हूँ, तो विचारों में एक मौलिक तत्त्व की आभा का भान होने लगता है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने जब इस प्रकार वर्णन किया, उन्होंने कहा- वही योगेश्वर तो साधना में परिणत हो जाता है। आत्मा व आत्मवान बनने के लिए तत्त्वर हो जाता है।

वीरत्त्व और अन्न

मेरे प्यारे! देखो, मुझे इस अस्वत ब्रह्म अन्नादं भूतम् मेरे प्यारे! देवी ने एक वेदमन्त्र उच्चारण किया और कहा कि- प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ, जब यह वीरांगना और वीरत्त्व नहीं होता तो यह परमाणुवाद कहाँ रहता है? उन्होंने कहा- हे देवी! जब यह वीरांगना और वीरत्त्व नहीं होता, यही परमाणुवाद देखो, हमारे यहाँ अन्न में विद्यमान रहता है। जब सृष्टि के पिता ने इस संसार का सृजन किया अथवा निर्माण किया, तो मुनिवरों! देखो, सात प्रकार के अन्न को उत्पन्न किया।

दो प्रकार का अन्न

एक अन्न तो बेटा! देखो, अप्रतिम् कहलाता है। मेरे पुत्रो! प्रभु का कितना विज्ञान है, कितनी प्रतिभा कहलाई जाती है, एक ही पौधा है, उस पौधे पर दो प्रकार का अन्न कहलाता है, एक अन्न मानव पान कर रहा है, एक अन्न को पशु पान कर रहा है। वाह! रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानवेत्ता है! मानो एक ही पौधा है, उस पर दो प्रकार का अन्न है, एक अन्न को मानव पान कर रहा है, वह ओज वे तेज की उत्पत्ति कर रहा है, परन्तु दूसरा जो

अन्न है उसको पशु पान कर रहा है! वह पय दे रहा है, मानो देखो, पय दे करके और वह मानव को उद्गीत गाता हुआ प्रत्यों में रत्त कराता रहता है।

मेरे प्यारे! यह दो प्रकार का अन्न है, एक अन्न को मेरी प्यारी माता भोजनालय में तपाती है, एक अन्न को पशु पान करके, बेटा! दुग्धाहार करा रहा है। मेरे प्यारे! देखो, गौ नाम का पशु है,मानो दुग्धाहार करा रहा है। कैसी विचित्रता है। मेरे प्यारे प्रभु का कैसा विज्ञान गुथा हुआ है। एक ही पौधा है, उसमें दो प्रकार का अन्न है, बेटा! उसी का मानव पान कर रहा है, तेजस्वी बन रहा है, उद्गारों का उद्घोष कर रहा है। वह बड़ी अनुपम सत्ता प्रदान हो रही है। मेरे प्यारे! देखो, दूसरा अन्न जब वह पशु अपने में ग्रहण करता है, वह नाना प्रकार की कृतियों को जन्म देने वाला है।

तीसरा अन्न-हूत

मेरे प्यारे! देखो, वह दो प्रकार का अन्न है और तीसरा जो अन्न है, वह हूत कहलाया गया है। हूत उसे कहते हैं, जहाँ यज्ञशाला में विद्यमान हो करके यज्ञमान याग कर रहा है, वह हूत कर रहा है, आहुति दे रहा है। वह अग्नि के मुखारबिन्दु में, बेटा! आहुति देता हुआ अग्न्याधान कर रहा है और वह देवताओं का जो मुख है, वह अग्नि कहलाया गया है, अग्नि के मुखारबिन्दु में, बेटा! वह आहुति दे रहा है। वे देवत्त्व उसको अपने में प्रायः ग्रहण करते रहते हैं। तो मेरे प्यारे! कैसा मेरे देव का यह विधान, यह वृत्तियाँ कहलाई गई हैं। वाह! रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानवेत्ता है! एक अग्नि के मुखारबिन्दु में जाने से सर्वत्र देवत्त्व प्रसन्न हो रहे हैं। देवता अपने में गृहीत बन रहे हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब हूत होता है तो मानो देखो, वे देवता प्रसन्न होते हैं, उससे वृष्टि प्रारम्भ होती है और, मुनिवरों! देखो, धीमी-धीमी जब वृष्टि प्रारम्भ होती है, यह पृथ्वी नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बन जाती है और नाना प्रकार के व्यंजनों में रत्त हो करके, बेटा! यह मानवत्त्व को क्या, यह ब्रह्मकृतियों को ऊर्ध्वा में रत्त करा देती है।

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, संक्षिप्त परियच दे रहा हूँ। इन वाक्यों का विस्तार नहीं देना चाहता हूँ, केवल परिचय और वह परिचय भी, मुनिवरों! देखो, सम्भव ब्रहः, मैं आज तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूँ, और वह परिचय क्या है-पुत्रो? मेरे प्यारे! देखो, यज्ञनं ब्रह्मे यह तीसरा अन्न हुआ, जिसे हम हूत कहते हैं। जिस यज्ञशालामें यज्ञमान, होता, उद्गाता और अध्वर्युः वि?मान हो करके, बेटा! याग कर रहे हैं, वे देवत्त्व को देखो, प्रसन्न कर रहे है।

चौथा अन्न-प्रहूत

मुनिवरों! देखो, ऋषि ने कहा ब्रह्मण वृत्तं ब्रह्मः वायन्नमः देवः वेद के आचार्य ने कहा- देवी तीसरा जो अन्न है, मानो वह हूत है और चतुर्थ जो अन्न है वह, मुनिवरों! देखो, वह अन्नं ब्रह्मः वह प्रहूत कहलाया जाता है। हमारे यहाँ पुरोहितजन जब विद्यमान हो करके समाज को ऊँचा बनाते हैं, यह पुरोहितजन मानो देखो, राष्ट्र को ऊँचा बनाते हैं। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आ रहा है, मैं तुम्हें त्रेता के काल की वार्त्ता प्रकट करा रहा हूँ, मेरे प्यारे! देखो, एक समय महाराज वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ बेटा! एक सभा उपस्थित हुई और जिस सभा में यह निर्णय दिया गया, विश्वामित्र को यह कहा गया कि तुम धर्नुयाग करो और धर्नुयाग में मानो देखो, इस राष्ट्र को ऊँचा बनाओं, राष्ट्र की प्रतिभा और राजकुमारो के द्वारा वह याग सम्पन्न होना चाहिए। तो बेटा! मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है, महर्षि विश्वामित्र ने, महर्षि वशिष्ठ और माता अरून्धती की आज्ञा पा करके उन्होंने वहाँ से प्रस्थान किया और भ्रमण करते हुए अयोध्या में उनका आगमन हुआ। अयोध्या में अयोध्या वासियों ने कहा- आज यह कैसा नृत्य होने लगा है, जो बिना समय के एक ब्रह्मवेत्ता का आगमन हुआ है। मानो यह कैसा सौभाग्य जागरूक हो

गया है। मेरे प्यारे! देखो, वह राज सभा में राजस्थली पर पंहुचे। तो राजा ने अपने आसन् को त्याग दिया। आसन पर ऋषिवर विद्यमान हो गएं और ऋषि से राजा ने नतमस्तक हो करके कहा- प्रभु! आज बिना सूचना के आपका आगमन क्यां हुआ, मैं इस कारण को नहीं जान सका हूँ। प्रभु! आप मुझे आज्ञा दे देते तो मैं आपको मानो देखो, अपने वाहनों में आप का इस अयोध्या में आगमन कराता। ऐसा कौन-सा कारण है, जो आपका इस प्रकार आगमन हुआ है? महर्षि विश्वामित्र बोले - हे राजन्! तुम्हें यह प्रतीत हो गया होगा कि हम दण्डक वनों में एक धर्नुयाग कर रहे हैं और धर्नुयाग में देखो, तुम्हारे जो राजकुमार हैं, इनके द्वारा हम याग कराना चाहते हैं।

मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा- प्रभु! यह याग करना तो हमारा सौभाग्य है, जो आज मानो तुम धर्नुयाग कर रहे हो, यह तो राष्ट्र के लिए लाभप्रद है, हम सबके लिए भी। मानो देखो, मुझे आज्ञा दो, यह बाल्य तो किशोर हैं और किशोरों से याग की रक्षा नहीं हो सकेगी। मुझे आज्ञा दो, मैं तुम्हारे याग को सम्पन्न कराऊंगा। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा- हे राजन्! देखो, यह राजकुमारों से ही याग को सम्पन्न कराना है। मेरे पुत्रो! राजा ने कहा- प्रभु! यह बाल्य किशोर हैं। ये चर्चाएं हो रही थीं। यह वार्त्ता मानो देखो, राजगृह में भी जा पहुँची। देखो, कौशल्या, कैकेई इत्यादि सब देवियाँ मानो देखो, राजस्थली पर आ पहुंची और ऋषियों के बारी-बारी चरणों को स्पर्श किया और चरणों को स्पर्श करते हुए माता कौशल्या ने कहा - कहो, भगवन्! आगमन कैसे हुआ? उन्होंने कहा- हे ब्राह्मण ब्रहे! मैं यहाँ, मानो देखो, दण्डक वनों में एक याग कर रहा हूँ और वह धर्नुयाग है, उसके लिए मैं दोनों राजकुमारों को चाहता हूँ। क्या मानो देखो, ये राजकुमार हैं, चारों ही राजकुमारों के लिए आया हूँ। क्या मैं अपने याग को सम्पन्न कराना चाहता हूॅ। मेरे प्यारे! देखो, उन देवियों ने कहा- क्या, हे राजन्! तुम राजकुमारों को क्यों नहीं प्रदान कर रहे हो? उन्होंने कहा- देवी! वे भोले, वह मानो बाल्य हैं, किशोर हैं। उन्होंने कहा- हे राजन्! तुम्हें प्रतीत है, यदि हमारे गर्भ से उत्पन्न होने वाला ब्रह्मचारी यदि देखो, ऋषि की आज्ञा का पालन और ऋषि की सेवा नहीं कर सकता, तो मानो यह हमारा गर्भस्थल दूषित हो जाएगा। हे प्रभु! ब्रह्मे लोकां देखो, आप राजकुमारों को देखो, ऋषि को प्रदान कीजिए। मेरे प्यारे! देखो, जब ऐसा वर्णन आया तो उन्होंने कहा- ब्रह्मण ब्रहे, राजकुमारों को ऋषि को प्रदान कर दिया गया।

मेरे प्यारे! देखो, उसका नाम हम पुरोहित कहा करते हैं, यह प्रहूत है, यह चौथा अन्न कहलाता हैं अन्न का अभिप्रायः है, जिसके उद्गार गाने से मानव तृप्त हो जाएं, उसी का नाम अन्न कहा गया है। अन्न का अभिप्रायः यह है कि वायु में भी अन्नाद विद्यमान रहता है, इसलिए ऋषि-मुनि अपने में, बेटा! देखो, एकान्त स्थलियों में वायु का सेवन करते रहे हैं, साधना मे सदैव रत्त होते रहे हैं और उससे अन्नाद को प्राप्त करते रहे हैं। अन्नाद की बड़ी विस्तृत विवेचना हैं, परन्तु देखो, अन्न यहाँ एक व्याख्याता का नाम भी देखो, अन्नाद का स्वामी कहलाया गया है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा- देवी! ब्रह्मऋषि ने जा करके दण्डक वनों में धर्नुयाग का आयोजन किया। धर्नुयाग किया, तो धर्नुयाग का अभिप्रायः यह कि ब्रह्मचारियों को अस्त्रों-शस्त्रों की शिक्षा देने का नाम धर्नुयाग कहा जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब महर्षि विश्वामित्र एक पुरोहित थे, इसीलिए प्रहूत का नाम भी अन्न माना गया है, यह चौथा अन्न कहलाता है। जिससे राष्ट्र और समाज का प्रायः कल्याण होता है, राष्ट्र जिससे ऊँचा बनता है।

साधक के तीन अन्न

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा- यह जो चार अन्न हैं, ये समाज का साझा अन्न कहलाता है, परन्तु देखो, तीन अन्न ऐसे हैं, जो साधक उन तीन अन्नों को अपना करके देखो, आत्मवान बनता है, आत्मा का कल्याण और योगेश्वर और देखो, वह अपने में ध्यानावस्थित हो जाता है। और वह साधना में साधक बन करके साधना में परिणत हो जाता है। तो वह कौन-सा (अन्न) है? वह प्राण, मन और विचार मानो ये तीन प्रकार के अन्न हैं, जो

आत्मवान बनने के लिए हैं।

प्राण

बेटा! देखो, प्राण को जानना है। यह प्राण, हमारे शरीर में दस प्राण बन करके रहते हैं- बेटा! प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान, और पांच उप-प्राण हैं-नाग, देवदत्त, धनञ्जय, कूर्म और कृकल, ये दस प्राण हमारे शरीर में संचालित हो रहे है, मानो क्रियाकलापों में परिणत हो रहे हैं। मानो देखो, इन प्राणों को जानना, यह प्राण क्या-क्या क्रियाकलाप करते हैं? ब्रह्माण्ड की आभा में सदैव निहित रहते हैं।

मन

देखो, यह वहाँ प्राण और देखो, यह मन, यह मन क्या है यह प्रकृति का सबसे सूक्ष्म तन्तु माना गया है। यह प्रकाश से रत्त रहता है।

विचारोत्पत्ति

यह प्राण और मन का दोनों का एकोकीकरण हो जाता है तो विचार की उपलब्धि होने लगती है। वह चिन्तन करता है, वह विचारों में रत्त हो जाता है, वह विचारवान बन करके, विचारों में रत्त हो करके, मेरे प्यारे! देखो, यह प्रत्येक इन्द्रियों का साकल्य बनाना प्रारम्भ करता है।

एकीकृत मन-प्राण और विचारोत्पत्ति

पांच ज्ञानेन्द्रियाँ कहलाती है और पांच ज्ञानेन्द्रियाँ का साकल्य हे, मेरे प्यारे! देखो, नेत्रों का रूप है, और श्रोत्रों का शब्द हैं, और प्राण का सुगन्ध और दुर्गन्ध है। सुगन्ध रहना चाहिए और देखो, त्वचा का स्पर्श है और वाणी का रसोस्वादन है। मेरे प्यारे! देखो, दसों इन्द्रियों के साकल्य को, विषयों को एकत्रित करके जब, मुनिवरों! साकल्य बना करके और वह जो हृदय रूपी मानो यज्ञशाला है, शरीर में, उसमें वह हूत कर रहा है, उसमें आहुति दे रहा है। मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक इन्दियों को जो समावेश होता है, वह मानव के हृदय में होता है, इसीलिए हृदय में ही वह समाधिष्ट हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, हृदय इस ब्रह्माण्ड का कुंज कहलाया गया है, मुनिवरों! देखो, हृदय के प्रत्येक रूप, रस, गन्ध इत्यादि सब उसी में समावेश हो करके साधक, मुनिवरों! देखो, उसमें साधना करने लगता है। और वह साधक बन करके मेरे पुत्रो! देखो, उसमें साधना करने लगता है। और वह साधक बन करके मेरे पुत्रो! देखो, साधना में तत्पर हो जाता है, विचारता रहता है।

बेटा! मैं कहाँ चला गया हूँ विचार देता हुआ। मुनिवरों! देखो, योगेश्वर जब इन पांच ज्ञानेन्द्रियाँ का साकल्य बना करके, सामग्री बना करके, मानो ज्ञान रूपी, जो अग्नि हृदय में अगम्यता में मानो प्रदीप्त हो रही है, उसमें वह समावेश कर देता है। जब समावेश हो जाता हैं, तो योगेश्वर, बेटा! देखो, योगारूढ़ हो जाता हैं। योगारूढ़ हो करके, मेरे पुत्रो! देखो, यह तीन प्रकार का अन्न है, जिससे योगी अपने में समाधिष्ट और मानवीयता में एक साधक बन जाता है।

सात प्रकार के अन्न की लय-स्थिति

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा- हे देवी! यह जो सात प्रकार का अन्न है, यह सृष्टि के पिता ने चार प्रकार का अन्न लौकिक कहलाता है और तीन प्रकार का अन्न आत्मवान बनने के लिए होता हैं मानो देखो, यह अपने में अभ्योदय हो रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा- धन्यं ब्रह्मा कृतं । मेरे प्यारे! देवी ने कहा - प्रभु! यह अन्न भी मैंने स्वीकार कर लिया है, परन्तु मैं यह जानना चाहती हूँ, हे प्रभु! देखो, जब यह सात प्रकार का अन्न भी नहीं होता तो मानो यह अकृतम् परमाणुवाद कहाँ रहता है? उन्होंने कहा- हे देवी! हे दिव्या! तुम बड़ी बुद्धिमान हो।

तुम्हारा बहुत प्रश्न करने का बड़ा गम्भीर अध्ययन है। हे ब्रीही वृत्तः जब यह सात प्रकार का अन्न भी नहीं होता, तो उस समय हम आत्मा के प्रकाशं ब्रह्मः देखो, आत्मा ज्योतिवान रहे यह परमाणुवाद, मानो देखो, कुछ पृथ्वी में रहते हैं, कुछ आपोमयी ज्योति में, जल में रहते हैं, कुछ अग्नि में रहते हैं और इन्हीं परमाणुओं को भ्रमण कराने वाली, गति देने वाली वायु है, और जहाँ वह गतिमान होता है, उसे अन्तरिक्ष कहते हैं।

अविनाशी आत्मा और परमाणु

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने वर्णन कराया कि यह परमाणुवाद मानो देखो, पंचमहाभूतों में निहित रहते हैं। पंचमहाभूतों में निहित रह करके वृत्तियाँ बना करती हैं। हे देवी! जब यह आत्मा इस शरीर को मानो त्याग देता है, तो देवी! देखो, यह शव रह जाता है, मानो देखो, आत्मा अपने संस्कारों को ले करके, मानो देखो, अपने चित्त के मण्डल में प्रवेश कर जाता है। आत्मा तो चित्त के मण्डल में चला गया है और यह ब्रह्मण देखो, यह शव रह जाता है। हे देवी! जब इसे अग्नि में दाह कर देते है तो उस समय अग्नि के परमाणु अग्नि में, जल के परमाणु जल में, पृथ्वी के परमाणु पृथ्वी में और देखो, यह प्राण वायु में और अवकाश अन्तरिक्ष में प्रवेश हो जाता है। तो देवी मैं जानना चाहता हूँ, यह परमाणुवाद का भी विनाश नहीं होता। जब परमाणु और आत्मा दोनों का विनाश नहीं होता, तो देवी! मैं जानना चाहता हूँ, यह मृत्यु है क्या, जिस मृत्यु के आँगन में प्रत्येक मानव दुःखित रहता है? मेरी प्यारी माता दुःखित रहती है। परन्तु यह है क्या? मेरे प्यारे! देखो, विचारा गया है कि यह मृत्यु कोई वस्तु नहीं हैं। आत्मा का ह्रस नहीं होता। परमाणुओं का ह्रस नहीं होता हैं। केवल माता-पिता का जो संकल्प मात्र है, उसका ह्रास हो गया। मानो संकल्प मात्र समाप्त हो गया।

मृत्यु की मृत्यु

मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने वर्णन किया तो देवी मौन हो गई। शकुन्तका से ऋषि ने कहा- देवी! और भी कुछ जानना चाहती हो? क्या मृत्यु तो मेरे विचार में नहीं रहा है और तुमने यह स्वीकार कर लिया है कि मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नहीं रहती, परन्तु देखो, मैं एक वाक्य उच्चारण करने के लिए और आया हूँ। हे देवी! मुझे वह सभा स्मरण है, राजा जनक के यहाँ जब एक सभा हुई तो मानो देखो, महात्मा अर्द्धभाग ने महर्षि याज्ञवल्कय मुनि से यह कहा था कि संसार में मृत्यु की मृत्यु क्या है? मेरे प्यारे!। देखो, याज्ञवल्कय ने देखो, अर्द्धभाग के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा -कि मत कहो! मृत्यु की मृत्यु नहीं होती। अरे, मृत्यु की मृत्यु, तो मानो देखो, मृत्यु का मृत्यु यह ब्रह्म है। तो जानने वाले की मृत्यु नहीं हुआ करती। जो ब्रह्म को जान लेता है वह मृत्यु से उपराम हो जाता है।

तो विचार आता है बेटा! विचार क्या कह रहा है, मेरे प्यारे! देखो, आत्मा का ह्रस नहीं होता, और न ही परमाणुवाद का भी ह्रस होता है। मानो देखो, यह मृत्यु है क्या? तो ऋषि कहता है- देवी! संसार में अन्धकार का नाम मृत्यु और प्रकाश का नाम जीवन माना गया है। मेरे प्यारे! देखो, अज्ञान में जो रहता है, वह मृत्यु को, अन्धकार को, प्राप्त होता है। तो विचारने से प्रतीत होता है, वेद के वांग्मय में जाने से प्रतीत होता हुआ कि वास्तव में मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नहीं है। बेटा! अज्ञान का नाम मृत्यु हैं, इसलिए प्रत्येक मानव को, प्रत्येक मेरी पुत्री को ज्ञानवान होना चाहिए, ज्ञानी होना चाहिए। अपने मानवीयत्त्व को जानने वाला और मानवीय दर्शनों को जानने वाला हो, बेटा! ज्ञानी कहा जाता है।

आत्मा और चित्त-मण्डल

आओ, मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को, बेटा! अपने आत्मवत् को जानना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, यह परमाणुवाद, मुनिवरों! देखो,

अपने-अपने अव्यवों में व्यय हो जाता है, अव्यवों में व्यक्त हो जाता है। परन्तु देखो, आत्मा अपने संस्कारों को ले करके चित्त के मण्डल में चला जाता है। तो, मुनिवरों! देखो, आत्मवत् बनना चाहिए। आत्मवत् कौन होता है? जो, मुनिवरों! देखो, चित्त के मण्डल को जानता हुआ, अपनी आत्मवत् बन करके, आत्मा की प्रतिभा में सदैव रत्त रहता है। आओ, मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हम परमपिता परमात्मा की महत्ती को सदैव जानते हुए महत्ती में रत्त हो जाएं। आभा में रत्त हो करके, मुनिवरों! देखो, अभ्योदय अपने में धारयामि बनते चले जाएं। आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, विशेष चर्चा न प्रकट करता हुआ, मेरे प्यारे! देखो, अपने में महान और पवित्र बन करके इस संसार सागर से पार हो जाएं।

आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वाक्य क्या कह रहा है, हम परमपिता परमात्मा की महत्ती को जानते हुए और मानो देखो, मृत्युंजयी बनते हुए, हम इस संसार सागर से पार हो जाएं। मेरे प्यारे! सबसे प्रथम मानव का कर्त्तव्य यही है कि मानव को मृत्यु से पार होना चाहुए और मृत्यु को जानना ही उससे पार होना है। प्रकाश में जाना ही मृत्यु से पार होना है। तो मेरे प्यारे! मानव को ज्ञानवान बन करके इस सागर से पार होना है।

आज का बेटा! हमारा यह वाक्य क्या कह रहा है? हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गा करके, बेटा! इस संसार-सागर से पार हो जाएं। आज का हमारा वाक्य कहता है कि वह जो परमपिता परमात्मा परमात्मा है, जो मानो जड़ और चैतन्यवत् है। मानो देखो, जड़ और चैतन्य में जब, मुनिवरों! देखो, वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आता है, हमें उसकी उपासना करनी हैं, वह हमारा विष्णु है, मानो देखो, निर्माण करने वाला और रक्षक है। मुनिवरों! वही परमदेवम् ब्रह्मः देवत्त्व कहलाया गया है। यह है, बेटा! आज का वाक्। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हमें, बेटा! मृत्यु से पार होना है। यह नाना प्रकार के अनुष्ठान, नाना प्रकार का जो तपश्चर है, वह इसीलिए मानव करता रहता है कि मैं मृत्यु से पार हो जाऊँ। यह है, बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि वह जो परमपिता परमात्मा है, वह जड़ और चेतनता में निहित रहने वाला है और आत्मवान बनना ही मानव के लिए बहुत अनिवार्य है और, मुनिवरों! देखो, वह निहित रह करके, केवल अपने, मानव के पालन-पोषण में लगा रहता है। अरे, जो आत्मा के कारण तुम्हारा जीवन मानो चैतन्य बना हुआ है, उस आत्मा का भी चिन्तन करना चाहिए। आत्मवान बनना चाहिए। यह है, बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन। बडौली, मेरठ २९-०१-१९८८

५ व्यष्टि से समष्टि में गति ०७ ०३ १९८८

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं, क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत, अथवा चैतन्य जगत, हमें दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा हैं, वह देवतव है हम सब उस परमपिता परमात्मा के गर्भ में, अथवा उसके आनन्द में आनन्दित होते रहते हैं जिस प्रकार माता का पुत्र, माता के गर्भस्थल में उसकी पालना अथवा उसकी रचना होती है, वह उस मानो परमपिता परमात्मा वह माता के गर्भस्थल में जिस प्रकार ओत-प्रोत रहता है, इसी प्रकार हम सर्वत्र जितने हम प्राणी मात्र हैं, उस परमपिता परमात्मा के गर्भस्थल में निहित हो रहे हैं। आज का हमारा वेदमन्त्र, हमें एक मानवीयता का एक दर्शन होता रहता हैं, क्योंकि वह जो मानवीयता हमारे मानवीयतव में निहित रहने वाली है, हम प्रायः उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसके अनन्तमयी ज्ञान और विज्ञान में सदैव निहित रहते हैं, क्योंकि जितना भी ज्ञान और विज्ञान हैं वह उस परमपिता परमात्मा की महती और उसी के गर्भ में हम सदैव उन क्रियाकलापों में सदैव तत्पर होते हैं॰ जहाँ उस परमपिता परमात्मा का हमें अनूठा जगत यह मानो एक विचित्र हमें दृष्टिपात आता रहता हैं।

तो आओ, मेरे पुत्रों! मैं विशेष विवेचना इस सम्बन्ध में, प्रायः देना नही चाहता हूँ, केवल हमारा अभिप्रायः यह है कि जितना भी प्राणी मात्र है, चाहे वह पृथ्वी मण्डल पर गमन करने वाला हो, चाहे और भी लोक-लोकान्तरों का प्राणी मात्र हो, परन्तु वह सर्वत्र उस परमपिता परमात्मा के गर्भ में निहित रहता हैं, तो आओ, मेरे पुत्रों! मैं आज इन वाक्यां के उच्चारण करने से पूर्व आज का हमारा वैदिक वेदमन्त्र ऐसा अपने में सूत्रित हो रहा हैं। जैसे माला और धागे का दोनों का समन्वय रहता है, और वह प्रत्येक मनके मानो उस सूत्र में पिरोएं हुए होने से वह माला एक दृष्टिपात आने लगती है, इसी प्रकार परमात्मा का जो एक-एक वेद का मन्त्र है, वह ज्ञान और विज्ञान और मानवीयता से गुथा हुआ हैं। मानो दर्शन उसमें दृष्टिपात आता रहता हैं, तो इसीलिए वे परमपिता परमात्मा रूपी जो सूत्र हैं, मानो सूत्र में प्रत्येक वेद का मन्त्र निहित रहता हैं, और एक-एक वेदमन्त्रों में मानो व्यवहार और भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिकवाद उसमें दृष्टिपात आता रहता हैं।

तो आओ, मेरे पुत्रों! विचार क्या? एक-एक वेदमन्त्र हमें सृष्टि का वर्णन कर रहा है, एक-एक वेदमन्त्र परमाणु की भांति मानो सर्वत्र ब्रह्माण्ड का चित्रण कर रहा है। तो आओ, अवृत्तियों आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा हैं, आज मैं बेटा! मानो अद्वितीयों में ले जाना चाहता हूँ जहाँ प्रत्येक मानव मानो अपनी मानवीयता और मानव दर्शनों में निहित रहा है, क्योंकि मानव का कर्तव्य है कि अपनेपन का ही वह प्रायः दर्शन करता रहता हैं, हमारे यहाँ जब मानव अध्वर्यु बन जाता हैं मानो देखो, अध्वर्यु की चर्चा मैंने कई काल में की है आज भी एक वेदमन्त्र आ रहा था ध्रुवणां ब्रह्मे कृताः अस्सचप्रह्वा ध्रुवाणि गच्छतं मां ध्रुवा मेरे प्यारे! अभ्यां और ध्रुवाणि गतप्रमाणां मानो देखो, यह ध्रुवा में, ऊर्ध्वा में, जो मध्य की प्रतिभा है, उसका नाम अध्वर्यु कहलाता हैं। हमारे यहाँ सूर्य का नाम प्रायः अध्वर्यु माना गया हैं, परन्तु अध्वर्यु नाम माता को भी कहते हैं, जो अहिंसा में परिणत हो जाती हैं। जो अहिंसा में मानो नियुक्त होती हैं, राजा का नाम भी अध्वर्यु कहलाता है, जिस राजा के राष्ट्र में हिंसा नही होती मानो उस राजा के राष्ट्र का नाम अध्वर्यु कहलाता हैं। इसीलिए हमारे यहाँ जिस भी काल में याग इत्यादियों का वर्णन आया है, तो ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने मानो देखो, बहुत पुरातन काल की वार्त्ता हैं, बेटा! मानो देखो, ब्रह्मा के

पुत्र का एक का नाम अथर्वा था। मानो देखो, यह अंगिरस इत्यादि मुनियों के समकालीन रहे हैं। उससे पूर्व भी मानो ऐसा माना गया हैं, तो वह अध्वर्यु का उन्होंने अपनी लेखनियाँ बद्ध की, और यह कहा कि अध्वर्यु वह कहलाता है, जो हिंसा से रहित होता हैं। जो प्राणी मात्र को जीवन देने वाला है, उसका नाम अध्वर्यु कहलाता हैं। आज के हमारे वेद के पठन-पाठन में भी प्रायः अध्वर्यु की चर्चा हो रही थी। मेरे प्यारे! अध्वर्यु नाम सूर्य का माना गया हैं, जो हिंसा से रहित हैं, मानो देखो, अहिंसक कहलाता हैं, जो प्राणी मात्र को अपने अधिपथ्य से ऊर्ज्वा देता रहता है, और उसे ऊर्ध्वा बनाता रहता हैं। ऊर्ज्वा देना ही ऊर्ध्वता कहलाती हैं।

मेरे पुत्रों! मुझे बहुत-सा काल स्मरण आता रहता है, जो मुनिवरों! देखो, मुझे वह काल स्मरण है, जिस काल मे गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के यहाँ एक मानो सभा हुई, और सभा में यह नाना प्रकार का प्रसंग उत्पन्न हुआ। मेरे प्यारे! देखो, वह अध्वर्यु नाम ऋषि ने बेटा! आत्मा को माना हैं, इस शरीर में जब आत्मा अध्वर्यु बन जाता है, वह अहिंसा में परिणत हो जाता हैं, तो अध्वर्यु बन करके जो भी मानव देखो, दिवस में रात्रि काल में क्रियाकलाप करता रहता हैं। तो जब तक वह सुक्रियाओं में रत्त रहता हैं, तब तक मुनिवरों! देखो, आत्मा बड़ा प्रसन्न रहता हैं, और जब यह मानो देखो, दुष्कर्म या व्यवहार में आ करके कोई निष्क्रिय कर्म क्रियाकलापों में रत्त होता है। तो आत्मा उसे मानो आत्मा की वेदना जागरूक हो जाती हैं, और आत्म चेतना में वह मानो देखो, वह उसके वाक्यों को वह प्रेरणा को हृदय की स्वीकार कर लेता हैं, तो बेटा! वह अध्वर्यु कहलाता हैं। वह मानव ही अध्वर्यु हैं, आत्मा ही अध्वर्यु हैं, क्योंकि वह ज्ञान और प्रयत्न से युक्त हैं, तो बेटा! मैं इस सम्बन्ध में विशेष विवेचना न करता हुआ, केवल यह कि अध्वर्यु नाम बेटा! वह है प्राणी मात्र जिसकी रक्षा करने वाला होता हैं, सिंहराज भी उसकी रक्षा करता हैं। सर्पराज भी रक्षा करता हैं और मुनिवरों! देखो, राष्ट्रीयता को भी ऊर्ध्वा में बनाने वाला हैं, उसका नाम मेरे पुत्रों! देखो, अध्वर्यु कहलाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, आज मैं तुम्हें एक ऐसी सभा में ले जाना चाहता हूँ, जिन वाक्यों की पुनरूक्ति हमने कई कालों में की है, परन्तु आज भी मुझे प्रसंगवत स्मरण आ रहा है, क्या मानव कितना अध्वर्यु बनता है, अपने जीवन में, अपने जीवन में कितना अधिपथ्य देता रहता है।

वशिष्ठ आश्रम में सुनीति राजा

मेरे प्यारे! सुनीति नाम के राजा का नामोकरण तो तुमने श्रवण किया ही होगा, मानो देखो, वह अपने राष्ट्र में अपनी वृत्तियों में रत्त रहते थे एक समय बेटा! वह सुनीति नाम के राजा अपनी सेना के सहित भ्रमण करने लगे बेटा! भ्रमण करते हुए, रात्रि का काल हो गया रात्रि काल में, उन्हें कही आसन नही प्राप्त हुआ तो वह बेटा! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के विद्यालय में, वशिष्ठ मुनि आश्रम में बेटा! उनका पदार्पण किया। ऋषि ने और माता अरूणधती ने दोनो ने राजा का स्वागत किया, और वह विराजमान हो गये, परन्तु कामधेनु गऊ, जो महाराज इन्द्र के यहाँ से महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज को प्राप्त हुई थी, जब उन्होंने उसका दुग्धाहार कराया और भी कन्दमूल दे करके मानो वह तृप्त हो गये, और तृप्त होने से, रात्रि समय विश्राम करने लगे, कामधेनु गऊ इस प्रकार की क्योंकि वह तृप्त करने वाली, हमारे यहाँ कामधेनु के कई प्रकार के अर्थ मानो गएं हैं, कई प्रकार से मानो देखो, मानव उसके ऊपर टिप्पणीयाँ करता रहता रहा है हमने बेटा! अपने में मानो इन शब्दों के ऊपर टिप्पणियाँ करते रहते हैं। मुनिवरों! देखो, कामधेनु नाम का पशु भी होता हैं, कामधेनु नाम बुद्धि को भी कहा जाता हैं, और कामधेनु जिस मानो देखो, जो ऋषि है, महात्मा महापुरूष जैसे राजा का नामोकरण भी मेरे पुत्रों! देखो, वृत्तियों में रत्त रहा हैं मानो देखो, वही यम्ब्रह्मा अर्वणां ब्रह्मे कृतं लोकां वाचन्नमं ब्रह्मा मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ कामधेनु थी। कामधेनु नाम मानो प्रजा को भी कहते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वह ऋषि का स्वागत किया गया, राजा का स्वागत किया गया, विराजमान हो करके कामधेनु नाम संकल्पों को भी कहा जाता हैं। मानव जब अपने

में सुसंकल्प करता हैं, वह धेनु के सहित मानो देखो, उसकी इच्छा पूर्ण होने लगती हैं। जैसे रक्तबीज का वर्णन आता हैं, क्या एक रक्त को जाना नही द्वितीय उपस्थित हो जाता है, बेटा!। एक-एक रक्त के बिन्दु में वैज्ञानिकों का यह निर्णय रहा हैं, एक-एक रक्त के बिन्दु में जहाँ चित्र विद्यमान रहते हैं, वहाँ मुनिवरों! देखो, उनका क्रियाकलाप उनकी प्रतिभा भी उसमें दृष्टिपात आती रहती हैं बेटा! मैं विज्ञान के युग में न जाता हुआ, केवल यह कि वहाँ महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने बेटा! उनका स्वागतार्थ राजा की दृष्टि से उसका स्वागत किया। मेरे प्यारे! देखो, रात्रि समय, सुनीति नाम के राजा के हृदयों में संकल्प और विकल्प बन गया कि ऐसी कामधेनु गऊ, तो मेरे आश्रम मे होनी चाहिए थी यह कामधेनु तो बड़ी प्रिय हैं तो मुनिवरों! देखो, राजा ने यह संकल्प-विकल्प करते रहे परन्तु देखो, अपने में कोई निमटारा नही हुआ, प्रातः काल उन्होने एक निमटारा किया क्या वशिष्ठ से कहेंगें कि वह कामधेनु को हमें प्रदान कर दे। और यदि प्रदान नही करता है तो क्षत्रिय बल से अपने गृह में उसका वास होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, वह रात्रि उन्होंने शमं ब्रह्मा कृतं वह असुतम लोकाः मेरे प्यारे! देखो, वह ऋषि आश्रम में, अपने में प्रणिवृतम् रहा है तो विचार-विनिमय करने वाला बेटा! विचारता रहा हैं क्या यह कामधेनु कितनी प्रियता, प्रातः काल होते ही राजा ने कहा हे भगवन! इस कामधेनु को मुझे प्राप्त कराईए। मैं इस कामधेनु को अपने राष्ट्र में ले जाना चाहता हूँ। उन्होंने कहा-प्रभु! आपकी इच्छा है, कामधेनु जाना चाहती है तो मुझे मानो किसी प्रकार का दोषारोपण नही, मानो मैं उसमे प्रसन्न हूँ और यदि कामधेनु नही जाने वाली क्योंकि यह देवताओं की धरोहर हैं, और इन्द्र के यहाँ से मुझे प्राप्त हुई हैं, यह देवत प्रवृत्ति वाली हैं, आज इसे मैं अपने मुखारबिन्दु से तुम्हें समर्पित नही करूंगा। परन्तु देखो, राजा ने कहा तो क्षत्रिय बल से ले जाएंगें, उन्होंने कहा यह आपकी इच्छा है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ब्रह्मवेत्ता थे, नम्र थे, ब्रह्मज्ञान में रत्त रहते थे, वह ब्रह्मज्ञान में इतना जान गएं थे, इतना मानो देखो, उनकी क्रियाओं में रत्त रहा हैं। इतना विचित्रतव रहा, क्या वह सदैव मानो देखो, इसमें निहित होते रहे, इस प्रतिक्रिया को वह सदैव जानते रहते, तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने यह जान लिया था कि ब्रह्म है मानो देखो, इसके गर्भ में विद्यमान हैं और जो जिसके भोगारोपण जो जिसके आँगन में आने वाली वस्तु है वह अवश्य आयेगी, वह मानो देखो, वह तो तुम अपने भय, अपनी धीरस्तां अपनी नम्रता को ऋषि ने ब्रह्मवेत्ता का लक्षण एक नम्रता हैं जब उसमें नम्रवाद आ जाता है क्योंकि परमपिता परमात्मा भी नम्र है अहिंसक है मानो देखो, उसी प्रकार का जब मानव बन जाता हैं इसीलिए वशिष्ठ मुनि महाराज के ब्रह्मवेत्ता इसीलिए कहते थे, कि वह ब्रह्मनिष्ठ थे, ब्रह्म के जानने वाले थे।

तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने क्षत्र बल से जब कामधेनु को गमन कराने लगे तो वशिष्ठ ने और माता ने कहा हे कामधेनु! हमारी इच्छा नही है कि तुम राष्ट्र गृह में प्रवेश करो, परन्तु देखो, इन्द्र से और यह देवताओं की धरोहर हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब कामधेनु ने इन शब्दों को श्रवण किया, तो मुनिवरों! देखो, कामधेनु को अपनी सिंहणी के स्वरूप को धारण कर लिया, उन्हें मानो देखो, वह ऋषि के शब्दों को पान करते ही मानं ब्रह्मा लोकां वाचन्नमं ब्रहे ऐसा ऋषि ने वर्णन किया है मुझे बेटा! ऐसा कुछ स्मरण आता रहा है जिस स्मरण से ऋषि ने अपनी वार्त्ता प्रगट कर रहा हूँ मेरे प्यारे! देखो, कामधेनु उनकी सेना को नष्ट करने लगी, परन्तु देखो, उस समय राष्ट्रीय प्रणाली में पृथ्वी का एक नियम बना हुआ क्या कामधेनु क्या गऊ का कोई भी अप्रतं देखो, का निरादर नही क्या उसको सदैव मानो देखो, एक आनन्द की स्रोत से उसको श्रवण किया गया परम्परागतों से ही, बेटा! भगवान मनु के कुलों से ले करके मानो सर्वत्र जितना भी राष्ट्रों के काल, जब से राष्ट्र का निर्माण हुआ है, उसी काल से मानो देखो, एक आनन्द और देखो, एक अपने में हृदयग्राही एक द्यूतक बना रहा है और वह द्यूकता इसीलिए क्योंकि यह कामधेनु प्रियतम मेरे पुत्रों! देखो, वह जब राजा ने यह दृष्टिपात किया, कि यह सेना को नष्ट कर रही हैं तो उन्होंने

कहा कि हे धेनु! जाओं तुम ऋषि के द्वार पर जाओ और हम तुम्हें त्याग रहें हैं हम नही, अपने राष्ट्र में गमन नही करा रहे हैं मेरे पुत्रों! सेना को ले करके, राजा सुनीत नाम के राजा बेटा! वह तो बेटा! अपने राष्ट्र में जा पंहुचे और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के द्वारा जब कामधेनु उनके द्वार पर पंहुची तो कामधेनु ब्रह्मणां ब्रहे तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने आश्वासन दिया मानो देखो, प्रीति से ब्रह्मज्ञान की चर्चाएं हे कामधेनु! तेरे में आत्मा है, तू आत्मवत, तू चेतना हैं, तू ज्ञानयुक्त और देखो, ज्ञानां ब्रह्मणा तेरे ही दुग्ध का आहार करके हम मानो विज्ञानवेत्ता बन सकते हैं, जहाँ ब्रह्मवेत्ता बने हैं, वहाँ विज्ञानवेत्ता भी बनते रहते हैं अणु और परमणुओं को जानने वाला, विज्ञानवेत्ता है, परन्तु जब वह आध्यात्मिकवाद की प्रतिभा में रत्त हो जाता हैं तो वह अपने में बेटा! ब्रह्मवेत्ता बन जाता है, आत्मवेत्ता ही ब्रह्मवेत्ता कहलाता हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! वह राजा सुनीति जब पुनः अपने राष्ट्र में पंहुचा तो विचारने लगा, यह तो बड़ी विचित्र एक घटना हुई हैं, बड़ा विचित्र एक वाद है हमारे समीप, क्या एक ऋषि की आज्ञा पाते ही मानो देखो, एक कामधेनु हमारे यहाँ गो नाम का पशु कहलाता हैं। उसमें मानो इतनी सत्ता इतनी महानता है क्या वह अपने में व्रतं ब्रह्मा मानो देखो, अपने में रत्त हो करके, सेना को नष्ट करने लगी यह बड़ा विचित्रवाद है यह कौन-सी सत्ता है कौन-सी मानो महानता है जिसकी देखो, प्राणी, एक प्राणी की रक्षा कर रहा हैं, हिंसक प्राणी देखो, अहिंसा में परिणत हो जाता है। कामधेनु गऊ मानो देखो, जो एक पशु के तुल्य है, एक पशु है, मानो उसे आध्यात्मिक ज्ञान नही है परन्तु प्रेरणा पा करके वह उसमें भी मानो अपने में संलग्न रहती हैं, कि वह आनन्दित है, यह कौन-सी सत्ता है, जो ऋषि की आज्ञा को पान करते ही कामधेनु को सेना को नष्ट करने लगी।

तो मेरे प्यारे! राजा यह विचारता रहा, मन्त्री गणों की सभा एकत्रित हुई उसमें बेटा! देखो, सोमकेतु ऋषि महाराज विराजमान हुए और वृत्तिका देखो, और महर्षि लोमश इत्यादि ऋषियों का आगमन हुआ उनके उस समय राजपुरोहित महर्षि तत्वेतवर ऋषि महाराज थे उन्होंने जब यह ऋषि से कहा-प्रभु! यह क्या कारण है जो आज हम वशिष्ठ आश्रम में पंहुचे थे, और वहाँ एक कामधेनु ने हमारी सेना को नष्ट करने लगी उसे अपने राष्ट्र में प्रवेश कराना चाहते थे। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा कि मैं तुम्हारा राज पुरोहित हूँ, परन्तु देखो, यह कामधेनु गऊ, देखो, अपने में मानो देखो, संकल्पवादी बनती है और मानव की रक्षा करने के लिए तत्पर है, तो वह तुम्हारे गृह में आने वाली नही, क्या राजा ने कहा तो मुझे क्या करना चाहिए? तो यह प्रभु! आपका अन्तरात्मा का विषय है, यह हमारा विषय नही हैं, क्योंकि अन्तरात्मा का जो विषय होता है, वह बड़ा विचित्र होता हैं, क्योंकि अन्तरात्मा जो प्रेरणा देती हैं, अथवा वह प्रेरणा को कोई नष्ट कर देता हैं, आत्मा का हनन हो जाता हैं। यदि आत्म प्रेरणा को साथ-साथ मनुष्य अपने क्रियाकलापों में रत्त रहता है अथवा उसके अनुकूल अपने जीवन में बरतने लगता है, तो मेरे प्यारे! वह आत्म उत्थान करने वाला है। वह आत्मवेत्ता बन जाता है एक समय में, परन्तु इसीलिए भगवन! यह तुम्हारी आत्मा का विषय हैं।

तो राजा ने कहा-प्रभु! जब पशु भी तपस्वी की रक्षा करता है मानो उसकी इच्छा के विरूद्ध नही जाता, तो मेरी इच्छा यह है कि मैं भी तप करने जा रहा हूँ, और मैं ब्रह्मवेत्ता बनूंगा, और ब्रह्मवेत्ता की उपाधि को प्राप्त करके मानो मेरा जीवन सार्थक बन सकेगा, राजा से उन्होंने कहा बहुत प्रियतम।

राजा सुनीति द्वारा तप

मेरे प्यारे! देखो, उनका जेठा पुत्र देखो, रेणकेतु नाम का उनका पुत्र था रेंगणी केतु को राज्य अर्पित करके और भयंकर वनों में कजली वनों में चले गए, क्या वह उसके ऊर्ध्वा वनों में जा करके, तपस्या करने लगे। तो मेरे पुत्रों! जब वह तपस्या करने लगे, तो वह गायत्री छन्दों का जपन पठन-पाठन करते रहे, मानसिक अपनी क्रियाओं

में रत्त रहे, परमात्मा का चिन्तन करते-करते बेटा! बारह वर्षों का उन्होंने अनुष्ठान किया, और बारह वर्ष का अनुष्ठान करने से, उनके हृदय में एक आत्म प्रकाश मानो देखो, गायत्री की एक अनुपम वेद की प्रतिभा उसमें निहित हो गई, परमाणुवाद के ऊपर बेटा! उनका अधिपथ्य होने लगा, तो मेरे पुत्रों जब आत्म तत्त्व वेत्ता मानो देखो, बनने के लए तत्पर हुए, तो उन्होंने कहा चलो अब मैं ब्रह्म उपाधि को प्राप्त करूंगा, मेरे प्यारे! राजा अपने राष्ट्र में आये, तपस्या के पश्चात उन्होंने अस्त्रों-शस्त्रों से युक्त हो करके और मुनिवरों! देखो, अस्त्रं ब्रह्मे कर्णा ब्रहा विश्वतं जब राजा अपने अश्व पर सवार हो करके बेटा! अस्त्रों-शस्त्रों से युक्त, तो वह भ्रमण करते हुए मानो देखो, वह उस दण्डक वनों में पंहुचे, जहाँ महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज का आश्रम था, माता अरून्धती और वशिष्ठ दोनो विद्यमान हैं परन्तु देखो, उन्होंने कहा ब्रह्मे, मेरे प्यारे! आईए, राजर्षि जी! पधारिए। राजर्षि जहाँ उच्चारण किया, उसके हृदय में एक वेदना जागरूक हो गई, उन्होंने कहा हे ब्राह्मण! तुझे यह अभिमान है क्या मैंने तपस्या नही की है, परन्तु देखो, मैं तपश्चर हूँ, मैं अप्रतं मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा बहुत प्रिय! मानो हे राजर्षि! बहुत प्रियतम मेरे प्यारे! देखो, उन्हें क्रोधाग्नि जागरूक हुई, उन्होंने बेटा! देखो, एक विद्यालय में ब्रह्मचारी उनका पुत्र अध्ययन करता था परन्तु उसे क्रोधाग्नि में उसे दण्ड में परिणत कर दिया, उसे मृत्यु दण्ड दे दिया, मृत्यु दण्ड क्यों दिया, क्योंकि वह क्रोधाग्नि जब जागरूक हो जाती हैं। तो वह मानो देखो, अप्रतं ब्रह्म अपने को निगल जाती है मुझे यह उच्चारण करे क्या मैंने प्रत्येक मानव को देखो, अपने में वशीभूत किया यह असम्भव, यह आत्मा का हनन है यह अपनी अन्तरात्मा से यह प्रश्न किया जाता है, तो आत्मवेत्ता बेटा! जब निर्णय लेता हैं क्या मानव को ऐसे क्रियाकलापों में तत्पर रहना चाहिए, जहाँ उसकी आत्मा का उत्थान होता हो।

तपस्या में नम्रता

तो मेरे प्यारे! वह नष्ट करके वहाँ से पुनः अपने राष्ट्र में आये, और राष्ट्र में बेटा! जब विचारने लगे तो उन्हें बेटा! देखो, स्वप्नवत में यह दृष्टिपात आने लगा, तेरा तो जन्म-जन्मान्तरों के पुण्य ही समाप्त हो गएं हैं। मैंने तो ऋषि के आश्रम में एक निधन किया है, अप्रत किया हैं। मेरे प्यारे! देखो, उन्हें पुनः तपस्या करने के लिए तत्पर हो गएं और भयंकर वनों में जा करके जहाँ बेटा! देखो, महर्षि पणपेतु और उद्दालक जी तपस्या की थी, वह एक आश्रम था, वह बेटा! उसमें जा करके तप करने लगे पुनः बेटा! गायत्री छन्दों का पठन-पाठन करते, मुझे बेटा! ऐसा स्मरण हो रहा है। जैसा आज हम देखो, उन तपस्वियों के मध्य में विद्यमान हैं मेरे प्यारे! देखो, तपस्या में परिणत हो करके मानो देखो, पुनः उन्होंने लगभग बेटा! बारह वर्ष के दो अनुष्ठान किए और दो अनुष्ठान का अभिप्रायः यह है क्या जो मानव अनुष्ठान करता है वह यह चाहता है मेरी मृत्यु नही होनी चाहिए बेटा! संसार में जितना भी मानव क्रियाकलाप करता हैं अनुष्ठान करता हैं याग करता है ज्ञान का उपार्जन करता है मेरे प्यारे! आचार्य बनता है वह केवल इसीलिए क्या तेरी मृत्यु नही होनी चाहिए तू मृत्युंजय बन मेरे प्यारे! देखो, सृष्टि के प्रारम्भ से यह क्रिया चली आ रही हैं प्रत्येक मानव के हृदय में यह वेदना सदैव जागरूक रहती हैं कि मैं ब्रह्मणां ब्रहे कृतं मानो देखो, मैं मृत्यु को प्राप्त न हो जाऊं। मेरे प्यारे! देखो, मृत्युंजय ब्रह्मणा लोकां वाचन्नं ब्रह्मे कृतं मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने जब इस प्रकार अपना वर्णन किया, उस वर्णन शैली में महर्षि अपने में तपस्या करने लगे बेटा! गायत्राणी छन्दों का पठन-पाठन करते हुए उन्होंने बेटा! अमृत को प्राप्त किया। वह अमृतमय बनते हुए अमृत की प्रतिभा में रत्त रह करके उन्होंने बारह-बारह वर्ष के दो अनुष्ठान किये, उन अनुष्ठानों में आत्मा का साक्षात्कार होने लगा। आत्म ज्ञान में बेटा! वह तल्लीन होने लगे, परन्तु देखो, बारह वर्ष के अनुष्ठान को करने के पश्चात चौबीस वर्षों की तपस्या के पश्चात ब्रह्मणां लोकां वाचन्नमं ब्रह्मा व्रते मेरे प्यारे! देखो, उसी मे वह रत्त हो गएं और वह मुनिवरों! अपने राष्ट्र गृह में पुनः आये। राष्ट्रगृह में आते और उनका जो अन्तिम विचार था, वह उसका परिवर्तन

होना स्वाभाविक था, मेरे प्यारे! देखो, अस्त्रों-शस्त्रों से पुनः युक्त हो करके अपने अश्व पर सवार हो करके बेटा! वह मानो देखो, वह ब्रह्मणे भ्रमण करते हुए मानो देखो, दण्डक वनों में जहाँ महर्षि अपने में ब्रह्मवेत्ता वशिष्ठ मुनि महाराज तपस्या करते थे, विद्यालय में ब्रह्मचारियों को शिक्षा देते थे, और देखो, मानव दर्शन का साक्षात्कार करते थे, तो मेरे प्यारे! देखो, उसके द्वार पर पंहुचे तो राजा ने मानो देखो, ऋषि ने राजा को दृष्टिपात करके कहा आईए, राजर्षि! मेरे प्यारे! पुनः क्रोध छा गया, और अपने में यह अनुभव करने लगे कि यह ब्राह्मण अभिमानी हैं। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने निश्चय कर लिया, आज मैं इसकी वाटिका में निहित हो करके और अपने अस्त्रों-शस्त्रों से रात्रि काल में इसे नष्ट कर करूंगा मेरे प्यारे! यहाँ तब उसकी प्रवृत्तियों में, जहाँ तपस्या करता है मानव, वहाँ यदि उसमें नम्रता नही आती, तेजोमयी नही बनता हैं परमात्मा की छत्र छाया में, अपने को स्वीकार नही करता है, तो जानो उसका तपश्चर अभी पूर्ण रूपेण नही हुआ हैं। तो मेरे प्यारे! मुझे वह स्मरण आता रहता हैं, जब ऋषि ने राजर्षि कहा तो बेटा! वही वाटिका में शान्त हो गएं वह दिवस बेटा! पूर्णिमा का दिवस था, चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त थे, माता अरूणधती और वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों एक स्थली पर देखो, एक आसन पर विद्यमान थे, परस्पर विचार हो रहा था हमारे यहाँ कोई भी मानव जो अपने गृह को स्वर्ग बनाना चाहता है दोनों ज्ञान और विज्ञान की चर्चा करें, जिससे ज्ञान-विज्ञान में रत्त हो करे हमारी आत्म चेतना का उत्थान होता रहे। आत्मा, देखो, आत्मवत बन सके। तो मुनिवरों! देखो, जब वाटिका में विद्यमान हो गये, तो माता अरूणधती बोली कि-प्रभु! आज तो चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त हैं यह कैसा अमृत बहा रहा हैं। यही तो पृथ्वी के गर्भ में अमृत को बहाने वाला है यही तो वनस्पतियों में मानो अमृत को बहाने वाला हैं, यह कैसा प्रिय चन्द्रमा हैं, जब हम माता के गर्भ में, भगवन! ओत-प्रोत रहते थे, तो यह चन्द्रमा ही तो हमें अमृत देता था, यह चन्द्रमा अमृत को बहा रहा है, यह बड़ी वृत्तियों में रत्त हो रहा हैं, और सम्पन्न कलाओं ये युक्त है। प्रभु मेरे प्यारे! देखो, महर्षि बोले कि देवी! तुम्हें यह प्रतीत होना चाहिए, कि यह चन्द्रमा का जो प्रकाश है यह विश्वामित्र की तपस्या के आगे मानो एक अंकुर के संतुलित कहलाया जाता हैं। मेरे विचारों में मानो देखो, इसका प्रकाश तो बहुत ही सीमित हैं, और विश्वामित्र की तपस्या का जो माना वृत हैं, वह बड़ा प्रियतम है। मेरे प्यारे! देखो, माता अरूणधती बोली प्रभु! आपका एक जेठा पुत्र समाप्त कर दिया उसने और वह पुनः आपको अशुद्ध वाक्य उच्चारण करता है, प्रभु आप उसकी प्रशंसा कर रहे हैं उन्होंने कहा हे देवी! यह प्रश्नीय विचार है, एक मानव का स्वाभाविक कहलाया जाता हैं, जो जिसका जिसमें जैसे गुण होते हैं, उन्ही गुणों के आधार पर मानव उसकी प्रशंसा करता हैं, और जहाँ गुण उसके अवगुण होते हैं, वहाँ उसी प्रकार उसके मानो अवगुण उच्चारण करता है, तो मानो देखो, मेरा विचार यह बन गया है देवी!। वह ब्रह्मर्षि बनना चाहता हैं परन्तु देखो, ब्रह्मवेत्ता के योग्य और सुयोग्य नही है, क्योंकि अब तक मानव में अभिमान हैं, परमात्मा को अपनी संरक्षणता में जो स्वीकार नही कर रहा है, परमात्मा के ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करके मानव में नम्रता आती है, जैसे चन्द्रमा सूर्य से ऊर्ज्वा लेता हैं। समुद्रों से मिलान होता है, वह जलों को अपने में ग्रहण कर लेता है, उसी को अमृत बनाता है। और अमृत बना करके वही सर्वत्र प्राणियों में बिखेर देता हैं, रात्रि के अन्धकार को अपने गर्भ में धारण कर लेता है, रात्रि को स्वामी बना हुआ हैं, जितना भी वह तप रहा हैं, वह मानो सबको अमृत देता है, रस देता है, वनस्पतियों में रस देता है, और वह रस दे करके ही मानो देखो, वह चन्द्रमा कहलाता हैं, वह प्रकाश नही है, परन्तु रात्रि का पति हैं, रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर रहा हैं, मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने इन वाक्यों को पान करके माता अरूणधती बोली प्रभु! यह तो प्रियतम है, परन्तु देखो, एक मानव को यदि आप एक मानो चन्द्रमा की उपमा दे रहे है, यह मुझे प्रिय नही लग रहा है उन्होंने कहा-देवी! दिव्या से तुम यह नही जानती हो तुम्हें यह ज्ञान होना चाहिए (यहाँ से कुछ भाग शब्द ध्वनि के रूप में उपलब्ध नही हैं अतः पुस्तक से

लिया गया हैं) ज्ञान अज्ञान रहेगा ज्ञान का एक मानो प्रति स्रोत बना रहेगा मेरे पुत्रां उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! चन्द्रमा से ही मानो समुद्र जलों को धारण करता हैं यही तो पूर्णिमा है, एक कला से, द्वितीय कला से मानो यह पन्द्रह कलाओं वाला ही तो चन्द्रमा कहलाता हैं, यह मानो पन्द्रह दिवस के रहस्यों को अपने गर्भ में यह मानो देखो, कान्तियों में मानो धारण किए हुए हैं, हे दिव्या! यह चन्द्रमा हैं, परन्तु देखो, जो तपस्वी होता हैं, आत्मवत होता हैं, आत्म ज्ञानी होता हैं, वह चन्द्रमा में ही परमपिता परमात्मा का दिग्दर्शन करता है, उसमें मानव दर्शन को अपने में ग्रहण करता हैं, तो मानो देखो, वह चन्द्रमा का प्रकाश कोई प्रकाश उस तपस्वी के आगे नही रहा करता। मेरे प्यारे! क्या विचित्रवाद थे, जहाँ यह विचार हो रहे है देखो, वाटिका मे शान्त देखो, मृत्यु दण्ड देना चाहता है, उसके हृदय में मानो अश्रुपात होने लगे और यह विचारने लगा कि अरे यह तो महादेवतव है। यह तो मानो प्रभु का दर्शन करने वाला हैं, तुने प्रभु का दर्शन नही किया, प्रभु का दर्शन क्या है? परमपिता परमात्मा का दर्शन क्या हैं? क्या मानो देखो, जो इस संसार का एक-एक कण-कण का अध्ययन करने के पश्चात जो अपने मानो दर्शन का अपने में अध्ययन करता है, अपने में यह स्वीकार करता है। मैं परमात्मा के गर्भ में विद्यमान हूँ, परमात्मा का गर्भाशय कितना विशाल है, कितना व्यापकतव है, परन्तु देखो, वह निभिमानी हैं, अभिमान भी उसके द्वारा नही है, कोई अभिमानी बना हुआ है,

व्यष्टि में समष्टि की गति

मेरे प्यारे! देखो, वाटिका में शान्त मुद्रित हो करके, अपने में विचार चिन्तन कर रहा है बेटा! देखो, अश्रुपात जा रहे है, और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के चरणों में ओत-प्रोत हो रहा हैं, और यह अश्रुपात जा रहे हैं। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहता है, आईए, ब्रह्मवेत्ता! विराजो। मेरे प्यारे! ब्रह्मवेत्ता को एक आसन दे दिया। और वह ब्रह्मवेत्ता बन गये, क्योंकि नम्रता आते ही क्योंकि परमपिता परमात्मा देखो, वह निरभिमानी हैं, वह इसी प्रकार हमें अपने को निरभिमानी बन करके परमात्मा की छत्र छाया में परमात्मा के अनूठे राष्ट्र में हम विद्यमान हैं, बेटा! एक-एक कण प्रभु का दर्शन बना हुआ हैं एक-एक कण-कण में देखो, एक-एक वेद का मन्त्र एक-एक परमाणु का वर्णन करता है, तो ब्रह्माण्ड उसमें विद्यमान रहता हैं अरे, प्रभु का विज्ञान कितना अनूठा है, बेटा! आज जब मैं प्रभु के विज्ञान के ऊपर जाता हूँ, लोक-लोकान्तरों की माला बनाई है, यह माला बना करके ही मानो देखो, ब्रह्माण्ड को दर्शाया है, उसे ब्रह्माण्डतव कहते हैं, मेरे पुत्रों! देखो, आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ मैं कोई व्याख्याता नही हूँ, केवल एक शब्दों का परिचय देने वाले हैं, और वह परिचय क्या है कि प्रत्येक मानव जो भी आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करना चाहता हैं, आध्यात्मिकवेत्ता बनना चाहता हैं, आत्म दर्शन करना चाहता हैं, तो बेटा! देखो, व्यष्टि से समष्टि में प्रवेश करना होगा और समष्टि में ब्रह्मवादी हैं, ब्रह्मवादी जितने हैं, वह सब समष्टि में रहे हैं व्यष्टि को उन्होंने त्याग दिया है। और समष्टि में प्रवेश कर गएं हैं, बेटा! व्यष्टि कहते हैं संकीर्णता को और समष्टि कहते है। व्यापकवाद को ज्ञान के द्वारा जो विवेकी बनता हैं वह समष्टि में चला जाता हैं।

तो बेटा! देखो, महर्षि विश्वामित्र ने अपने को व्यष्टि को त्याग करके बेटा! वह समष्टि में चले गये, प्रत्येक लोक-लोकान्तरों का विज्ञान उनका क्रियाकलाप को जानना मस्तिष्क में स्थिर करना, और प्रभु का उसमें दर्शन करना बेटा! देखो, उसका नाम मानवीयतव कहलाता हैं, वह मानव अपनी मानवीयता का दर्शन करता हैं, और वह ब्रह्मवेत्ता बन करके वह ब्रह्मवेत्ता क्यों बनता है, क्योंकि-प्रभु! का जितना भी ब्रह्मज्ञान है, उसका अपने में धारण करके उसका प्रसार करना अथवा उसको शुद्ध रूप से द्वितीयों को देना समर्पित करने का नाम ही मेरे पुत्रों! देखो, हमारे यहाँ एक मानव दर्शन है। अपने में ब्रह्मवेत्ता बन जाता है बेटा! एक विज्ञानवेत्ता बनता हैं, एक-एक परमाणु के ऊपर अन्वेषण कर रहा हैं, मुझे बेटा! बहुत-सा काल स्मरण आता रहता हैं, आज मैं उस काल में जाना नही

चाहता हूँ जिन्होंने वशिष्ठ की आज्ञा पा करके बेटा! देखो, दण्डक वनों में देखो, उस धनुर्याग का आयोजन किया था, उस याग की चर्चा तो मैंने कई कालों में प्रगट की हैं, मानो कैसे भव्य याग हाते रहते थे, हमारे यहाँ देखो, भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन प्रायः हमारे वैदिक साहित्य मे आता रहता है, यह मानो देखो, प्रेरणा को प्राप्त करता हुआ, प्रेरित हो करके, अपने में प्रेरणा को प्राप्त करके बेटा! देखो, महर्षि विश्वामित्र एक ब्रह्मवेत्ता बने, प्रेरणा कहाँ से प्राप्त हुई एक गऊ से उसे प्रेरणा प्राप्त हुई, कामधेनु गऊ जो वशिष्ठ आश्रम में निवास करती थी मानो देखो, उसी से प्रेरणा को पा करके बेटा! वह राजा से तपस्वी बने, तपस्वी से ब्रह्मवेत्ता बने, और मानो तपस्वी से ही ब्रह्मवेत्ता बन करके बेटा! वह समाष्टि से व्यष्टि में प्रवेश कर गएं मेरे प्यारे! देखो, व्यष्टि और समष्टि में जाना ही देखो, वह ध्रुवं ब्रह्मा वह उद्गीत गा रहा था क्या ध्रुवा अध्वर्यु ब्रह्मणे देखो, अध्वर्यु कहलाता है। यह आत्मा ही तो बेटा! अध्वर्यु है, आत्मवत बनना ही तो अध्वर्यु बनना हैं, हिसंक प्राणियों को हिंसा में दृष्टिपात करना ही तो अध्वर्यु बनना हैं, बेटा! मेरे प्यारे! देखो, मैंने कई काल में यह चर्चाएं की हैं, बेटा! महाराज अश्वपति के यहाँ भी कई कालों में वृष्टि यागों का आयोजन होता रहा। परन्तु आज मैं बेटा! तुम्हें यह उच्चारण करने के लिए जा रहा हूँ, क्या प्रत्येक मानव को यहाँ तपस्वी बनना है, और तपस्वी जब बन जाता है, तो जीवन एक सार्थक बन जाता हैं, महान पवित्र बन जाता है, महान जब राजा को त्याग करके और मानो वह तपस्या और ब्रह्मवेत्ता बन जाता है। वह राष्ट्र और देखो, वह राष्ट्रं देखो, सहस्रों राजाओं के रक्षार्थ बेटा! देखो, वह महान बना करता हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज का विचार हम क्या दे रहे थे कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम बेटा! इस संसार सागर से पार हो जाएं, आज का विचार क्या, जितना भी बेटा! चैतन्य मानो यह जड़ जगत और चेतनामयी जगत जो दृष्टिपात आ रहा हैं, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, वह प्रभु विद्यमान रहते हैं मानो यह संसार जब मानो यह स्वीकार कर लेता है, कि मैं परमात्मा के गर्भ में निहित हूँ, तो बेटा! उसका गर्भाशय कितना विशाल हैं, कितना महान है, माता अपने मे अभिमान करती रहती है कि मेरे गर्भ से मानो पुरूषों का जन्म होता हैं, पुत्रियों का जन्म होता हैं, हे माता! तू तो निमित मात्र हैं, जैसे मानव अपने क्रियाकलापों में निमित मात्र होता हैं, परन्तु एक संकल्प मात्र तुम्हारा एक संकल्प चल रहा हैं, जैसे सृष्टि के प्रारम्भ मानो देखो, सूर्य उदय होता हैं, सूर्य अस्त हो जाता हैं मानो देखो, वे परमपिता परमात्मा का सृष्टि के गर्भ में एक संकल्प बना हुआ है उसी संकल्प के आधार पर मानो देखो, यह संसार चल रहा है, समय पर सूर्य उदय होता हैं, समय पर सूर्य उदय होता हैं, लोक-लोकान्तर अपनी प्रतिभा देना प्रारम्भ कर देते हैं। मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार माता के गर्भस्थल में रचना करने वाली माता नही हुआ करती है, वह प्रभु ही रचना कर रहा है, बेटा! ऐसी विचित्र रचना कर रहा है, माता को प्रतीत नही होता, कौन रचनाकार है, कौन विश्वकर्मा बन रहा हैं, और विश्वमकर्मा बन करके, विश्वसनीय दे रहा है मेरे प्यारे! माता तू अपने में एक निमित मात्र कहलाती हैं परन्तु रचनाकार तो प्रभु है, मानो सूर्य की जो रचना सृष्टि के प्रारम्भ में जो रचना हो गई है, उसके पश्चात भी बेटा! देखो, सहस्रों पृथ्वियों को वह तीस लाख पृथ्वियों को अपने मे धारण करने वाला है, कैसा विचित्र उस मेरे प्यारे प्रभु का ज्ञान और विज्ञान है, इसीलिए हम प्रभु के ज्ञान और विज्ञान को जानना अपने में विवेक उत्पन्न करना, मेरे प्यारे! देखो, यही हमारा जीवन सार्थक बनता हैं।

आज का विचार अब यह समापन होने जा रहा हैं, आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम बेटा! इस संसार सागर से पार हो जाएं। हमारे आने का उद्देश्य हमारे इस संसार में आने का उद्देश्य केवल यही है कि हम परमपिता परमात्मा को जानते हुए, अपनी मानव दर्शन को जाने और मानो देखो, वही हमारा जीवन सार्थक बन जाता हैं, यह है बेटा!

आज का वाक्, अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कलज प्रगट करूंगा, कि वशिष्ठ और विश्वामित्र की दोनों की विचारधारा उनका कैसा विचारणीय प्रश्न उत्तर होते रहते थे। यह चर्चाएं मैं कल प्रगट करूंगा, आज का विचार अब समाप्त होने जा रहा है अब वेदों का पठन-पाठन। ०७ मार्च १९८८

६ आत्मवेत्ता कैसे बनें ०८ ०३ १९८८

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्त और सूक्ष्मतम हैं मानो यह जो ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा है, यह ब्रह्माण्ड उसका गृह हैं, उसका सदन है, और वह उसी में वास कर रहा हैं। तो इसीलिए परमपिता परमात्मा का यह जो अनूठा जगत हैं, इसको प्राणी मात्र अपने एक विचार-विनिमय का एक विषय बनाएं हुए रहता हैं क्योंकि हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, ऋषि-मुनि मानो इसको अपना विचार और मानवीयतव में सदैव निहित रहे हैं और विचारते रहे हैं कि यह संसार क्या हैं मानो यह तो सार्वभौम विदित है कि परमपिता परमात्मा का यह जगत हैं और प्राणी मात्र इसमें वास कर रहा है और उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में, भिन्न-भिन्न प्रकार से इसे अपने मे सिद्ध करना चाहता है, सिद्ध करता भी रहता है और उसके पश्चात भी शेष रह जाता है, कैसा विचित्र है बेटा! यह जगत? कैसा विचित्र है यह मानवीयतव? मानो अपने सर्वत्र जीवन हूत करने के पश्चात भी, उस ब्रह्म का विशेष अनूठा बना ही रहता हैं।

यागों का स्रोत परमात्मा

परन्तु आज मैं बेटा! इस सम्बन्ध मे कोई विवेचना या विशेष चर्चाओं में जाना नही चाहता हूँ, विचार केवल यह है कि आज का हमारा वेदमन्त्र, नाना प्रकार के यागों का वर्णन कर रहा था, हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चलन परम्परागतों से रहा हैं। मानो इसी सन्दर्भ में, मानव अपने मे भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों के ऊपर चिन्तन और मनन करता रहता हैं और परमपिता परमात्मा उन यागों का स्रोत माना गया है। परन्तु इस सम्बन्ध में भी विशेष विवेचनाओं में जाने के लिए हम नही आए हैं, केवल यह कि आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा हैं? वेदमन्त्र भिन्न-भिन्न प्रकार की विवेचना दे रहा हैं और उसकी चर्चाएं आदि ऋषियों के मध्य में, प्रायः होती रही हैं और ऋषि-मुनियों का जो एक अपना विचार होता है। मानो वह बड़ा अनूठा और मानवीयतव के दर्शन से गुथा हुआ होता है जिससे मानव को यह विशुद्ध मार्ग और जिसका वह पथिक बन सके।

तो आओ, मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें शेष व्रतं इन्ही न्यौदा में वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते हुए हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की चर्चाएं होती रही हैं, हमारे यहाँ एक न्यौदा में मन्त्र, मानो न्यौदा में हमारे यहां भी वैदिक साहित्य में कहा जाता हैं और वह न्यौदा में से मन्त्रों का अध्ययन करने वाले ऋषिवर, अपने में एक-एक वेदमन्त्र के ऊपर अन्वेषण अनुसन्धान अणुवृत्तियों में लगे रहते हैं। आओ, मेरे प्यारे! आज हम उस परमपिता परमात्मा की, जो महती हैं, उसका अनन्तमयी जो धारा अप्रहे है, मानो गो मेध याग के सम्बन्ध में विवेचना हो रही हैं, यही चर्चा महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के आश्रम प्रायः होती रहती थी। प्रातःकालीन ब्रह्मचारी विद्यालय में, यागों में परिणत होने के पश्चात, यह प्रायः विचार-विनिमय होता रहता था, याग के सम्बन्ध में, माता अरूणधती उनका उत्तर देती रहती, कहीं वशिष्ठ मुनि महाराज भी मन्थन के मन्थन किए हुए शब्दों का उद्घोष करते रहते थे परन्तु उनके यहाँ दो प्रकार के ब्रह्मचारी रहते थे एक श्रोत्रीय ब्रह्मचारी थे। और एक ब्रह्म में ब्रह्मचारी थे मानो जो पठन-पाठन और अपने में अपनेपन की प्रतिभा में रत्त रहना, वह श्रोत्रीय ब्रह्मचारी थे। परन्तु एक ब्रह्मचारी वह जो ब्रह्मज्ञान में रत्त रहना चाहते थे, और ब्रह्मज्ञान में भी मानो कौन-सी प्रवृत्ति रहती जिसको अपनाने से हम नम्रतम, हम विचारतम और अपने गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो करके, शान्त हो जाएं मानो वह ब्रह्मवेत्ता विद्यालय में उनके यहाँ प्रायः, ब्रह्म श्रोत्रीय कहलाते थे।

स्वाध्याय के स्वरूप

तो मेरे प्यारे! यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की आभा में रत्त रहने वाले मानो ब्रह्मचारी जो पठन-पाठन की पद्धतियों में रमण करना, और उनमें रत्त रहना, वह एक श्रोत्रीय वेदमन्त्रों के ऊपर अन्वेषण करते रहते थे, विचारते रहते थे कि जब लोकों का वर्णन आता हैं, एक-एक वेदमन्त्र में बेटा! ब्रह्माण्ड का चित्रण बेटा! उनके समीप आता हैं। तो प्रायः वह पठन-पाठन की पद्धतियों में, वह महानता का दर्शन करते रहे, एक वह जो ब्रह्मणं ब्रहे बेटा! चरणों में ओत-प्रोत हो करके, प्रातःकालीन, आचार्य से यह प्रश्न करना, क्या प्रभु! हम ब्रह्म श्रोत्रीय बनना चाहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने, इसी वेदमन्त्र को ले करके, जो यशस्तम् गो रूद्रां भवेत्तां गो मेधा यागा तो मेरे प्यारे! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने दो प्रकार की विवेचना प्रगट की। सबसे प्रथम जब ऋषि ने यह प्रश्न किया, क्या प्रभु मैंने कजली वनों में और कई दण्डक वनों में बड़ा स्वाध्याय किया है, सुअध्ययन के दो स्वरूप माने गएं हैं, एक स्वतः अपना अध्ययन करना है, और एक मानो देखो, बाह्य जगत का अध्ययन करना है, बाह्य जगत में मानो नम्रता और ओजस्ताम् वह उसका अध्ययन करना है कि कैसे संसार में अपने जीवन को व्यतीत कर सकते हैं, और एक वह है जो अपने में मानो देखो, ब्रह्म का दर्शन करना चाहता हैं मेरे प्यारे! दो प्रकार का सुअध्याय बन गया है एक अपना अध्ययन, क्या हम कौन है, हमारे शरीरों में निर्माणशाला, निर्माण करने वाला यह कौन हैं? जो नाना प्रवृत्तियों को जन्म दे रहा है, वह कौन है? तो बेटा! देखो, इस वाक् के ऊपर प्रायः विचार-विनिमय होता रहा है उन्होंने कहा अपना स्वतः अध्ययन करना, जगत का अध्ययन करना, और उसे अपने में समाहित करना और उसे यौगिक मुद्राओं में परिणत हो करके मानो देखो, वह आत्म लोक, जहाँ आत्म लोक मानो पंच महाभूतों का जो एक समूह हैं, जहाँ आत्मा का वह लोक और गृह और सदन बना हुआ हैं उसके ऊपर प्रायः हम विचारते रहते हैं (यहाँ से कुछ भाग शब्द ध्वनि के रूप में उपलब्ध हाँ से होने के कारण पुस्तक से लिया गया है) देखो, यह एक प्रकार का नृत्य होता रहा हैं।राष्ट्र के प्राण ब्रह्मवेत्ता

आज मैं तुम्हें विशेष विवेचना न देता हुआ, केवल दोनों ऋषि-मुनियों के विचार परस्पर मानो एक गम्भीर मुद्रा में मुद्रित होते रहे हैं महर्षि विश्वामित्र बोले कि-प्रभु! मैं ब्रह्मवादी और ब्रह्मनिष्ठ मानो देखो, नम्रता में जाना चाहता हूँ, जो महर्षि वशिष्ठ ने कहा कि-प्रभु! यह जो रचना हैं ब्रह्माण्ड की जो रचना है, इस रचना के ऊपर तुम विचार-विनिमय प्रारम्भ करो। जब वह रचनाकार को रचना में दृष्टिपात करता है, रचनाकार को उसके गर्भ में दृष्टिपात करता रहता हैं, तब तक सम्भव हो जाता हैं।

बेटा! अग्रणीय ऋषि आगे अपना अनुसन्धान मानो प्रबल वृत्तियों में रत्त करा देता हैं, वह कहता हे कि हे प्रभु! मैं यह जानना और चाहता हूँ वह जो समाज है, यह जो राष्ट्रवाद से समाजवाद है क्या हे प्रभु! यह कैसे जीवित रहता है इसका मानो देखो, जीवन का क्या स्रोत बना हुआ हैं? मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि वशिष्ठ ने कहा कि हे विश्वसंब्रह्मणे! हे ब्राह्मण! मानो देखो, यह जो ब्रह्माण्ड यह जो राष्ट्रवाद है इसका जो स्रोत है, इसका जो प्राण है वह मानो देखो, ब्रह्मवेत्ता ऋषि कहलाते हैं। जिस राष्ट्र में ब्रह्मवेत्ता ऋषि होते हैं, ब्रह्म को जानने वाले, ध्वनि वाले मानो देखो, गान के रूप में वेदों का गान गाने वाले जब राजा के राष्ट्र में विवेकी पुरूष होते हैं, ब्रह्म श्रोत्रीय पुरूष होते है तो राजा का राष्ट्र और समाज पवित्र बनता रहेगा। मानो देखो, यह वैसे ही पवित्र नही बनता है, यह अग्नि की आभा में रत्त होने से ऊँचा बनता है। तो महर्षि ने इसका जब उत्तर दिया उन्होंने कहा-प्रभु! यह कैसे मानो राष्ट्र में उत्पन्न किए जा सकते हैं, उन्होंने कहा कि राजा जब ब्रह्मवेत्ता होता हैं, राजा के मस्तिष्क में रूढ़ियाँ नही होतीं, तो वह राष्ट्र मानो देखो, समाज को ऊँचा बना देता हैं। ईश्वरं ब्रह्मे रूढ़ं कृतं ब्रह्मः क्योंकि संसार में पालन पोषण की रूढ़ियाँ से पालना होती हैं, परन्तु जब ईश्वर के नामों पर जिस काल में रूढ़ियाँ पनपी है, उसी काल में मानो

दो राष्ट्र हृस होता रहा हैं।

मुनिवरों! देखो, ऋषि ने जब यह वाक्य उच्चारण करते हुए कहा कि हे ऋषिवर! मैं एक समय महर्षि उद्दालक गोत्र में पंहुचा शिकामकेतु उद्दालक गोत्र में जब मैं पंहुचा, तो मानो हे ऋषिवर! वहाँ ब्रह्मचारी वृते सम्भवा भारद्वाज मुनि महाराज विद्यमान थे, और महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज यह चर्चा कर रहे थे कि महाराज! यह जो विज्ञान है यह पनप रहा है। और विज्ञान में तुम्हारा बड़ा सहयोग रहा हैं, क्योंकि तुमने अपनी विज्ञानशाला में मानो देखो, अग्नि की धाराओं पर (यहाँ से शब्द ध्वनि से लिया गया हैं) विद्यमान होने वाले शब्दों के ऊपर विचार-विनिमय किया हैं जैसे यज्ञमान यज्ञशाला में विद्यमान हैं, अपनी दिव्या अपनी देवी से कहता है, हे दिव्या! आओ, हम अपने शब्दों को मानो द्यो लोक में पंहुचाना चाहते हैं, अपने शब्दों को अपने क्रियाकलापों को मानो द्यौ लोक में पंहुचाना चाहते हैं, जब यज्ञमान यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, मन्त्र के पश्चात में जो मानो एक ध्वनि उत्पन्न करता है स्वाहा की, जब कहता है तो शब्द उच्चारण करता है वे तो मानो देखो, द्यौ लोक में जाने वाली ध्वनि हैं और वह द्यौ लोक में जाने वाली ध्वनि, में उसमें चित्र है और उसमें मानो देखो, वह क्रियाकलाप भी विद्यमान है, मानो देखो, वही तो अपने में रत्त हो करके, द्यौ लोक में प्रवेश हो जाता है, वह द्यौ लोक का गामी बन जाता है, देखो, वह दिव्यां ब्रह्मे यज्ञमान कहता है, हे दिव्या! मानो यह जो हमारा यह जो शब्द है, ध्वनि है, इसको ही पवित्र बनाना हैं क्योकि ध्वनियों से समाज ऊँचा बनता हैं, ध्वनि से वायुमण्डल ऊँचा बनता है, ध्वनि से मानो देखो, मानव मानव में एक दूसरे पर विचार पवित्र बन जाते हैं। तो मेरे प्यारे! जब ऋषि ने यह वर्णन किया उन्होंने कहा शब्दं ब्रह्मे हे प्रभु! मैं गो मेध याग के सम्बन्ध में विचार-विनिमय कर रहा था, मैं गो मेध याग के ऊपर मेरा विचार चल रहा था, वेद के पठन-पाठन में गो मेध यागों के पठन-पाठन में गो मेध याग का बड़ा वर्णन है। तो मुनिवरों! देखो, ऋषि ने यह कहा तो वशिष्ठ मुनि कहते हैं, क्या कौन-सा गो मेध याग जानना चाहते हो? विश्वामित्र कौन से मानो गो मेध याग को नही जानते थे। उन्होंने कहा-प्रभु! मैं तो इस सम्बन्ध में नही जानता हूँ, क्या यह गो मेध याग कौन-सा जानूं? मैं तो एक ही गो मेध को जानता हूँ क्या गो मेध कहते हैं गऊओं की सेवा करने का नाम गो मेध माना गया हैं, प्रभु! मैं अनेक, नाना गो मेधों को नही जानता हूँ।

गौ मेध याग

मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा हे ऋषिवर! हे ब्रह्मवेत्ता! मानो देखो, यह जो गो मेध याग तुम कह रहे हो, वह तो साधारण गो मेध याग हैं वह तो मानो पशु की सेवा करना हैं, मानो उसके पय को पान करना है और अपने में तेजोमयी बन करके ओज की उत्पति करना है वह तो ऐसा एक गो मेध याग हैं, उसका दूसरा रूप जो गो मेध याग का हैं, वह यह माना गया है कि ब्रह्मचारी के देखो, आचार्य के संरक्षण में ब्रह्मचारी अपना अध्ययन कर रहे हैं, और जब ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहे है तो मानो देखो, गो मेध मानो देखो, गो मेधां ब्रह्मणां ब्रहे अन्धकार को मेधावी बनाने के लिए मानो जब आचार्य तत्पर होते हैं तो ब्रह्मचारी छात्रों छात्रिकाओं को वह मानो देखो, मेध में परिणत कर देते हैं मेध कहते है बुद्धि को मेधावी बना देते हैं और मेधावी बना करके बेटा! एक गो मेध याग ये कहा गया हैं, राजा के राष्ट्र में जो गो मेध याग होता है, वह बड़ा विचित्र याग हैं, गो मेध याग का अभिप्रायः यह कि विद्यालय पवित्र हो, और विद्यालयों में आचार्य गो मेध यागी हो जो गो मेध में परिणत करने वाले हों अन्धकार से जो प्रकाश में पंहुचाने वाला हो वह गो मेध यागी होता है। मेरे प्यारे! देखो, विश्वामित्र मौन होने लगे, ऋषि ने कहा हे विश्वामित्र! तुम मौन क्यों हो गएं हो? मानो देखो, मेधावी बनने के लिए, नाना प्रकार माने गएं हैं एक मेधावी यह है क्या अपनी मानो बुद्धि और मेधावी बनने के लिए अब मानो ऋतम्भरा के क्षेत्र में और प्रज्ञावी बन जाते हैं वे प्रज्ञावी बन करके ही मानो देखो, अपनी इन्द्रियों को गो मेधा मानो देखो, गो

नाम इन्द्रियों का हैं, और मेध नाम मानो देखो, इन्द्रियों के ज्ञान को जानना है। जो इन्द्रियों में समाहित रहता है, जैसे मुनिवरों! देखो, पांच ज्ञानेन्द्रियाँ कहलाती हैं, उनमें रूप, रस, गन्ध, मानो स्पर्श और रस जो इसमें विद्यमान रहता है, मानो देखो, इसको इन शब्दों को जानना इनमे कितना विस्तार है, कितनी प्रतिभा हैं, मानो उसके जानने का नाम मेधावी कहा जाता हैं। जब हम मेधावी क्षेत्र में रमण करने लगते है, तो मानो उसकी प्रतिभा मानो हमें अपने में दृष्टिपात आती रहती है।

तो विचार आता है बेटा! मैं विशेषता में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, ऋषिवर अपने आचार्यों से यह प्रश्न कर रहे हैं, ब्रह्मवेत्ता बनने के लिए क्या हे ब्रह्मे वाचन्नमामि देखो, सर्वत्र इन्द्रियों का जो विषय है जैसे नेत्रों का विषय रूप है, श्रोत्रों का विषय शब्द है, मेरे प्यारे! देखो, घ्राण का सुगन्ध दुर्गन्ध हैं, मुनिवरों! देखो, इसी प्रकार त्वचा का स्पर्श और मुनिवरों! देखो, रसों का स्वादन लेना, वह रसना का विषय माना गया हैं। ये पंच महा मानो देखो, इन्द्रियं हैं, पंच महा यागों का एक स्रोत माना गया है। मेरे प्यारे! देखो, इन पांचों इन्द्रियों के विषयों को, जानता हुआ जो योगेश्वर जो ब्रह्मवेत्ता बनना चाहता है इन्द्रियों के विषयों को जान करके मेरे प्यारे! देखो, उनका साकल्य बना करके, उनका चरू बना करके, और वह मुनिवरों! देखो, जो आध्यात्मिकवेत्ता, अपने हृदयों में जो मानो ज्ञान रूपी अग्नि का प्रादुर्भाव हो रहा हैं, ज्ञान रूपी अग्नि अपने में ज्ञानातन्तं ब्रह्मे जिसको योगी जन मानो देखो, अग्नि प्रदीप्त करके और इन्द्रियों की विषय को उसमें हूत कर देते हैं बेटा! वह मानो देखो, एक गो मेध याग कहलाता हैं, उसे भी गो मेध याग कहते हैं। हे विश्वो समाः मानो देखो, यह गो मेध याग तुम कौन-सा जानना चाहते हो? कौन से गो मेध में रत्त होना चाहते हो? एक गो मेध याग, वह होता है जो वैज्ञानिक जन मानो सूर्य की किरणों को, गो कहा जाता हैं, उस कान्ति को भी गो कहा जाता है, नाना प्रकार की सूर्य की कान्ति और रश्मियों को वह अपने में धारण करता हुआ, उनका एकोकीकरण करके नाना प्रकार के अस्त्रों-शस्त्रों का निर्माण करता हुआ नाना प्रकार की अग्नि का चयन करता हुआ, मानो देखो, वह भी एक गौ मेध याग कर रहा हैं। मेरे प्यारे! ऋषि ने अपने वाक्यों में बड़ी विशुद्ध विवेनाएं की उन्होंने कहा ब्रह्मणां ब्रहे एक गो मेध याग माता करती हैं, जब माता के गर्भस्थल में शिशु विद्यमान होता हैं तो देखो, नाना रूपों से माता जो जानती हैं क्या मैं गो मेध याग करूं तो गो यहाँ बेटा! देखो, देवतव को कहा गया है और वह जो मानो शिशु हैं वह उसमें परिणत हो रहा हैं तो मुनिवरों! देखो, माता जब अपने में विवेचना में रत्त हो जाती है, तो कहती है हे आत्मा! तू मेरे गर्भस्थल में विद्यमान है, तू गो के तुल्य है, मैं मेध बनाना चाहती हूँ तो बेटा! मेरे प्यारे! माता ज्ञान और विज्ञान का अध्ययन करती हुई, अपने में मौन हो करके, शान्ति सान्त्वना को प्राप्त करती हुई बेटा! वह बालक को जन्म देती है तो वह भी गो मेध याग कर रही है।

आत्मवेत्ता कैसे बनें

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, आज मैं विशेष चर्चा न प्रगट करता हुआ, महर्षि विश्वामित्र और मुनिवरों! देखो, उन्होंने अपनी विवेचनाएं प्रगट की, उन्होंने कहा गो मेधां देखो, यहाँ आत्मा को जानना भी गो मेध कहा गया है, आत्मा को कैसे जाना जाता है? यह बड़ा विचित्र एक प्रसंग है बेटा! आत्मा तो क्योंकि चेतना हैं, आत्मा ज्ञान युक्त है आत्मा देखो, ज्ञान और प्रयत्न इसका मौलिक गुण कहा जाता हैं। आज हम आत्मवेत्ता कैसें बनें मानो देखो, आत्मा को जानना क्या देखो, इस संसार को त्यागना होगा इस संसार से विमुख हो करके ही मेरे प्यारे! देखो, पांचों ज्ञानेन्द्रियों का साकल्य एकत्रित करके मुनिवरों! देखो, यह आत्मवत बनना होगा और यह आत्मवत बन करके ही मेरे प्यारे! देखो, आत्मा मे आत्मा का दर्शन करता है आत्मवेत्ता ही तो दर्शन करता है बेटा!। तो आओ, प्यारे देखो, वह ब्रह्मवेत्ता कहलाता हैं।

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ ने कहा प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों को जानता है, इन्द्रियों के विषयों को जान करके, लघु मस्तिष्क में प्रवेश करता हैं, रेणकेतु मस्तिष्क में प्रवेश करता हैं, और ब्रह्माण्ड का दर्शन करता है, व्यापिक रूप से मानो देखो, वह मेधावी बन करके वह गो मेध याग कर रहा है, और गो मेधावी बन करके बेटा! अपने को अन्तरिक्ष में प्रवेश करा रहा हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, यहाँ महर्षि वशिष्ठ मुनि कहते हैं कि हे विश्वामित्र देखो, तुम्हें भी नाना प्रकार के यागों में परिणत होना हैं, जैसे हमारे यहाँ धनुर्याग का वर्णन आता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, जैसे गो मेध है, इसी की वृत्तियों में रत्त रहने वाला, भ्रमण करने वाला एक याग है जिसे धनुर्याग कहते हैं। धर्नु कहते है, यहाँ अस्त्रों-शस्त्रों को धर्नु कहते है यहाँ सूर्य की किरणों को और धर्नु कहते है आत्मा को जिसका लक्ष्य ब्रह्म को प्राप्त करना है। मेरे पुत्रों! देखो, जैसे एक तरकश मानो उसके लक्ष्य में एक ही ब्रह्म दृष्टिपात आ रहा हैं, तो आओ, मेरे पुत्रों! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, केवल यह कि हमारे यहाँ मेधावी और गो मेध याग करना है, तो बेटा! जिस प्रकरण का वह प्राणी होता हैं, वह उसी प्रकार के यागों में प्रवेश कर जाता हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! महर्षि विश्वामित्र ने कहा धन्य है प्रभु! आप ने मेरे हृदय में प्रकाश कर दिया हैं, प्रभु! मैं तो यह किसी-किसी काल में श्रवण करता रहता था, जब मैं सुनीति नामक राजा था, तो मेरे यहाँ एक पुरोहित आया करते थे, वे पुरोहित मुझे गाथा प्रगट करते रहते थे। आज मुझे वह गाथा स्मरण आ रही है, क्या आपने मुझे क्या बना दिया है मानो एक आलंकारिक वार्त्ता क्या एक यथार्थ वाक् स्मरण आता रहता हैं मानो मनु काल में एक, मनु वंशलज में त्रितिक एक राजा हुए है, त्रितिक नाम के एक राजा हुए हैं, और वह त्रितिक राजा अपने में मानो देखो, अपनी अयोध्या का राष्ट्र मानो उनका एक कृतियों में रत्त होता रहता था, तो राजा के यहाँ त्रितिक राजा के राष्ट्र में मानो एक दूसरे का कोई ऋणी नही था, एक दूसरे में मानो एक दूसरा अपनी प्रीति की चर्चा करता रहता था आध्यात्मिक वेत्ता मानो ब्रह्मवेत्ता उनके राष्ट्र मानो नृत करते रहते थे तो एक समय मानो देखो, एक समय भ्रमण करते हुए त्रितिक राजा अपने सोम मन्त्री के सहित, वह भ्रमण करने के लिए मानो राष्ट्र में भ्रमण करने लगे, जब भ्रमण करने लगे, तो सांय काल का समय हो गया, सांयकाल के समय में उन्होंने क्या दृष्टिपात किया क्या उन्होंने मानो एक नदी के तट पर मानो देखो, एक जलाशय के तट पर एक ऋषि जिस पर कोई वस्त्र नही है, वह मानो नग्न है, वह अपने प्रभु का स्मरण कर रहा हैं, उस ऋषि का नाम श्रुति नाम के ऋषि थे, तो वह श्रुति नाम के जो ऋषि थे, वह तपस्या कर रहे थे तो राजा ने अपने मन्त्री से कहा हे मन्त्रीगण! मेरे राष्ट्र में तो निर्धन कोई नही है मानो धनहीन नही है कोई भी प्राणी, यह मानो कैसे मुझे धनहीन दृष्टिपात आ रहा हैं। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा हे मन्त्री! जाओ, इसे कुछ मुद्रा समर्पित करके आओ, मेरे प्यारे! देखो, वह कुछ मुद्रा ले करके पंहुचे, तो मुद्राओं को दृष्टिपात करते हुए, वह ऋषि ने कहा अरे, किसी दीन को दे दो, उन्होंने कहा ब्रह्मणे व्रता बेटा! मुद्राएं ले करके, वह मन्त्री ने यह जान लिया, यह मुद्रा सूक्ष्म उद्गीत रूपों में गा रहा हैं, जब वह राजा के समीप पंहुचा, तो राजा ने विशेष और मुद्राएं दी, और मन्त्री जब उनके समीप पुनः पंहुचे उन्होंने कहा हे मन्त्रीगण! किसी दीन को दे दो। उन्होंने कहा-प्रभु! ब्रह्मे वह कहा दीनं ब्रह्मे क्या आप से दीन नही, उन्होंने बेटा! देखो, यह वाक् तो उच्चारण कर दिया, परन्तु मनो में यह रहा कि यह मुद्रा सूक्ष्म हैं, वह राजा के समीप पुनः पंहुचे उन्होंने कहा-प्रभु! यह तो कहता है किसी दीन को दे दो। राजा ने विचारा यह मुद्रा सूक्ष्म हो सकती हैं।

राजा उन मुद्राओं को ले करके मानो स्वतः ऋषि के द्वार पर पंहुचे और ऋषि से कहा लीजिए भगवन! यह मेरी सर्वत्र मुद्रांए हैं उन्होंने कहा राजन मैंने कई काल में मन्त्री से यह कहा आप से मैं उच्चारण कर रहा हूँ, यह किसी दीन को दे दो राजा ने कहा-प्रभु! मेरे राष्ट्र में, आपसे दीन कोई नही हैं, क्योंकि मेरे राष्ट्र में एक दूसरे का कोई ऋणी नही है यहाँ प्रातःकालीन मेरे राष्ट्र में मानो देखो, माता-पिता देखो, पुत्रजन क्या प्रत्येक गृह में देखो,

प्रातःकाल देव पूजा होती हैं, माता-पिता ब्रह्मयाग करते हैं, ब्रह्म का चिन्तन होता है, तो ब्रह्म का कोई ऋणी नही है, राष्ट्र में और न देवताओं का ऋणी है, क्योंकि देवता जन मेरे शरीरों में भ्रमण करते रहते हैं, और शरीरो में भ्रमण करने के पश्चात बाह्य जगत में भी वही देवतव है, मानो प्रातः कालीन ब्रह्मचारिणी ब्रह्मचारी माता-पिता मानो देखो, सब याग करते हैं, विद्यालयों में देव पूजा होती रहती हैं, स्वाहा की ध्वनि आती रहती हैं, प्रातःकालीन, प्रत्येक गृह से तो मैं मेरे राष्ट्र में कोई दीन नही हैं, कोई एक दूसरे का ऋणी नही हैं, ऋण को ले करके मानो कोई देना नही चाहता है ऐसा कोई नही, क्योंकि जब ऋणी ही कोई नही हैं, तो हे भगवन! मेरा मनु वंश अद्भवा के हम मानो पौत्र कहलाते हैं। हे प्रभु! हमारे यहाँ यह शिक्षा है राष्ट्रीय प्रणाली में कि देखो, स्वयं देवता बनना है, और प्रजा को देवता बनाना हैं, मानो हम प्रातःकालीन पंच यागों का निर्माण करते रहते हैं मानो देखो, इसीलिए हमारे राष्ट्र में कोई ऋणी नही है, कोई दीन नही हैं, तो इसलिए आप इनको स्वीकार कीजिए, आप से दीन कोई नही है। ऋषि ने कहा हे राजन! क्या मैं ऋणी नही हूँ क्या मैं दीन भी नही हूँ हे राजन! मैं तो मानो राजाओं का भी राजा हूँ।

अब मुनिवरों! देखो, ऋषि ने कहा तो राजा ने कहा-प्रभु! आप राजा हैं तो आपके द्वारा सेना कहाँ हैं उन्होंने कहा क्या ब्रह्म ज्ञानी का संसार में कोई शत्रु नही हुआ करता है क्या जो ब्रह्म ज्ञानी होता हैं आत्मवेत्ता होता है प्रभु को अपने में साक्षात्कार अपने में प्रभु का दर्शन करता हैं और प्रभु को अपने में अपने को प्रभु को जो स्वीकार करता हैं उसको स्वतः सेना की आवश्यकता नही हुआ करती। मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि से यह कहा गया क्या आपको राष्ट्र को चलाने के लिए, गति देने के लिए मानो द्रव्य कहाँ हैं? उन्होंने कहा मुझे आवश्यकता नही होती यदि आवश्यकता होती है, तो मैं पर्वतों का स्वर्ण बना लेता हूँ। मैं विचारों का, पर्वतों का स्वर्ण बना लेता हूँ, और वह स्वर्ण मेरे क्रियाकलापों में प्रायः आते रहते हैं। राजा को यह विश्वास हो गया कि वास्तव में यह स्वर्ण बना लेता होगा, अन्यथा इतने द्रव्य को कौन त्यागता है। मेरे प्यारे! देखो, राजा अपने मन्त्रियों को और वह अपने रथ पर विद्यमान हो करके अयोध्या पुरी को, उन्होंने गमन किया और भ्रमण करते हुए वह अपनी अयोध्या पुरी में आ गये। अयोध्या पुरी में आ करके बेटा! जब रात्रि का काल हो गया अपने कक्ष में पंहुचे तो मानो राजा के मन में यह विचार बारम्बार चिन्तन में आता रहा, अरे, तुझे तो स्वर्णपति के द्वारा जाना चाहिए, और स्वर्ण उससे बनवा लेना चाहिए, तेरा राष्ट्र स्वर्णपति बन जाएगा, मेरे प्यारे! देखो, राजा के मन में जब यह विचार आया, तो मध्य रात्रि में, अपने आसन को त्याग करके वह उसी मानो जलाशय के तट पर, ऋषि के द्वार पर पंहुचे, ऋषि ने कहा आईए, राजन! बेटा! वह विराजमान हो गये, ऋषि ने कहा कहो राजन! कैसे आगमन हुआ? उन्होंने कहा-प्रभु! मैं इसीलिए आया हूँ मेरा जो राष्ट्र है वह स्वर्णपति बन जाना चाहिए, हे प्रभु! मेरी इच्छा यह है कि आप राष्ट्र के लिए कुछ पर्वतों का स्वर्ण बना दीजिए, मेरे प्यारे! देखो, ऋषि बड़े हर्ष ध्वनि में आ करके बोले राजन! बोलो दीन तुम हो या मैं हूँ जो तुम मेरे द्वारा मांगने आए हो मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा-प्रभु! दीन तो मैं ही हूँ परन्तु मेरा स्वर्ण बना दीजिए, ऋषि ने कहा तुम नित्यप्रति मेरे द्वार पर आते रहो, मैं तुम्हारा स्वर्ण अवश्य ही निर्माणित करूंगा।

मेरे प्यारे! देखो, राजा देखो, नित्यप्रति ऋषि के आसन पर जाना, आचार्य को अपना गुरूतव स्वीकार करते हुए, आचार्यतव स्वीकार करते हुए बेटा! उनके चरणों में विद्यमान हो जाना, रात्रि मानो ब्रह्मज्ञान में चिन्तन करते हुए, बेटा! ऋषि यही उपदेश देता रहा, ऋषि कहता है कि हम अपने को प्रभु में दृष्टिपात करने वाले बनें, जब प्रभु को अपने में और अपने को प्रभु में दृष्टिपात कर लेते हैं, तो यह सर्वत्र जगत स्वर्णपति बन जाता हैं वह स्वर्णपति है संसार में, जिसे मानो किसी प्रकार की चिन्ता नही होती, जो चिन्ता से रहित है, जो मानवीयतव ब्रह्म में सदैव संलग्न रहता है, वही तो मानो देखो, स्वर्णपति कहलाता हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि को एक वर्ष हो गया, इसी प्रकार का चिन्तन अध्ययन करते हुए, अपनेपन का अध्ययन करते हुए रात्रि समय जब निन्द्रा की गोद में जाते, तो मनस्तव प्राणतव मानो इसके ऊपर अध्ययन करते रहते और यह कहते कि सबसे महान राजा वह जो अपनी इन्द्रियों पर सयंम करने वाला हैं, जो मन और प्राण को एक सूत्र में लाने वाला हैं, और इन्द्रियों की प्रवृत्तियों को जान करके जो याग में हूत करने वाला हैं। अरे, वही तो मानो सर्वोपरि स्वर्णपति कहलाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने अब एक समय भी नही कहा कि मेरा स्वर्ण निर्माणित कर दीजिए। मेरे प्यारे! कुछ समय के पश्चात ऋषि ने कहा राजन! आज तुम्हारा वह स्वर्ण बनाना चाहते हैं, पर्वतों का जिससे तुम्हारे राष्ट्र का निर्माण हो जाएं, जिससे राष्ट्र तुम्हारा स्वर्णपति बन जाएं, मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने कहा राजा ने कहा जो मानो देखो, मनु वंश में उत्पन्न होने वाले राजा थे। उन्होंने कहा ऋषिवर! आपको धन्य है, जो स्वर्ण आप मेरा बनाना चाहते थे, प्रभु वह मेरा स्वर्ण बन गया हैं, मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने मानो देखो, यह वाक्यं श्रवण किया, तो महर्षि विश्वामित्र ने यह वाक् कहा हे प्रभु! आपने तो मुझे मनु वंश के राजा की भांति आपने मुझे जो नम्रता का उपदेश दिया हैं, नम्रता की धारा जो मेरे अन्तर्हृदय में प्रवेश हो गई हैं, मानो देखो, मेरा स्वर्ण बन गया, प्रभु मैं सर्वत्र मानो ब्रह्मज्ञान में रत्त होने लगा हूँ, मेरी साधना परिपक्व होने जा रही हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, जब महर्षि विश्वामित्र ने यह वाक् उच्चारण किया और मनु वंश के राजाओं का वर्णन किया तो बेटा! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज का अन्तर्हृदय प्रसन्नयुक्त हो गया, और प्रसन्न हो करके बोले कि धन्य है ब्रह्मे व्रताः मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मवेत्ता ने कहा हे ऋषिवर! तुम मानो देखो, नाना प्रकार के याग को जानते हो, उन्होनें कहा-प्रभु! मैं कुछ नही जानता जब आपके चरणों में, मैं विद्यमान होता हूँ तो माता अरूणधती और वशिष्ठ मुनि ही मेरे समक्ष मानो दृष्टिपात आते रहते हैं उनके विचारों को, उसी उदगार रूप में अपने में उद्गम करने लगता हूँ विचार-विनिमय करने लगता हूँ और वही विचार जो मानो देखो, पूर्णिमा के चन्द्रमा की भांति देखो, तपस्या का जहाँ वर्णन आता रहता है। उस वर्णन शाला में मैं अपने को प्रायः जब मन्थन में ले जाता हूँ। तो प्रायः मुझे देखो, ब्रह्म ही ब्रह्म दृष्टिपात आने लगता है।

तो मानो बेटा! जब ऋषि ने इस प्रकार अपने उदगार प्रगट किए उन उद्गारों में रत्त होने वाले महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा धन्य है धन्य है ऋषिवर आपका जो तप है वह पर्ण रूपेण बन गया है धन्यं ब्रहे ऐसा उच्चारण करने के पश्चात बेटा! देखो, शान्त मुद्रा में मुद्रित हो गये, मध्य रात्रि हो गई मध्य रात्रि में बेटा! विश्राम शाला में, मानो विश्राम करने लगे प्रातःकाल हुआ प्रातःकालीन मानो अपनी क्रियाओं से जो दैनिकक क्रियाएं हैं उनसे भी निवृत्त हो गये, ऋषि की दैनिक क्रियाएं यह होती हैं, मानो प्रातःकालीन मानो संतोष से अपने को जागरूक करना है। जागरूक जागरूक करके मानो सूर्य उदय होने से पूर्व अपने में मानो प्रभु का स्मरण करना देव याग में परिणत हो जाना, देवताओं का स्मरण करना, वह हमारे शरीर में मानो पंच देवता मानो रमण करते रहते हैं। मानो देखो, जिसको पृथ्वी देखो, गुरूतव तरलतव और तेजोमयी यह परमाणुओं का अध्ययन करना और मानो देखो, गति देने वाली वायु का अध्ययन करना और जहाँ वह गतिवान होते हैं। अन्तरिक्ष के ऊपर अध्ययन करना वह मानो देखो, अध्ययन करते-करते अपने को प्राण और मन को इसके स्वरूप में स्वीकार करना यह मानो देखो, उसकी दैनिक क्रिया कहलाती हैं।

वह दैनिक क्रिया मे रत्त हो करके समाप्त हो करके उसके पश्चात वह आचार्य के समीप पंहुचे, विश्वामित्र ने ऋषि से कहा-प्रभु! मेरे सुयोग्य कोई, क्रियाकलाप, आप वर्णन कीजिए, जिससे मैं आपके चरणों से वृत्त हो करके प्रभावित हो करके, प्रभु! मैं इस समाज को या संसार को या प्रभु के राष्ट्र में हम आए हैं क्योंकि-प्रभु के बड़े

आभारी रहते हैं, प्रभु के क्रियाकलाप उच्चारण कीजिए। मेरे प्यारे! देखो, उस समय महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने जब कई समय हो गये, यह उदगार उत्पन्न करते हुए, उद्घोष करते रहे तो महर्षि विश्वामित्र से एक समय वशिष्ठ ने कहा जाओ, यदि तुम देखो, यदि मेरी आज्ञा का पालन करना है, तो तुम धनुर्याग जानते हो, जाओ, तुम अयोध्या के राजकुमारों को ले करके, तुम दण्डक वनों में एक धनुर्याग करो, क्योंकि धनुर्याग करना ही हमारा कर्तव्य है, क्योंकि देखो, राष्ट्र ब्रह्मे जिस विद्या को, हम अपने में ग्रहण किये, राष्ट्र की ध्वनि पर, ग्रहण की और वे परमपिता परमात्मा की छत्र छाया में, मानो उस विद्या का हमें प्रसार करना चाहिए, उस विद्या का हमें उद्घोष करना चाहिए, क्योंकि तुम धनुर्याग जानते हो राजा थे, उसके पश्चात राष्ट्रीय वातावरण में देखो, तुम्हारा जो जीवन रहा हैं उसमें सदैव तुम धनुर्यागी बने हो, मुझे प्रतीत हैं और उसके पश्चात वह विद्या तुम्हारे समीप है, इस विद्या को मानो देखो, तुम अयोध्या का राष्ट्र मानो ऊँचा बनाने के लिए और उसमें आध्यात्मिक और देखो, चरी सात्विक वातावरण को प्रसारण करने के लिए, तुम्हें धनुर्याग करना होगा। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि विश्वामित्र ने, वशिष्ठ की आज्ञा पाई, और उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! आप जैसा भी मुझे उद्गीत रूपों में गायेंगें, अथवा वचन कहोगे, उसको स्वीकार कर लूंगा। मेरे प्यारे! देखो, आध्यात्मिकवाद ब्रह्मवेत्ता बनने के लिए मानो कितना पुरूषार्थ, कितना परिश्रम करता रहता हैं, बेटा! आत्मोन्नित करना यह मानव का सर्वोपरि मानो एक क्रियाकलाप माना गया है, शारीरिक बल हमारा ऊँचा हो, तो आध्यात्मिक बल भी होना चाहिए आध्यात्मिक बल ऊँचा होने से ही, मानो देखो, ब्रह्मवेत्ता बनता हैं, ब्रह्मनिष्ठ बनता हैं, नम्रता का स्रोत आ जाता हैं, परमात्मा का वह एक कण-कण मे दर्शन करता हैं, तो मेरे प्यारे! ऐसा जो अनूठा जो विचारक होता हैं, अपने में धारयामि बनाता है, वह एक महान बन जाता है, आज मैं बेटा! विशेष चर्चा देने नही आया केवल तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूँ, और वह परिचय क्या है, बेटा! जो आज मैंने तुम्हें परिचय दिया हैं, संसार में अपने को बनाना है, प्रतिभा को ऊँचा बनाना है, वेद की पवित्र विद्या को ले करके तुम्हें बुद्धिमान देव पूजा में मानो संगतिकरणों में परिणत हो जाना है। तो मेरे प्यारे! देखो, यह महाराज विश्वामित्र ने वह स्वीकार कर लिया, और स्वीकार करके देखो, उन्होंने देखो, दण्डक वनों में एक याग की रचना की, एक याग की रचना की, तो जिसको हमारे यहाँ धनुर्याग कहा जाता हैं। इसकी चर्चाएं बेटा! मैंने कई काल में वर्णन की है। कई कालों में इसका उद्घोष किया है, धनुर्याग का अभिप्रायः यह है, क्या देखो, ब्रह्मचारियों को धनुर्याग में परिणत कराने का अभिप्रायः यह कि अस्त्रों-शस्त्रों की विद्या का अध्ययन कराना, और मानो यन्त्रों का निर्माण करना लोक-लोकान्तरों में जाना अपने पितरों का विज्ञान से दर्शन करना, इन पितरों को मानो देखो, अन्तरिक्ष में द्यौ लोक में जाते हुए, दृष्टिपात करने का नाम बेटा! धनुर्याग कहा जाता हैं। धनुर्याग का अभिप्रायः यही है, जो बेटा! देखो, महर्षि विश्वामित्र के संरक्षण में देखो, हमारे यहाँ देखो, भगवान राम लक्ष्मण, शत्रुघन, भरत इत्यादि सभी ने बेटा! देखो, इनके यहाँ धनुर्याग की शिक्षा को प्राप्त की। यह विद्यालय मानो दण्डक वनों में था बेटा! मुझे समय मिलेगा मैं प्रायः यह चर्चा तो किसी काल में करूंगा, आज का विचार तो यह है कि आज हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाएं। यह संसार ऐसा विचित्र है, इस संसार को जानना मानो इसमें प्रभु का दर्शन करना है, मेरे प्यारे! देखो, यह ब्रह्माण्ड उस प्रभु का आयतन हैं, उसका गृह है, उसका सदन है, मानो इस सर्वत्रता में वास करने वाला हैं। मेरे प्यारे! देखो, परमपिता परमात्मा व्याप्य और व्यापक रूप से रहने वाला हैं, बेटा! व्याप्य में व्यापकता का दर्शन केवल प्रभु का होता है, तो यह है बेटा! आज का वाक्, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हमारे यहाँ आध्यात्मिकवाद बेटा! देखो, व्यष्टि से समष्टि में प्रवेश कराता रहा हैं, व्यष्टि से समष्टि में और समष्टि में मानो देखो, प्रभु के आत्मा का दर्शन करना, आत्मा का दर्शन यह कि जब समष्टि में प्रवेश कर जाता हैं, तो मानस्तव और प्राणतव दोनों को एक

सूत्र में लाना यह दोनों एक ही सूत्र के मनके हैं शेष अनुपलब्ध.... ०८ मार्च १९८८

७ द्यौगामी चित्र ०९ ०३ १९८८

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परगतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, हमारे यहाँ यह पाठयक्रम परम्परागतों से ही, विचित्र माना गया है, क्योंकि नाना प्रकार के, हम एक-एक ध्वनियों का, ध्वनित रूपों में, वेदमन्त्रों का गान गाते रहे हैं, और नाना ऋषिवर, अपनी-अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके, इस वेदज्ञ ध्वनि के द्वारा, अपनी मानसिक प्रवृत्ति को प्रायः ऊर्ध्वा में ले जाने का प्रयास करते रहते हैं। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र, यज्ञोमयी स्वरूप का वर्णन कर रहा हैं, मानो देखो, वे परमपिता परमात्मा इस यज्ञोमयी स्वरूप है, याग उसका आयतन है, उसका गृह हैं, उसका सदन माना गया है वह उसी में ओत-प्रोत रहने वाला पुरोहित कहलाता हैं हमारे यहाँ पुरोहित के सम्बन्ध में, भिन्न-भिन्न प्रकार की विवेचनाएं, प्रायः होती रही हैं और वर्णन वेत्ताओं ने यह वर्णन किया है, क्या जो पराविद्या को जानने वाला, परमपिता परमात्मा की महती में सदैव रत्त रहा हैं, वे परमपिता परमात्मा पुरोहित कहलाता हैं। आज हम पुरोहित बनने के लिए, सदैव तत्पर रहें और उस परमपिता परमात्मा को पुरोहित और जो पराविद्या में रत्त रहने वाला देवतव हैं, उसको हम पुरोहित अपने में स्वीकार करते हुए, और यज्ञं ब्रह्मणां ब्रहा कृतं मानो उस ब्रह्म की विवेचना में सदैव तत्पर रहें।

तो आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ हमें प्रेरित कर रहा हैं। क्योंकि यहाँ प्रकृति का एक-एक कण-कण, एक-एक दूसरें कणों को प्रभावित करने वाला है और मानव को विशेषकर प्रेरणा को प्राप्त करते ही, प्रेरित होता हुआ नाना प्रकार की विवेचनाओं में और क्रियाकलापों में लगा रहता है। तो इसी प्रकार आज का हमारा वेदमन्त्र हमें कुछ प्रेरणा दे रहा हैं, यागां भवितां ब्रह्मणां यागां रूद्र वेस्स स्वस्ता मानो वेद का मन्त्र यह कहता है कि हे मानव! तू याज्ञिक बन, तू परमपिता परमात्मा में इस संसार की, जो रचना की मानो जो इस वेदी का निर्माण किया तो यह यज्ञोमयी वेदी कहलाती हैं यहाँ प्रत्येक मानव, प्रत्येक प्राणी मात्र मानो यागों में परिणत रहा हैं, याग उसे कहते हैं, जो देवतव से सम्बन्ध हैं, और देवता जिससे महानता का दर्शन अपने में निहित करने लगते हैं, तो उसको यागां ब्रह्मा उसको याग कहा जाता है एक दूसरा प्राणी, प्राणी में ही ओत-प्रोत होता हुआ, एक दूसरें में इस ब्रह्माण्ड की कल्पना करता हुआ, मानो देखो, वह अपने में यागां ब्रह्मणां यागा वह याग माना गया हैं। प्रायः वास्तव में जब हम अपने में, अपनेपन और ब्रह्माण्ड को विचारने लगते हैं, तो प्रायः ऐसा दृष्टिपात होता है, कि हम, उस मनोनीत परमपिता परमात्मा, जो पुरोहित हैं, उसी की पराविद्या को अपने में धारण कर रहे हैं, और याग में परिणत हो रहे हैं जैसे आज का हमारा वेदमन्त्र, हमें ये प्रेरणा दे रहा है क्या प्रत्येक प्राणी मात्र इस ब्रह्माण्ड में याज्ञिक बना हुआ हैं और वह याग करता रहता हैं। परन्तु याग का अभिप्रायः जितने भी सुक्रियाकलाप है, सुकर्म है, आत्मीय प्रसन्नता वाले, जितने भी क्रियाकलाप हैं, उन सर्वत्र का नाम एक याग माना गया हैं। मानो देखो, जैसे राजा अपने राष्ट्र में प्रजा को ऊँचा बनाना चाहता है, और प्रजा में एक महानता की ज्योति देना चाहता हैं तो मुनिवरों! देखो, यागां ब्रह्मणां ब्रहे वह प्रिय याज्ञिक बना हुआ हैं, और वह याग कर रहा हैं।

मेरे पुत्रों! हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न आचार्यों ने इस याग के सम्बन्ध में बड़ी अनूठी उड़ाने उड़ी हैं, क्योंकि आचार्य जनों का यह कथन रहा हैं, क्या एक-एक शब्द में मानो देखो, द्यौ लोक का निर्माण होता रहता है। एक-एक परमाणु में ब्रह्माण्ड का दर्शन होता रहता हैं। यह विज्ञानवेत्ताओं का एक कथन रहा है। तो मुनिवरों! देखो, आज मैं याग के सम्बन्ध में तुम्हें बेटा! एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ, जहाँ ऋषि-मुनि अपने में बड़ा

एक अनूठा अनुसन्धान करते रहे हैं। मैंने यह वाक् तुम्हें कई कालों में वर्णन किया है, बहुत समय मैंने इसकी पुनरूक्तियां भी की हैं, परन्तु देखो, स्मरण आता है तो अन्तरात्मा, अन्तर्हृदय गद-गद हो जाता हैं। मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहता हैं, एक समय महर्षि वैशम्पायन ऋषि महाराज मेरे प्यारे महाराजा अश्वपति के यहाँ से अश्वमेध याग का, सम्पूर्णता को प्राप्त करके, अपने आश्रम में, उनका पर्दापण हुआ। परन्तु देखो, जब वह निन्द्रा की गोद में जाते थे, तो ऋषि वेदों का अध्ययन करते-करते, वह निन्द्रा में तल्लीन हो जाते थे। मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ, ऐसे ऋषि हुए हैं जो वेदमन्त्रों के द्वारा उद्गीत गाते हुए, वह गान गाते हुए वह निन्द्रा में तल्लीन होते रहे हैं। परन्तु वेद का मन्त्र यदि उद्गीत रूपों में नही गाया गया हैं, तो निन्द्रा से वंचित रहे हैं, तो उनमें एक ऋषि महाराज वैशम्पायन भी थे महर्षि वैशम्पायन बेटा! कुछ वेदमन्त्रों का उद्घोष अथवा उद्गीत गाते हुए मानो देखो, सांय काल के समय, जब निन्द्रा की गोद में जाने के लिए तत्पर हुए, तो कुछ न्यौदा में मन्त्र, उन्हें स्मरण आये, और वह मन्त्र यह कहता है यज्ञं ब्रह्मा वेदस्वस्तप्रह्वा वाचन्नमं ब्रह्मा द्यौ लोकाः यज्ञमान रथं ब्रहे, मानो देखो, यज्ञमान का रथ बन करके, द्यौ लोक में प्रवेश करता हैं। तो द्यौ लोक वाले रथ को स्वाभाविक हैं, क्या जब वेदमन्त्र कहता है, तो द्यौ लोक वाले रथ को दृष्टिपात करने की उत्कट प्रायः इच्छा बनी रहती है। जब बेटा! देखो, ऋषि यह मंगलं ब्रहा विचार करता हुआ, बेटा! निन्द्रा की गोद में चला गया और मध्य रात्रि में जब जागरूक हुए, मानो वही वेदमन्त्र स्मरण आने लगे, वेदमन्त्र कह रहा था कि यज्ञमान का रथ बन करके, वह रथ में विद्यमान हो करके वह द्यौ लोक को जाते रहे मानो देखो, ऋषि कहता है कि वेदमन्त्र तो मिथ्या हो नही सकता और इसका निर्णय कैसे किया जाएं, साक्षात्कार कैसे इसे दृष्टिपात किया जाएं, तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि विचारने लगा, और अपने चिन्तन में अपना एक विषय बनाया परन्तु अपने में वह अपना निमटारा नही कर सका। प्रातःकाल होते ही, सूर्य उदय हो गया महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज का आश्रम निकटतम में था। परन्तु उन्होंने विचारा आज ऋषि ने अपने आसन को नही त्यागा हैं, इसके मूल में कोई न कोई रहस्य विद्यमान हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज ने अपने आश्रम, को त्याग करके, वह वैशम्पायन के द्वार पर पंहुचे, और महर्षि वैशम्पायन मुनि बोले कि कहो भगवन! आज अपने आसन को नही त्याग रहे हो इसके मूल में क्या है? मैं प्रभु का दर्शन और यह विचार रहा हूँ, कि वेदां ब्रह्मं चित्रं रथं मानो देखो, यह चित्र बन करके द्यौ लोक में प्रवेश हो जाते हैं और यज्ञमान का रथ भी मानो देखो, द्यौ लोक को प्रवेश करता रहता हैं, तो प्रभु! मैं वह द्यौ लोक वाले रथ को दृष्टिपात करने की अभिलाषा से, मैं अनुसन्धान कर रहा हूँ। मेरी प्रबल इच्छा बन चुकी है।

मेरे पुत्रों! देखो, इसी चिन्तन में विभाण्डक मुनि भी अपने विचारों में तत्पर होने लगे परन्तु दर्शन तो कह रहा हैं, क्या मानो देखो, द्यौ लोक में रथ जाता हैं, और साक्षात्कार कैसे दृष्टिपात किया जाएं? मेरे प्यारे! विचार-विनिमय होते हुए, बहुत-सा समय व्यतीत हो गया। तो मुनिवरों! देखो, वहाँ और भी नाना ऋषि-मुनियों का, एक समाज आ पंहुचा जिसमें ब्रह्मचारी कवन्धि और सुकेता जो बड़े महान विज्ञानवेत्ता थे। और वह याज्ञिक भी कहलाते थे परन्तु महर्षि वैशम्पायन के द्वार पर त्रिवेत ऋषि महाराज और पारेत्वर और मोहि कृतिका प्रवाहण, शिलक और दालभ्य इन सर्वत्र ऋषि-मुनियों का एक आगमन हुआ, ऋषि प्रवाहण ने कहा कि महाराज! यह क्या कारण है कि आप शून्यता को प्राप्त हो रहे हैं? उन्होनें कहा-प्रभु! हम शून्यता में नही है वेदमन्त्र कहता है कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ लोक को जाता है, उस द्यौ लोक वाले रथ को दृष्टिपात करना चाहते हैं। क्योंकि विज्ञान के तथ्य में इस प्रकार का निर्णय दे रहे हैं आध्यात्मिकवादी भी इस प्रकार का अपना निर्णय दे रहे हैं, परन्तु हम अपने में कोई निमटारा नही कर रहे हैं तो हे प्रभु! हमारी इच्छा यह है कि हम साक्षात्कार रथ को दृष्टिपात करना चाहते हैं। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम इसी विचार को ले करके उन्होंने एक विचार किया, क्या हम देखो, हमारे समीप

दो ऐसी स्थली है, जहाँ हम इसका निर्णय कर सकते हैं, एक तो उद्दालक गोत्र में शिकामकेतु ऋषि हैं, जो उनकी पति और पत्नी दोनों एक सौ पिचासी वर्ष हो गएं हैं, अनुसन्धान करते-करते मानो द्वितीय हमारे यहाँ भारद्वाज मुनि का आश्रम हैं, भारद्वाज मुनि के यहाँ ब्रह्मचारी अध्ययन करते हैं, वह भी निर्णय पर पंहुचा सकते हैं। परन्तु द्वितीय यह कि अयोध्या में जा करके, क्रियात्मक याग की रचना हो और उमसें निमन्त्रण के कथनानुसार ऋषियों का आगमन हो तो मानो वह भी अपना कोई व्यक्तव्य प्रगट कर सकते हैं। मेरे प्यारे! देखो, इसी विचार को ले करके महर्षि वैशम्पायन मुनि ने विचारा अब कहाँ जाना चाहिए, मानो चलो अयोध्या में अपना गमन करते हैं और राम से एक याग का आयोजन होना चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि इस संकल्प को ले करके, उन्होंने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते बेटा! सांयकाल का समय हो गया, तो सुनीति विश्वानं ब्रह्मे कृतं ब्रह्मा मानो शौनक ऋषि आश्रम मानो उन्हें प्राप्त हुआ, महर्षि वैशम्पायन मुनि और भी ऋषि, शौनक ऋषि के आश्रम में वह विराजमान हो गएं उन्होंने बेटा! अतिथि, सेवा किया, अतिथि करने के पश्चात निन्द्रा की गोद में चले गये। प्रातःकाल होते वहां से उन्होने बेटा! गमन किया, और भ्रमण करते हुए बेटा! अयोध्या में आ पंहुचे।

भगवान राम का उपदेश

हमारे यहाँ एक नियम माना गया क्या मानो देखो, इस अयोध्या में नाना प्रकार के यागों का आयोजन होता रहा है, नाना प्रकार के याग अपनी स्थलियों पर रमण करते रहे हैं, तो हे प्रह्वा सम्भवा वरुणां ब्रह्मे कृतं ब्रह्मा मानो देखो, एक यागां सम्भवा, मेरे प्यारे! देखो, राम का यह कर्तव्य था कि प्रातःकालीन यज्ञशाला में विद्यमान हो करके और यज्ञशाला में अपने में गमन करते हुए, वह उद्घोषणा, उद्घोष करते रहते थे। तो मुनिवरों! देखो, जब वह ऋषियों का आगमन हुआ, याग तो सम्पन्न हो गया था परन्तु देखो, उपदेश मञ्जरी प्रारम्भ हो गई थी, राम का यह कर्तव्य था कि वह याग करने के पश्चात कुछ उपदेश मंजरियों में परिणत होना, उनका कर्तव्य था। तो मेरे प्यारे! जब उपदेश हो रहे थे, ऋषिवर अपने-अपने आसनों पर विद्यमान हो गएं क्योंकि यज्ञशाला में ब्रह्मवेत्ताओं का आसन भिन्न लगा हुआ, ब्रह्मवर्चोसि और जो ब्रह्म का चिन्तन और मनन करने वाले उनकी स्थली भिन्न हैं मानो देखो, जब उनका आगमन हुआ, तो अपनी-अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो गये, राम का उपदेश चल रहा था, अपनी उपदेश मञ्जरी प्रारम्भ हो रही थी, राम ये उस समय उच्चारण कर रहे थे कि हमें अपने राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाना हैं, क्योंकि हमारे यहाँ बेटा! वैदिक साहित्य कहता हैं ऐसा साहित्य जहाँ आत्म चर्चाएं और राष्ट्रवेत्ता बनाने के लिए हो यह प्रबल इच्छा रही हैं। मानो देखो, हमारे यहाँ, बेटा! प्रबल इच्छाओं में यह प्राणी मात्र लगा हुआ हैं, तो मेरे प्यारे! देखो, जब वह ऋषिवर अप्रतं ब्रह्मा वर्णो ब्रहे केतुं हिरण्यं रथा मेरे पुत्रों! देखो, मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा हैं, ऐसी कुछ प्रतीति हो रही है, जैसे बेटा! महर्षि वैशम्पायन अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके, ऊर्ध्वा में उड़ाने उड़ रहे हैं परन्तु राम का उपदेश यह प्रारम्भ था, कि हे राष्ट्रवेत्ताओं! तुम्हें अपने राष्ट्र को उन्नत बनाना हैं, और राष्ट्र उस काल में उन्नत होता हैं जब एक ही विचारधारा प्रजा में होती हैं एकोकी विचारों का प्रादुर्भाव करने वाला मानो देखो, द्वितीय पन्न होता हैं।

तो मुनिवरों! देखो, यज्ञं ब्रह्मा कृतं विश्वा रूद्रो भागां मेरे प्यारे! देखो, राम उच्चारण कर रहे थे, कि हमें अपने राष्ट्र को उन्नत बनाना है, राष्ट्र में अजामेध यागों का चलन होना चाहिए, अश्वमेध यागों का चलन होना चाहिए परन्तु इससे हमारा राष्ट्र और विचार कृतं हम उसी में विचरण करते रहते हैं। तो आओ, मेरे प्यारे! ऋषि अपने में उद्घोष करते हुए उद्गीत गा रहे हैं उच्चारण कर रहे हैं कि हमें वास्तव में देखो, अपनी प्रतिभा को ऊँचा बनाना हैं। राम का ये कथन है राष्ट्र में एक दूसरा प्राणी प्राणी का सहायक होना चाहिए, जैसे परमपिता परमात्मा ने यह सृष्टि का सृजन किया है आपो जल को सहायता दे रहा हैं आपो ही मानो देखो, अग्नि को उज्ज्वल बना रहा है अग्नि ही

मानो देखो, हिरण्यं अपने में गमन कर रही है और वह गमनतं मानो देखो, समाहित हो रही है। तो मेरे प्यारे! देखो, यह भव्य विचार देते हुए आचार्य जन कहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, आचार्य जनों ने एक वाक् कहा, क्या हम प्रायः अपने में उज्ज्वल बन करके, सागर से पार हो सकते हैं, और यदि हमारा उज्ज्वल स्वरूप नही रहा, तो हम इस संसार में मानो रत्त रहते रहेंगें। तो विचारा मेरे प्यारे! राम उच्चारण कर रहे थे, राजा के राष्ट्र में हे राष्ट्रवेत्ताओं! प्रत्येक गृह में तुम्हारे याग होना चाहिए, प्रत्येक गृह में सुगन्धि होनी चाहिए, जिससे तुम्हारा राष्ट्र पवित्रतम् बन करके सागर से पार हो जाएं। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, जब यह उद्घोष हो रहा था यह विचार हो रहा था, तो राम का यह कथन था कि हम अपने को ऊर्ध्वा में और ध्रुवाणि ब्रह्मणे हम ऊर्ध्वा में अपने को ले जाना चाहते हैं, मेरे प्यारे! राम के बहुत से उपदेश, ऐसे गम्भीर मुद्रा का वर्णन कर रहे थे, जैसे उन्होंने कहा पवस्वां ब्रहे वृतं मानो देखो, मानो देखो, पवस्वा का अर्थ नही जान पाते, तो पवस्वा का मन्तव्य यह है क्या मानो अपने मानो देखो, मन्तव्य को जान करके, प्राण सुति सम्मिलित करके मानो देखो, उसको जानना ही अस्तुत कहलाता हैं तो मेरे प्यारे! विचार क्या, मैं विचार यह तुम्हें देने के लिए गम्भीर मुद्रा में ले जाना नही चाहता हूँ विचार केवल इतना है कि हम अपने मानवीयतव को ऊँचा बनाने के लिए और राष्ट्र को सम्पन्न बनाने के लिए और राष्ट्र मे एक दूसरा मानो अपने क्रियाकलापों से निहित होता रहे। मेरे प्यारे! देखो, वह राष्ट्र और मानवता की चर्चाएं प्रायः हुआ करती हैं। परन्तु देखो, इस स्थली पर आ जाओं, जहाँ मानव अपने में मानवीयता का, हर्ष ध्वनि करता हुआ, उद्गीत गा रहा हैं, उच्चारण कर रहा है कि हम अपने को द्यौ लोक में ले जाना चाहते हैं। वह रथ कैसे बनता है।

मेरे प्यारे! देखो, राम का यह उपदेश जब सम्पन्न हो गया, तो राम ने दृष्टिपात किया कि यहाँ तो ब्रह्मवेत्ता, ऋषिजन विद्यमान है, उन्होंने बारी-बारी उन ऋषियों के चरणों को स्पर्श किया और कहा कि महाराज! आप बिना सूचना के मेरे राष्ट्र में आपका आगमन हुआ है, मैं यह नही जान पाया हूँ क्या आपका आगमन इस प्रकार क्यों हुआ है? तो मेरे प्यारे! आगमनं ब्रहे कृतप्रह्वा वसु रूद्र भागं ब्रह्मा महर्षि वैशम्पायन बोले कि-प्रभु! हम न्यौदा में से मन्त्रों अध्ययन कर रहे थे, परन्तु अध्ययन की प्रतिक्रिया में यह आता रहा है कि यागां ब्रह्मे कृता याग होना चाहिए, क्योंकि याग से महानता का प्रायः हमें दर्शन हो रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने कहा कि हम याग के लिए आए हैं, राम तुम्हारे यहाँ एक याग होना चाहिए। तो मेरे प्यारे! राम ने ब्रह्मर्षि के वाक्यों को पान करते हुए भगवान राम ने कहा यह तो हमारा सौभाग्य है, हम अवश्य याग में परिणत होना चाहते हैं, मेरे प्यारे! देखो, राम रामां ब्रह्वे कृतं सभा विर्सजन हो गई, ऋषि-मुनि अपने कक्ष में जा पंहुचे, अपने-अपने कक्षों में जा पंहुचे, तो मुनिवरों! देखो, ऋषि का जैसा आसन था, उसी प्रकार उसमें रत्त हो गये, विश्राम गृह में विश्राम गृह में विश्रामशाला में विश्राम करने लगे। मेरे प्यारे! देखो, राम ने इतने समय में यज्ञशाला का भी निर्माण किया। यज्ञं ब्रह्मा यज्ञं रूद्रा यज्ञं विष्णु कृतं रूद्रा वर्णा सुतः मेरे प्यारे! देखो, जब याग की प्रतिभा का जन्म हुआ वेदी का निर्माण हो गया, तो ऋषि यज्ञशाला में अपनी-अपनी आभा को ले करके, पाण्डितव विद्यमान हुए, मेरे पुत्रों! देखो, मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है बेटा! आज कि जैसे हम राम की यज्ञशाला में विद्यमान है, और राम का वह क्रियाकलाप चल रहा हो, प्रारम्भ हो। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने अभ्यो ब्रह्मा कृतं देवाः अश्वमेध याग में परिणत होना है, और वृष्टि यागों को जानना हैं, और ब्रह्मयाग को मेरे प्यारे! अपने हृदय में धारण करना है। तो बेटा! विचार आता रहता हैं, नाना प्रकार के विचार, गम्भीर मुद्रा में मुद्रित होते रहते हैं, मेरे प्यारे! देखो, याग वह सम्पन्न हो गया, उन्होंने यज्ञशाला का निर्माण किया, और निर्माण करके बेटा! देखो, उसमें नाना पाण्डितव विद्यमान हो गएं और विद्यमान हो करके मुनिवरों! उन्होंने याग का प्रारम्भ किया, न्यौदा में मन्त्रों का उद्गीत गाया, तो मेरे प्यारे!

देखो, उसमें आनन्द युक्त अपनी क्रियाओं में दृष्टि वाक् कृतियों में दृष्टिपात नही हुए। तो मेरे पुत्रों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा हैं ऐसा प्रतीत हो रहा है, कि जैसे मानो देखो, यज्ञशाला का दिग्दर्शन कर रहे है। मेरे प्यारे! जैसे ब्रह्मपुरी मानो देखो, ब्रह्मा का आसन आ गया हो, याग प्रारम्भ होने लगा, याग में और भी नाना घटित घटनाएं होती रहती हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, जैसे यागां ब्रह्मणे व्रतं याग का उन्होंने प्रारम्भ किया तो याग में एक मन्त्र आया चित्रों रथं ब्रह्मा चित्रं रूद्र वास्स्तप्रहा कृत लोकां मेरे प्यारे! वेद का मन्त्रः बड़ी अनूठी वार्त्ता प्रगट कर रहा है, हृदय में ज्ञान देने वाला, चैतन्य देव है, वह हृदय अगम्य हो करके मानो एक उद्गीत गा रहे थे सम्भवं ब्रह्मा चित्रं रथं ब्रहे वश्वज्ञनं राम ने कहा-प्रभु! वेदमन्त्र यह कहता है कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ लोक को जाता है प्रभु! मैं उस द्यौ लोक वाले रथ को साक्षात्कार हम दृष्टिपात करने के लिए आए हैं, तो मेरे प्यारे! देखो, राम ने कहा, प्रियतम, यह प्रियतम का वाक् तो उन्होंने प्रगट किया, परन्तु ऋषि-मुनि अपने में निर्णय देने लगे, राम ने यह उद्घोष कर दिया, जब तक मुझे प्रभु! चित्रों का दर्शन नही होगा, तब तक मैं मानो देखो, स्थली को नही त्यागूंगा।

तो मेरे प्यारे! रामं ब्रह्मा वसु सम्भवं वेद का मन्त्र कहता है कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ लोक में जाता है। तो मेरे प्यारे! उसी चिन्तन में लग गये, समय व्यतीत होने लगा, यही चिन्तन जब आनन्द में जल मग्न होने लगा, क्या हम रामं ब्रहे क्या हम कैसे यह स्वीकार करें।

तो मेरे प्यारे! देखो, विचार चलता रहा, इतने में याग शान्त हो गया और इतने में महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज अपने अस्त्रों-शस्त्रों से क्या अपने वाहनों में विद्यमान हो करके यज्ञशाला में आ पधारे, जब वह विराजमान हो गये, ब्रह्मणा प्रहा सम्भवं लोकां वाचाः मेरे प्यारे! देखो, वह भारद्वाज मुनि ने कहा हे राम! मैं तुम्हारे निमन्त्रण पर आया हूँ, परन्तु तुम्हारा याग शान्त क्यों हो रहा है? तुमने अग्निहोत्र नही किया हैं, उन्होंने कहा-प्रभु! अग्निहोत्र तो मैंने कर लिया हैं, परन्तु वेदमन्त्र मुझे स्मरण आ रहे हैं, और वह वेदमन्त्र यह कहते हैं कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ लोक में प्रवेश करता है, तो मैं उस द्यौ लोक वाले रथ को दृष्टिपात करना चाहता हूँ। भगवन! तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम, ब्रह्मा वाचा सम्भवे मेरे पुत्रों! मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है क्या मुनिवरों! भारद्वाज ने कहा, हे राम! तुम जो यह शब्द उच्चारण कर रहे हो, क्या मैं रथ को दृष्टिपात करना चाहता हूँ, तुम ब्रह्मवेत्ताओं का अपमान तो नही कर रहे हो? क्योंकि ब्रह्मवेत्ताओं के अपमान मानो सहन नही हो पाएगा, तो मैं जानना चाहता हूँ तुम अपमान तो नही कर रहे हो? तो मेरे प्यारे! राम ने चरण वन्दना करते हुए कहा-प्रभु! मेरे में इतनी सत्ता कहाँ है, जो मैं ब्रह्मवेत्ताओं का अपमान कर सकूं, मैं तो इनके चरणों की धूलि हूँ, चरणो की वन्दना करता रहता हूं प्रभु!।

मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् श्रवण करके, भारद्वाज मुनि ने ब्रह्मचारी देखो, रोहिणी केतु और ब्रह्मचारिणी शबरी करे कहा जाओ, कजली वनों से अपनी विज्ञानशाला में से वैज्ञानिक यन्त्रों को लाया जाएं, आज्ञा की देरी थी, बेटा! दोनों ने अपने वाहन में विद्यमान हो करके, अपने आश्रम से कुछ अस्त्र-शस्त्र लिए, चित्र लिए, वह इनको ब्रहा वत्रा उन्होंने दोनों ने वहाँ से गमन किया, और भ्रमण करते हुए जब अयोध्या में आये, तो मेरे प्यारे! देखो, उन्हें साक्षात्कार दृष्टिपात कराया, ब्रह्मणं ब्रह्मा कृतं देवो सम्भवा, इन चित्रावलियों को यज्ञशाला में स्थित किया गया, और यह कहा कि अब तुम याग का प्रारम्भ करो। मेरे प्यारे! अग्नि यागां अग्नि का चयन किया, अग्नि प्रदीप्त हो गई और उसमें साकल्य परिणत करने लगे, तो बेटा! यज्ञशाला में जब आहुति देने लगे, स्वाहा उच्चारण करने लगे, तो बेटा! देखो, अपने में अपनेपन का दर्शन करने के लिए, तत्पर हो गएं और महर्षि वैशम्पायन के हर्ष की कोई सीमा न रही, क्या मानो देखो, जो उन्हें साक्षात्कार चित्रों में दृष्टिपात होने लगा और भारद्वाज ने कहा तुम याग करते रहो, और तुम्हारे स्वाहा के, स्वाहा अग्नि के साथ मानो देखो, तुम्हारे चित्र द्यौ लोक में जा रहे हैं तुम्हारी यज्ञशाला

का जितना आकार बना हुआ है, उसी आकार का रथ बन करके, वह द्यौ लोक में प्रवेश कर रहा हैं, हे ऋषिवर! हे राम! यह तुम दृष्टिपात करो, तुम्हारे चित्र तुम्हें लय हो रहा हैं, राम बड़े प्रसन्न हुए मग्न चित्र हो करके, उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! आपने मेरे अन्तर्हृदय में एक वेदना भरण की, वह वेदना मानो प्रायः मेरे अन्तर्हृदय में विद्यमान रहती हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, जब यह वाक् सम्भव ब्रहे वाचन देखो, याग चलता रहा परन्तु उसमें उनके चित्र दृष्टिपात आने लगे भारद्वाज मुनि बोले कि हे राम! मेरे यहाँ ऐसे-ऐसे यन्त्र विद्यमान है ऐसी-ऐसी चित्रावलियाँ हैं मानो देखो, जो भी तुम क्रियाकलाप कर रहे हो, उसका साक्षात्कार आता रहेगा। मानो देखो, कोई भी, किसी भी प्रकार का क्रियाकलाप प्रारम्भ करता है, वह इस क्रियाकलाप मानो उसके प्रायः उसी को प्राप्त होने लगते हैं। मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है, कितना अनूठा हमारे यहाँ राष्ट्रवेत्ताओं का क्रियाकलाप रहा हैं, मानो याग में कितनी निष्ठा होते हुए, भारद्वाज मुनि महाराज ने अपना कौतुक उद्बुद्ध किया और आगे सम्भवा कृतं मेरे प्यारे! देखो, ऋषियों ने अपना एक नियम बनाया, यागां भवा सम्भवे यागां रूद्र वाचप्रहे पृथ्वी मेरे प्यारे! देखो, यह नियमावली बन गई, क्या हम प्रायः याग का प्रारम्भ अवश्य मानो देखो, याग में परिणत हो जाएंगें, मेरे प्यारे! मुझे कुछ ऐसा स्मरण है वह याग लगभग एक-एक रूद्र भागां में चलता रहा, भारद्वाज कहते है। मेरे यहाँ ऐसे-ऐसे यन्त्र हैं, राम! मानो एक एक-एक रक्त के बिन्दु से मानव का चित्रण होता रहता है जिस मानव का रक्त का बिन्दु हैं। एक-एक बिन्दु में ब्रह्माण्ड का दर्शन हैं एक-एक बिन्दु में चित्रवलियां निहित रहती है एक-एक बिन्दु में बेटा! देखो, राष्ट्र और मानवीय तथ्य मानो उसी में निहित रहते हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि अपने में अनुभव और स्वाहा कहता तो चित्रों का दर्शन करने लगे, और वह दर्शनों से गुथा हुआ, वेद की तरंगें मुनिवरों! जब वाणी में आ गई, जब मुनिवरों! याग में परिणत हो करके, और यही यागां यही याग मेरे प्यारे! देखो, मानव को द्यौ लोक में पंहुचाता है द्यौ लोक मे प्रविष्ट कराता हैं तो मेरे पुत्रों! देखो, याग प्रारम्भ रहा, याग लगभग छ माह तक, याग चलता रहा। परन्तु यागां भवि प्रणं ब्रह्मा कृतं यागां भविते सम्भवा बेटा! एक वर्षों तक, वह याग प्रारम्भ रहा, एक वर्ष के पश्चात मानो वह सम्पन्न हो गया, वह याग सम्पन्न हो करके बेटा! अपने रूद्र रूपता अपने में मौन हो गये, मेरे प्यारे! देखो, आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, कि केवल ये वाक् कि मानव प्रेरित रहता है, प्रेरणा के आधार पर अपने वाक्यों को उदबुद्ध करता रहता है मानव प्रेरित होना चाहिए, नाना प्रकार की वृत्तियाँ उसमें बेटा! निहित रहती हैं।

आज मैंने कुछ मानो याग के सम्बन्ध में अपने विचार दिए हैं, क्या याग अपने में कितना अनूठा है, वेद के मन्त्रों पर स्वाहा की धारा पर, अग्नि की तरंगों पर देखो, यज्ञशाला का रथ बन करके, बेटा! देखो, द्यौ लोक में प्रवेश हो जाता हैं, इसे सिद्ध कराया। परन्तु आज मैं अपने महानन्द जी अपने दो शब्द उद्गीत रूपों में, तत्पर मानो देखो, वृत यह कि इतनी प्रबलता है।

पूज्य महानन्द जीः- ओ३म् रथं मन्थाः दिव्यां गतौ सर्वाम्। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल! मेरे भद्र समाज! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव चर्चा कर रहे थे प्रायः विज्ञान अपनी स्थलियों पर रहा हैं। और नाना चित्रों का दर्शन करना, यह प्रायः परम्परागतों से रहा है मेरा अन्तर्हृदय, मेरा अन्तरात्मा मानो यज्ञमान के साथ रहता है और मैं यह कहता रहता हूँ हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, प्रायः मेरी अन्तरात्मा यही यज्ञं ब्रह्मा उस यज्ञमान का सौभाग्य हैं जिनके गृहों में मानो देखो, देव पूजा के द्वारा याग के द्वारा प्रायः द्रव्य का सदुपयोग होता हो क्योंकि मानव की अन्तरात्मा की यह भव्यता है क्या वह अपने द्रव्य का सदैव सदुपयोग करता रहे और मेरा तो अन्तरात्मा सदैव यह उद्गीत गाता ही रहता है, क्योंकि बहुत समय हो गया महाभारत काल के पश्चात इन यागों का ह्रस भी हुआ, मानो इन यागों में मांसो की आहुतियाँ भी दी और देखो,

उसके पश्चात भी याग अपनी स्थलियों में प्रायः कोई न कोई उदबुद्धता करता ही रहता है, क्योंकि याग ऐसा क्रियाकलाप है, जो अन्तरात्मा से जिसका समन्वय रहता है, यह अन्तरात्मा की मानो एक ध्वनि है, और वह ध्वनित होती रहती हैं। उसी को प्राप्त करके अपने को महान राष्ट्र को ऊँचा बनाता हैं, प्रायः हमने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह वर्णन कराते हुए कहा था यह वर्णन कराते हुए कहा कि यागां ब्रह्मा मानो देखो, जब राष्ट्र अपने में याज्ञिक बन जाता है। तो समाज में भी याग का चलन मानो प्रारम्भ हो जाता है। परन्तु देखो, आधुनिक काल का जो राष्ट्र है प्रायः मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इससे पूर्व काल में रूढ़िवाद के सम्बन्ध में विवेचना प्रगट की, परन्तु प्रायः जो रूढ़िवाद हैं, वह समाज का, एक अन्धकार के रूप में देखो, एक रूढ़ि विचरण कर रही हैं, और वही रूढ़ि राष्ट्र को मानो देखो, अन्धकार में पंहुचा रही हैं, मैं यह कहता रहता हूँ हे राजन! यदि तू अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है, तो तेरे राष्ट्र में याज्ञिक पुरूष होने चाहिए। यदि तू अपने राष्ट्र को शान्ति में परिणत करना चाहता है, तो तेरे यहाँ एकोकी विचार होना चाहिए। मानो देखो, नाना प्रकार की ईश्वर के नाम पर धर्मों के नामों पर नाना प्रकार की रूढ़ि नही रहनी चाहिए। यदि रूढ़ि इस प्रकार पनपती रहती हैं, तो एक समय आता है, क्या राजा के राष्ट्र में रक्तभरी क्रान्ति का सन्देह बना रहता है, समाज में एक रक्तभरी क्रान्ति मानो प्रायः उत्पन्न होती रहती है, मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुओं से आचार्यों से यह श्रवण किया है, क्या राजा के राष्ट्र में अध्वर्यु होना चाहिए। अध्वर्यु राजा को हाना चाहिए क्योंकि उसमें हिंसा नही होनी चाहिए। जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराते हुए कहा था, कि अध्वर्यु ऊँचा होना चाहिए, तो वह अध्वर्यु है, अपने में महान बनता रहता है, यह याग का नाम अध्वर्यु कहलाता है। तो इसीलिए मैं यह कहता रहता हूँ कि हृस उसका उत्थान समय-समय पर होता रहा हैं, वही काल उत्थान का हैं, द्वितीय काल वही मानो देखो, हृस का आ जाता हैं, तो इसीलिए आज का विचार केवल यह कि मैं विशेष व्याख्या या विचार नही दूंगा, पूज्यपाद गुरुदेव तो इतना उच्चारण करने के लिए आया हूँ, क्या हे यज्ञमान! तेरे जीवन की प्रतिभा महान बनी रहे, और तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, द्रव्य का सदुपयोग करना ही द्रव्य की रक्षा करनी है। द्रव्य का दुरूपयोग करन ही द्रव्य को अपने से दूरी कर देना है। तो इसीलिए द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिए याग इत्यादि क्रियाकलापों में मानव को सदैव तत्पर रहना चाहिए।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी याग के सम्बन्ध में वह अपना उद्घोष कर रहे थे अपना विचार दे रहे थे इनका मन्तव्य भी यही रहता है क्या रूढ़ि नही रहनी चाहिए, मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराते हुए कहा, यहाँ राष्ट्र में जब भिन्न-भिन्न प्रकार की धर्म के ऊपर रूढ़ि बन जाती हैं, तो रूढ़ियाँ अपने में लाभप्रद नही हुआ करती हैं, मैंने बहुत पुरातन काल में यह कहा था, कि राष्ट्र यदि अपने राष्ट्र को उन्नत और शान्ति की वेदी पर ले जाना चाहता है, तो राजा को चाहिए कि प्रत्येक रूढ़िवादियों धर्म के आचार्य जो स्वीकार करते है। वे सब एक पंक्ति में विद्यमान होने चाहिएं राजा को उसकी मध्यस्थता करनी चाहिए और वह अपने-अपने विचार दें, मानो देखो, जो रूढ़ि बन गई हैं, ईश्वर के नामों पर वह उसके ऊपर विचार-विनिमय होना चाहिए, मानो देखो, राजा ब्रह्मवेत्ता हो, शास्त्रार्थ भी ब्रह्मवेत्ता के स्तर पा होना चाहिए। मानो देखो, जब शास्त्रार्थ होता है, अन्तिम परिणाम निर्णय होता है, और वह निणर्य राजा देता है देखो, उसी को सबको मान्य हो करके मानो देखो, राष्ट्र का उत्थान और देखो, रूढ़िवाद को समाप्त जहाँ विज्ञान मानव दर्शन पर स्थिर रहने वाला अन्तिम सूत्र हो उसको अपनाना राष्ट्र का कर्तव्य हैं, यह प्रजा का कर्तव्य है, प्रजा उसी के आधार पर अपने राष्ट्र को उन्नत बनाता रहता हैं, परिणाम मैने बहुत पुरातन काल में यह वाक् वर्णन करते हुए, व्रत्यं मानो देखो, उद्घोष रूप में कहा था, क्या राष्ट्र को अपने में क्रियात्मक बन करके सागर से पार हो जाना चाहिए। मानो देखो, रूढ़िवाद राष्ट्र का हृस करती रही हैं, राजा के

रावण के काल में भी देखो, रूढ़िवाद की स्थापना हो गई थी, उससे पूर्व कोल में भी परन्तु मानो रूढ़ियाँ नष्ट हो गई। तो मानो विष्णु राष्ट्र की स्थापना हो गई देखो, रूढ़ियाँ जब तक पनपती रहेंगी एक मानव, मानव के रक्त का पिपासी बना रहेगा, क्योंकि रूढ़िवाद में राष्ट्रवाद है, मानववाद नही हैं, मानो उसमें क्रियावाद है, परन्तु क्रिया को अपनाने का वाद नही है, इसीलिए मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से निर्णय देते हुए कहा था, क्या राजा के राष्ट्र को यदि उन्नत बनना है, महान बनाना है तो राष्ट्र में यह भिन्न-भिन्न प्रकार की, ईश्वर के नामों पर रूढ़ियाँ नही रहनी चाहिए। यह रूढ़ि ही मेरी पुत्रियों के श्रृंगारों को हनन करने वाली हैं यही रूढ़ियाँ मानो देखो, राष्ट्र में रक्त भरी क्रान्ति लाती है, ये रूढ़ियाँ ही मानो देखो, भिन्न-भिन्न प्रकार के अभ्योदय कराती रहती है तो समय पर मानो देखो, रक्त बहने लगता हैं, तो विचार आता हैं मैंने अपने पूज्यापाद गुरुदेव को कई कालों में, विचार देते हुए कहा था कि रूढ़िवाद समाप्त और राष्ट्रीयता रहनी चाहिए, प्रत्येक मानव के हृदय में राष्ट्र और मानवीय विचार और दर्शनों का उद्घोष होना चाहिए, मानो याग के ऊपर नाना प्रकार का आक्रमण हुआ है, आक्रमण का मूल यह हुआ कि यागों में देखो, अजामेध याग में बकरी की आहुति प्रारम्भ अश्वमेध यागों में घोड़े की आहुतियाँ पदान करने लगे, गो मेध यागों में गऊ की आहुति देने लगे यह महाभारत काल के पश्चात सम्प्रदायों का जन्म हुआ। मानो देखो, इससे मानवीयता और याग का हृस होता रहा।

मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन करते हुए कहा था, कि यह जो विनाश की प्रणाली है, यह प्रणाली महाभारत काल के पश्चात देखो, अर्थों का अनर्थ करना ही मानो देखो, यह रूढ़िवाद बन गया। देखो, अश्वमेध याग में देखो, घोड़े को अश्व स्वीकार कर लिया, परन्तु अर्थ को जाना नही अश्व नाम का राजा का और मेध नाम प्रजा का दोनों मिल करके जब क्रियाकलापों में रत्त होते हैं, तो उसका नाम अश्वमेध याग हैं। याग करते हैं राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाने के लिए अजामेध कहते हैं मानो जो विजय न होने वाला हो, वह अजय कहलाता हैं, मेध नाम मानो देखो, उसकी वृत्तियों का नाम मेध कहलाता हैं तो वह उस अर्थ का न जान करके, अर्थों का अनर्थ करके देखो, रूढ़िवाद पनपनता रहा, रूढ़िवाद इतना पनप गया कि देखो, एक दूसरा रूढ़ि रूढ़ि के वाक्यों को स्वीकार करने के लिए तत्पर नही रहा, यथार्थता की वेदी पर जाने के लिए, मानव अपने में हरित हो गया है। तो विचार आता रहता है मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, देखो, यहाँ अर्थों का अनर्थ हो करके, मानो वास्तव में वृत्तियाँ रूढ़ि गईं, और वह रूढ़ि का हृस होना चाहिए, मैंने रुढि के सम्बन्ध में कई प्रकार और वह पूज्यपाद गुरुदेव ने मैंने वर्णन किया गया आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह क्या आज मेरे अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न हो रहा है जहाँ हमारी यह आकाशवाणी जा रही है, वहाँ मानो एक याग का सम्पन्न, याग की प्रतिभा मैं दृष्टिपात कर रहा था मेरा अन्तर्हृदय प्रसन्नयुक्त हो करके सूक्ष्म रूपों में रमण किया जा रहा था तो मानो हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और समय-समय पर तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, क्योंकि द्रव्य का सदुपयोग करना ही द्रव्य को प्राप्त करना है, द्रव्य का अपने से दूरी कर देना है, उसका हृस हो जाना हैं, तो यह आज का विचार मैं इसीलिए दे रहा हूँ, कि विचार तो बड़े विश्वसनीय हैं, परन्तु देखो, राष्ट्र उससे दूरी जा रहा है। राष्ट्र जब हिंसक हो जाता है, तो अहिंसावादी कौन बनेगा? तो मानो देखो, इसीलिए राष्ट्र को हिंसक नही बनना चाहिए। अध्वर्यु बनना चाहिए। जैसे पूज्यपाद गुरुदेव अध्वर्यु की चर्चा कर रहे थे, जो हिंसा से रहित है, मानो जो अहिंसामयी हैं, अरे, वही तो अध्वर्यु कहलाता है। तो यह विचार यह अब सम्पन्न होने जा रहा है, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को आज्ञा पाता रहता हूँ, समय-समय पर अपने विचार देता रहता हूँ, और इन विचारो में जो मानवीयता गम्भीरता निहित रहती है। उनको प्रत्येक मानव को अपना विषय बना लेना चाहिए। यह आज का वाक् अब मैं अपने इन वाक्यों को विराम दे रहा हूँ।

याग चयन

पूज्यपाद गुरुदेवः- मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने विचार दिए इनके विचारों में प्रायः राष्ट्र के प्रति जो वेदना बनी रहती है, वह बड़ी भव्यतम, तो यह आज का विचार यह अब सम्पन्न होने जा रहा हैं, विचारों में एक महानता का दर्शन मानवीयता की वृत्तिया विज्ञान के ऊपर अपना विचार और सम्भोव्रतं तो ऋषि-मुनियों ने बड़ा गम्भीर अध्ययन किया वैशम्पायन जैसे ऋषियों ने गम्भीर अध्ययन करने के पश्चात उन्होनें याग इत्यादियों का चयन और उसमें रमण करने के लिए तत्पर रहे हैं। तो आज का विचार समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् दिव्याहं देवाः आभ्यां ऋषि वायाः माणां त्वा वसु ब्रह्म मणा ओ३म् भविद गृहितां मानो वाचा रथं आ पाहाम् अच्छा भगवन्! आज्ञा ०९ मार्च १९८८

८ तेजस्वी बनो १३-०३-१९९१

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जो रहे थे ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता हैं, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी है, और उसका जो ये अनन्तमयी जगत हैं, ये पवित्रतम कहलाया जाता है, क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता हुए हैं परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसी नही हुआ जो परमापिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके और क्योंकि वे सीमा से रहित है इसीलिए वे सीमा में आने वाले नही हैं, इसीलिए हमारे यहाँ परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसकी अनन्तमयी ज्ञान और विज्ञान की महिमा का सदैव गुणगान गाते रहते हैं। क्योंकि वह हमारा पुरोहित है, और पराविद्या को देने वाला हैं। इसीलिए हम परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन करते रहते हैं, वह हमारा पुरोहित कहलाता रहता है।

तो आओ, मुनिवरों! वेदमन्त्र हमें कुछ प्रेरित कर रहा हैं, क्योंकि मानव परम्परागतों से ही, प्रेरणा का स्रोत रहा है, और प्रेरणा को प्राप्त करता रहता हैं, और वह नाना प्रकार के उदगारमयी वाक्यों का प्रतिपादन भी करता रहा हैं, तो इसीलिए हमारे आचार्यों ने उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में हमने बड़ी विचित्र उड़ाने उड़ी हैं। तो आज का हमारा वेदमन्त्र हमें क्या प्रेरणा दे रहा है, क्योंकि हम प्रेरणा में रत्त रहते हैं, प्रेरणा पान करना हमारा कर्तव्य है और अपने उद्गीत गाना ही गान रूपों में रत्त होते रहते हैं। तो आओ, वेदमन्त्र हमारा कहता है, वर्णनं ब्रह्मा कृतं देवाः तो वह परमपिता रत्त प्रहा मानो वह सर्वज्ञ हैं, और उसकी सर्वज्ञता मुनिवरों! देखो, एक-एक कण-कण में व्याप्त हैं वह मानव देखो, ऐसे ओत-प्रोत हो रह है जैसे अन्तरिक्ष में मानो जितने लोक-लोकान्तर है वह सब एक उस ब्रह्म सूत्र में पिरोए हुए से दृष्टिपात आते हैं, वह जो ब्रह्माण्ड है, अनन्तमयी ब्रह्माण्ड का वह स्वामीतव करने वाला है। इसीलिए हम परमपिता परमात्मा की महती का गुणगान गाते रहते हैं। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ और प्रेरित कर रहा हैं वेदमन्त्र कहता है ब्रहे वर्णनं प्रह्वे गृह पंचनाम भू वर्णनं ब्रह्मा मेरे प्यारे! मुझे वह काल पुनः से स्मरण आ रहा है। जब बेटा! बालक नाचिकेता यमाचार्य के द्वार पर आए अपने में कुछ प्रश्न करना चाहता है, और बाल्य नाचिकेता ने कहा हे प्रभु! हम स्वर्ग की कामना करना चाहते हैं स्वर्ग में जाना चाहते हैं? तो मेरे प्यारे! देखो, यमाचार्य ने कहा ब्रह्मचारी तुम विराजमान हो जाओ, और शान्त की मुद्रा में मुद्रित हो करके, तुम मेरे वाक्यों को श्रवण करो। आज तुम देखो, स्वर्ग में जाना चाहते हो, तो स्वर्ग उसे कहते हैं जहाँ मानव के गृह में गृह का संचालन होता हो, वह गृह स्वर्ग कहा जाता हैं। और विद्यालयों में जब ब्रह्मचारी और आचार्य दोनों विद्यमान हो करके, और वह अपने में उद्गीत गाते है, ब्रह्म की गाथा का वर्णन करते रहे हैं, तो वह स्वर्ग कहलाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, जहां प्रत्येक मानव अपने में मानवीयता की आभा में रत्त होना चाहता हैं और ये एक अकाटय विचारधारा बनी है, कि मानव स्वर्ग में रत्त होना चाहता हैं, बेटा! मैंने इससे पूर्व काल में बहुत-सी चर्चाएं कीं परन्तु आज मुझे स्मरण आ रहा है। याज्ञा कृत ब्रह्वा कृतं देवाः उद्दालक गोत्र के ऋषि बेटा! देखो, वाजश्रवा के पुत्र बालक नाचिकेता ने यमाचार्य से जब ये कहा कि मैं स्वर्ग में जाना चाहता हूँ। तो उन्होंने कहा कि तीन प्रकार की अग्नि हमारे समीप रहती है। एक अग्नि है वह जिसमें ब्रह्मचारी तपता है, और द्वितीय अग्नि का नाम जिसमे गृहाश्रम तपा करता हैं। जैसे माता-पिता पति पत्नी गृह में प्रवेश होते ही उनका जीवन तपों में प्रारम्भ होना है देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा, तपं प्रह्वे राष्ट्रदं ब्र्ह्वा कृतं देवत्वां तपः कि ये संसार मानो तपोमय रहता हैं और

बिना तप के मानव का जीवन प्रियता को प्राप्त नही होता।

विचार आता है कि तप किसे कहते हैं? मेरे प्यारे! देखो, उस समय बालक नचिकेता ने यमाचार्य से कहा हे ब्रह्मचारी! ये संसार सर्वत्र मानो एक तपोमय निहित रहता है वायु वेग में तपायमान है, गतिवान बना रही हैं अग्नि अपनें में मानो देखो, तेजोमयी है, व तेजवान बना रही हैं, और वह जो तरलतव है वह तरल ब्रहे वह मानो आपो कहलाता हैं आपोमयी ज्योतिवान बना रहा हैं। मेरे प्यारे! दे प्रत्येक स्वरूप अपने में अपनेपन का ही भान कराता रहता है अपने में मानो वह उसी में प्रतिष्ठित हो जाता हैं तो विचार आता रहता हैं यमाचार्य ने कहा हे नचिकेत! मनो तुम तीनो प्रकार की अग्नि का पूजन करो और तपोमय रहने के लिए सदैव तुम तत्पर रहो, क्योंकि संसार में प्रत्येक मानव तपायमान है प्रत्येक मेरी पुत्री तपायमान रहती हैं परन्तु तपने के पश्चात मेरी पुत्री तपोमयी हो जाती हैं।

मेरे प्यारे! देखो, तपं ब्रह्मणा वृतम् मेरे पुत्रों! राजा अपने राष्ट्र को उन्नत बनाता है और जब वह स्वयं तपायमान है और ब्रह्मज्ञान में तपा करता हैं तो वह राष्ट्र अपने राष्ट्र को उन्नत बनाता है उसको तपोमयी बनाता है। इसीलिए संसार का प्रत्येक मानव प्रत्येक परमाणु अपने में तपा हुआ रहता हैं, तो इतनी तपस्या करनी चाहिए और तपों में रहना चाहिए। जिसमें माता-पिता बाल्यकाल में, ब्रह्मचारी, अपने में तपायमान रहते हैं। जब वे गृह में प्रवेश होते हैं, तो गृह को भी तपायमान करते रहते हैं, यदि कोई मानव ये चाहता है कि मेरा गृह स्वर्ग बन जाएं माताये चाहती है मेरा गृह स्वर्ग बन जाएं तो बेटा! स्वर्ग उस काल में बनेगा, जब माता-पिता तपस्वी होंगे और मानो देखो, बाल्यबाल में ही जब अपने में अध्ययन करने लगेंगें।

भगवान राम का तप

बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है त्रेता के काल का जब मुनिवरों! देखो, भगवान राम अयोध्या को विजयी करने के पश्चात जब वह अपनी देखो, लंका को विजय करने के पश्चात अयोध्या में उनका पर्दापण हुआ तो महाराज भरत उनके विधाता, उन्होंने कहा कि-प्रभु! आप राष्ट्र को अब सुचारू रूप से गति दीजिए। भगवान राम ने एक सभा की जिसमें बेटा! देखो, महाराजा शिव विद्यमान महर्षि वशिष्ठ और विश्वामित्र और भी नाना ऋषि-मुनि विद्यमान थे जिसमें प्रवाहण जी भी थे, तो मेरे प्यारे! देखो, राम ने आचार्य से कहा हे भगवन! आचार्य से कहा भरत जी कहते हैं, राम ने कहा कि अब तुम राष्ट्र को संचालित करो। परन्तु उन्होंने कहा अपने आचार्य गुरु से वशिष्ठ मुनि से बोले क्योंकि माता अरूणधती भी विद्यमान थी, सभा में और शिव को सम्बोधित करके कहा कि-प्रभु! आप तो राजा रहे हैं और राष्ट्र जब ऊँचा बनता हैं जब राजा स्वयं तपस्वी होता हैं मानो देखो, मैं लंका को विजय करके आया हूँ और लंका में मैने नाना प्रकार की प्रतिष्ठाप्रहा मानो देखो, लंका में मुझे रजोगुण भी आया है, तमोगुण भी आया है रजोगुण, तमोगुण मेरे अन्तःकरण में देखो, ग्रहण किए रहता हैं। हे प्रभु! मेरी इच्छा ये है कि मैं तपस्या करने के लिए जाऊं, और मैं बारह वर्ष के पश्चात अपने राष्ट्र को उन्नत बना सकता हूँ। क्योंकि यदि राजा मे तप नहीं हैं तमोगुण से सना उसका अन्तर्हृदय है, वह हृदयग्राही नही होता हैं पवित्र नही होता हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने महाराज शिव को सम्बोधित हो करके कहा, क्योंकि महाराज! शिव स्वयं तपस्वी रहते थे, और वे तपश्चर में रमण करके, अपने राष्ट्र को उन्नत बनाते थे इसी प्रकार राम भी यही चाहते थे, कि मैं राष्ट्र को ऊँचा बनाऊं।

तो मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है भरत जी से कहा हे भरत! तुम अपने राष्ट्र को भोगो, उन्होंने कहा-प्रभु! मैं इसको भोग नही सकता, ये भोगवाद की कोई वस्तु नही हैं यहाँ तो मानव को अपने कर्तव्य का पालन करना है, और राजा यदि कर्तव्यवादी नही बनेगा तो भगवन! देखो, राष्ट्रीयता नही कहलाती इसीलिए हे

भरत! ब्रह्मे तुम स्वयं तपस्वी बनो। और भरत ने भी कहा-प्रभु! आप तप के लिए जा रहे हैं, और मुझे राष्ट्र के लिए बाध्य कर रहे हैं, ये मेरे विचार में नही आ रहा हैं। उन्होंने कहा कि वह ब्राह्मण जो होता हैं वह बिना तप और देखो, स्वर संगम के बिना ब्राह्मण ऊँचा नही बनता, और क्षत्रिय जब ऊँचा बनता है, जब वह अपने रजोगुण में तमोगुण की मानो देखो, वृत्तियाँ न आने दे। वह रजोगुण न्याय का वृत कहलाता हैं, उसके गर्भ में सत्य होता है, इसीलिए सत्य को ले करके ही तुम मानो देखो, अपने राष्ट्र को प्राप्त कर पालन करो। भरत ने भी यही कहा राम ने भी कहा परन्तु देखो, यही उन्होंने कहा-प्रभु! मैं अब तप करने के लिए जा रहा हूँ।

शासन की अवधारणा

भगवान शिव ने कहा जाओ, तुम तप करो। वशिष्ठ मुनि महाराज ने भी यही कहा कि तप करो, राष्ट्र चलता रहेगा, राष्ट्र तो अपने कर्तव्यवाद का, जब प्राणी मात्र में कर्तव्यवाद आ जाता है, तो वहां राष्ट्र में शासक की आवश्यकता नही रहती, शासक की आवश्यकता वहाँ होती है, जहाँ प्रजा में अकर्तव्यवाद आ जाता है, माता अपने पुत्र को उस समय दण्डित करती है, जब बाल्य मानो देखो, उद्दण्डता करने लगता है, वह तमोगुण में चला जाता हैं, या रजोगुण में और वह बाल्य यदि सतोगुण में ही रह जाएं। तो माता के शासन की आवश्यकता नही रहती मेरे प्यारे! देखो, राष्ट्र का भी इसीलिए शासन की आवश्यकता नही रहती। यदि प्रत्येक मानव अपने-अपने कर्तव्य का पालन करता है क्योंकि कर्तव्यवाद में लाने के लिए राष्ट्र की नियमावली बनती है, परन्तु यदि मानव स्वतः अपने कर्तव्य का पालन करने लगे, तो बेटा! देखो, वहाँ राष्ट्र की आवश्यकता नही हैं। ये भगवान मनु का वचन है, ये बेटा! वेद के माध्यम से ही वेद भी यही कहता है तो मुनिवरों! जब उन्होंने कहा कि-प्रभु! अमृतं ब्रह्मणे वशिष्ठ ने कहा राम! तुम तपस्या करने चले जाओ और राष्ट्र भी चलता रहेगा।

तपश्चर्या में अन्न पवित्रता

बेटा! मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है, राम तपस्या के लिए चले गएं और वह भंयकर वनों में बेटा! देखो, भ्रमण करते हुए जब वनों में पंहुचे तो वहाँ वैश्म्पायन मुनि का दर्शन हुआ और देखो, उनके समीप विद्यमान हो गएं राम ने कहा-प्रभु! मैं तप करने आया हूँ, मैं तप की मीमांसा को नहीं जान पा रहा हूँ, तप किसे कहते हैं? मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि वैशम्पायन बोले हे राम! तुम्हें ये प्रतीत नही है, कि राजनं ब्रह्मे तपः ये तप किसे कहा जाता है। आहार का पवित्र सेवन करने का नाम तप है। क्योकि उसी से हमारी प्रवृत्तियों को निर्माण होता हैं। और यदि अन्नाद उसका पवित्र है तो वहाँ प्रवृत्ति का ऊर्ध्वा में जन्म हो करके और मानव अपने में देखो, सतोगुण बन करके अपने सत में आधारित हो जाता है।

तपोमयी हृदय याग

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने जब ये कहा कि तुम तप करो। परन्तु तप कहते हैं इन्द्रियों के साकल्यों को जानने का नाम वही तप है जो इन्द्रियों के साकल्यों को जानता है अथवा इन्द्रियां के विषयों को जान करके अपना साकल्य बना करके बेटा! देखो, ज्ञान और उर्पाजन करता है और ज्ञान का उर्पाजन करके मानो देखो, हृदय रूपी यज्ञशाला में वह हूत कर रहा हैं प्रहूत कर रहा हैं वह भव्यता को प्राप्त हो रहा हैं

योगेश्वर का अन्न जल

विचार आता रहता है कि जब राम से ये वर्णन कराया वैशम्पायन ने कि तप ये है तो उन्होंने ये स्वीकार कर लिया। बेटा! देखो, वह कहीं खेचरी मुद्रा में चले जाते, कहीं प्राणायाम करने लगते। मुझे स्मरण हे छह माह तक उन्होंने देखो, वायुमण्डल के प्राण के संचय से बेटा! देखो, पोषक तत्त्वों को ग्रहण किया। और जब जल की इच्छा होती है योगेश्वर को तो बेटा वहाँ देखो, वह खेचरी मुद्रा से मुनिवरों! शीतली प्राणायाम करता हुआ जल

की तृप्ति कर लेता हैं।

इन्द्रियों का साकल्य

मेरे प्यारे! देखो, योग साधना में जब मानव प्रवेश होता हैं तो साधक ये जानात है कि मुझे जितनी भी इन्द्रियों का साकल्य है नेत्रों साकल्य है, वह रूप हैं और देखो, श्रोत्रों का साकल्य शब्द है, और वाणी का, रसना का साकल्य मानो देखो, रस है, षट रस कहलाते हैं और त्वाचा का जो वह मानो देखो, साकल्य है वह प्रेम है तो इसी प्रकार मेरे पुत्रों! देखो, घ्राण का जो मानो विषय है साकल्य है वह मुनिवरों! देखो, सुगन्ध कहलाती हैं तो इन सब साकल्यों को एकत्रित करके साधक मेरे प्यारे! देखो, अमृतं ब्रह्मणा वर्णस्सुतम् वह मेरे प्यारे! देखो, अपने हृदय रूपी यज्ञशाला में याग करता है और वह हृदय को पवित्र बना लेता हैं

परमात्मा से अपने हृदय का मिलान चाहता हैं तो मरे पुत्रों! वेद का ऋषि कहता है कि तपं ब्रह्वा वैशम्पायन ने ये निर्णय कराया कि हे राम! तुम अब प्राणायाम करो, सब साकल्यों को एकत्रित करो और साकल्य के द्वारा तुम हूत देना प्रारम्भ करो, जिससे तुम्हारा अन्तर्हृदय मानो पवित्रता की बेला में परिणत हो जाएं और पवित्रतव को प्राप्त हो करके तुम्हारा मनोनीत ऊर्ध्वा में गमन करता रहे। तो मेरे पुत्रों! देखो, इस प्रकार की जो विचारधाराएं है विचार है इसमें विचार-विनिमय करते रहे हैं।

वाणी पवित्रीकरण

आओ, मेरे पुत्रों! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नही देने आया हूँ विचार-विनिमय केवल ये कि राम देखो, गायत्री छन्दों का पठन-पाठन करने लगे,वाणी को पवित्र बनाने के लिए जैसे यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके स्वाहा-स्वाहा की ध्वनि से ध्वनित हो जाता हैं अन्तरिक्ष में अपनी वाणी को प्रसारित कर देता हैं मेरे प्यारे! उसी प्रकार राम ने गायत्री छन्दों का पठन-पाठन किया और मुनिवरों! देखो, महर्षि वैशम्पायन से समय-सकय पर देखो, अन्न को ग्रहण करते रहे।

वह बेटा! देखो, मुझे स्मरण है कि छह माह तक उन्होंने प्राण के द्वारा ही पोषक-तत्वों को ग्रहण किया और प्राण के द्वारा ही तो मुनिवरों! खेचरी मुद्रा से उन्होंने जल के परमाणुओं का सेवन किया, ऋत और सत् को ग्रहण करते हुए देखो, सत में ब्रह्म है और ऋत में प्रकृति हैं इन दोनों को जानने वाला ही मेरे प्यारे! देखो, तपस्वी कहलाता है। और वह याज्ञिक पुरूष मेरे पुत्रों! देखो, अपने में महान बन जाता हैं

मैं इस सम्बन्ध में न जाता हुआ, विचार-विनिमय क्या? मुनिवरों! देखो, स्वर्ग कैसे प्राप्त होता हैं अरे, स्वर्ग वही कहलाता हैं स्वर्गश्चत प्रह्वा कृतं देवत्वं ब्रह्वा मेरे प्यारे! प्रत्येक मानव अपने में शब्दायमान रहता हैं प्रत्येक मानव अपने में आनन्द को ही चाहता है स्वर्ग की कामना करता रहता है। परन्तु ज्ञान और वेद से ही मानव को स्वर्ग प्राप्त होता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, अमृतम् राम का ये वह तप जिन्होंने राम जब करते तो ऋषि-मुनि उनके समीप आ करके बेटा! अपनी-अपनी वार्त्ता प्रगट करते और ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने उड़ते रहे हैं, तो राम अपने में बड़े पुण्यतव को प्राप्त होते रहे हैं।

गृह में स्वर्ग

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है मैं वही तो जाना चाहता हूँ बालक नाचिकेता ने जब ये प्रश्न किया ब्रह्मचारी ने कि हे प्रभु! मैं स्वर्ग को चाहता हूँ मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने कहा कि स्वर्ग वह होता है जहाँ माता-पिता पवित्र होते हैं और माता-पिता मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार के यागों में परिणत रहते हैं ब्रह्मयाग करते हैं प्रातः कालीन मानो जब उनके नेत्रों में जागरूकता आती हैं तो उस समय मुनिवरों! वे गान गाने लगते है। और गान गा करके मुनिवरों! अपने को अभ्योदय करके अपने को ऊर्ध्वा में और अपने में मानो देखो, प्रातःकालीन अपनी

क्रियाओं से निवृत्त हो करके वे स्वतः याग करते हैं कहते हैं प्राणाय स्वाहा अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, और समानाय स्वाहा मेरे पुत्रों! वह कहते है अमृतम् और मेरे पुत्रों! उदानाय स्वाहा कह करके इस प्रकार प्रातःकालीन वे हूत करने वाले प्रातःकालीन मानो देखो, अपनी अन्तरात्मा की वार्त्ताओं को स्वीकार करने लगते हैं और परमपिता परमात्मा से कहते हैं हे परमात्मन् तू कितना विचित्र और महान बन करके हमारे अन्तर्हृदयों में प्रवेश हो रहा हैं जब इस प्रकार मानव उद्गीत गाता है तो मेरे पुत्रों! देखो, ममतव अपने में धारयामि बन जाता है।

तो विचार आता रहता हैं मुनिवरों! देखो, अमृतं ब्रह्मे इसीलिए बालक नाचिकेता से आचार्य ने कहा हे नचिकेत! यदि तुम्हें स्वर्ग को लाना है तो माता-पिता को गायत्री छन्दों का प्रातःकालीन पठन-पाठन करते हुए उनके अंग संग रहने वाले जो बाल्य बालिका हैं उनको श्रवण करते रहते हैं और जो माता-पिता के सुन्दर विचार हैं तो देखो, बाल्यों के भी विचार सुन्दर बन जाते हैं वे भव्यता को प्राप्त हो करके अपने में रत्त हो जाते हैं।

तो मेरे पुत्रों! देखो, वह उन्होंने अपना व्यक्तव्य दिया और विचार-विनिमय देते हुए कहा सम्भूति ब्रह्मणा सम्भव लोकां ब्रह्वा वर्चस्सुतं प्रह्वे वेद का वाक्य कहता है कि हम अपने में मानो वृत्तियों को प्राप्त करते रहे मेरे प्यारे! अपने में मौन होते रहें। तो इस प्रकार मुनिवरों! देखो, माता-पिता प्रातःकालीन् ब्रह्म से चर्चा करते हैं और देव पूजा के समय देव पूजा करते हैं और मनन करने से मानो देखो, मननशीलता की प्राप्ति हो जाती हैं।

गृहपथ्याग्नि-पूजन

मेरे प्यारे! मैं कहा चला गया हूँ विचार ये दे रहा था कि अपने में ही मानो देखो, गार्हपथ्य नाम की अग्नि का पूजन हो और गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन हो। गृहपथ्य उसे कहते हैं जहाँ पति पत्नी एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके ब्रह्म की उड़ान उड़ते हैं और ब्रह्मवेत्ता बनन के लिए उनके गृह में रहने वाले बाल्य-बालिका माता-पिता के वाक्यों को श्रवण करते हैं। तो वह गृह स्वर्ग बन जाता हैं।

मेरे प्यारे! देखो, यमाचार्य ने कहा हे नचिकेत! ये अग्नि के चयन कहलाते हैं देखो, अग्निमान बन करके अपने में अग्नि से अग्नि का चयन करता रहता हैं मेरे पुत्रों! देखो, जब उन्होंने ये वाक्या प्रगट कराया अमृतां स्वर्गश्चत प्रह्वा जहाँ मुनिवरों! देखो, ब्रह्म की आभा विद्यमान रहती हैं वहीं तो स्वर्ग है मुनिवरों! देखो, एक प्राणी, प्राणी का स्नेह में लगा हुआ हैं वही तो स्वर्गश्चर कहलाता है तो बेटा! देखो, प्रत्येक प्राणी को स्वर्ग में जाना चाहिए। परन्तु स्वर्ग की कल्पना भी करनी चाहिए कि मैं स्वर्ग को प्राप्त हो जाऊं और स्वर्गश्चर प्रह्वा मैं परमपिता परमात्मा के दर्शनों में रत्त हो जाऊं।

राष्ट्र में स्वर्ग

मेरे प्यारे! देखो, ये वेद का मन्त्र है वेद का मन्त्र ये हमारा क्या कह रहा हैं, हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और वह हमारा पुरोहित बन करके, हमारे लिए नाना प्रकार की आभाएं हमें प्रगट करता रहता हैं तो ऐसा बेटा! देखो, आचार्यो का अपना-अपना मन्तव्य रहा है क्योंकि आचार्यों का जीवन, बड़ा विचित्र बन करके रहा हैं तो बेटा! देखो, राम ने बारह वर्ष इस प्रकार का तप किया बेटा! वायु का सेवन करने हुए कही जल का, आपो का सेवन हैं कहीं वायु अमृतम् सेवन हैं मेरे पुत्रों! देखो, उसे वह ग्रहण करता रहता हैं और ग्रहण करता हुआ, मुनिवरों! देखो, अमृतम् ब्रह्म कृतं देवतवम् अप्रं ब्रहे मुनिवरों! देखो, रजोगुण और तमोगुण दोनो शान्त कर देने चाहिए। राजा राष्ट्र के योग्य जब ही होता हैं जब कि उसके यहाँ तमोगुण न रहे और रजोगुण विशेष न रहे परन्तु जब तप सम्पन्न हो जाने चाहिए।

मेरे पुत्रों! देखो, मुझे वह काल स्मरण आता रहता हैं जब भगवान राम ने इस प्रकार का बारह वर्ष का तप किया। उस अन्न को ग्रहण करते थे जिस अन्न में किसी का अधिकार नही था इसीलिए ऋषि-मुनि को विवेक हो

जाता है तो बेटा! उन्हें विवेक हो जाता हैं और विवेकी जो पुरूष होता हैं मानो उसमे विडम्बना नही होती और वह विडम्बना से पार होता हैं तो इसीलिए विडम्बिनित नही होना चाहिए। भगवान राम ने बेटा! देखो, बारह वर्ष का तप करने के पश्चात उन्होंने मेरे प्यारे! देखो, भयंकर वन को त्यागा। वह स्थली त्यागी जहाँ एक दूसरा एक दूसरे के शब्द एक दूसरे को मानो मानव को अपने को रत्त कर रहा हैं।

आओ, मेरे प्यारे! राम का बारह वर्ष का तप पूर्ण हो गया बारह वर्ष तक उन्होंने तप किया तो बेटा! देखो, तप करने के पश्चात अयोध्या मे उनका पुनः से गमन हुआ। नगरी बड़ी प्रसन्न है ये कहती है कि हमारे सखा राम हैं ये उच्चारण करके बेटा! अपने मे ये धारणा बनी रहती है कि तपो तपं ब्रह्मणः अग्नं ब्रह्वे ब्रह्मचरिष्यामि वेद का वाक्या कहता है कि राजा को तपना चाहिए और ब्रह्मवेत्ता बनना चाहिए ब्रह्मवर्चोसि बन करके ही उससे राष्ट्र में प्रजा निर्णय लें तो मेरे प्यारे! देखो, राम ने अपना तमोगुण समाप्त कर दिया, रजोगुण की प्रतिभा को भी मानो देखो, अपने में, मानो देखो, अपने में रत्त हो गये।

ब्रह्मवेत्ता से राष्ट्र

विचार ये प्रतीत हुआ कि राम ने बारह वर्ष का इस प्रकार तप करने के पश्चात अयोध्या में उनका आगमन हुआ और अयोध्या में पुनः वह सभा की और उन्होंने कहा-प्रभु! उच्चारण करो मैं कैसा राज्य कर सकता हूँ उन्होंने मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि ने एक वाक्य ये कहा कि ये कोई निर्णय नही दे पाएगा। परन्तु निर्णायां कृतं देव्तव् ब्रह्मः वर्णस्सुतं ब्रह्वे मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने ये कहा कि सम्भवा कृतम् वेद का आचार्य कहत है अमृतां ब्रह्वे कृतम् मेरे प्यारे! देखो, राम का तप पूर्णता को प्राप्त हुआ और अयोध्या में आने के पश्चात उन्होंने भरत जी से कहा जाओ तुम तपस्वी बनो अब मैं इस राष्ट्र को संचालन करूंगा मैं अपने को संचालन और गति दूंगा परन्तु राष्ट्र में पुनः गति आ जाएगी राष्ट्र तो मानो देखो, समाज में चेतनता है परन्तु मार्ग दर्शक मानो कोई प्राणी होता हैं राम इस प्रकार के देखो, दर्शक थे मार्ग दर्शकवेत्ता थे कि उनका जीवन पवित्रता में रत्त होता रहा।

मेरे पुत्रों! मुझे वह काल जब स्मरण आने लगता हैं तो अन्तरात्मा गद्-गद् हो जाता हैं। और अन्तरात्मा में मैं ये कहता रहता हूँ सम्भव ब्रह्मः सम्भवं लोकां, सम्भवं रूद्रो शासक ब्रह वाचन्नमं ब्रह्वे कृतं देवत्वां लोकाः मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार का जो राष्ट्र होता हैं वह लोक-लोकान्तरों में रमण करता है ऐसे जो माता-पिता होते हैं, जो गृह को मानो पवित्र बनाने में लगे हुए हैं, अपने क्रियाकलाप ऊँचे बनाते हैं प्रातःकालीन याग हो रहा हैं परन्तु बाल्य बालिका सब श्रवण करते हैं ब्रह्म का चिन्तन कर रहे हैं तो वह भी अपने श्रोत्रों में रमण कर रहे हैं मेरे प्यारे! देखो, वह मानव वह राष्ट्र बेटा! कितना सौभाग्यशाली है जिस राजा के राष्ट्र में मानो इस प्रकार की प्रतिभा और राजा स्वयं ब्रह्मवेत्ता हो क्योंकि ब्रह्मवेत्ता ही राष्ट्र को ऊँचा बना सकता है ब्रह्मवेत्ता ही राष्ट्र को कुछ पदार्थ दे सकता हैं इसीलिए देखो, ब्रह्मवेत्ता बनना बहुत अनिवार्य हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज का विचार क्या मुनिवरों! देखो, बिना तप के न तो राष्ट्र ऊँचा बनता हैं, न गृह ऊँचा बनता हैं, और न ब्रह्मचर्य ऊँचा बनता है हे ब्रह्मचारियों! यहाँ गृहपथ्य नाम की अग्नि और वैश्वानर नाम की अग्नि का चयन होना चाहिए। जिस अग्नि को धारण करके, मानव के जीवन में प्रकाश आ जाता हैं। मानव प्रकाशित हो करके रमण करता है तो उसके प्रकाश को हमें अपना लेना चाहिए।

आओ, मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें विशेष चर्चा नहीं प्रगट करूंगा। परन्तु केवल ये कि राम का तप मुझे देखो, अद्वितीय तप दृष्टिपात आता है उनके जीवन में तप ही तप रहा है ब्रह्म ज्ञान ही ज्ञान रहा है वह ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने उड़ करके, बेटा! समाज को ऊँचा बनाते रहे हैं मुनिवरों! देखो, जब ये वाक्य उन्होंने अपने मे धारयामी बन लिया धरणां ब्रह्मे धरणस्सुतं ब्रह्मा वह ब्रह्मवर्चासी कहलाता हैं जो परमपिता परमात्मा है वह धरणस्सुतम् वह

धरणी का स्वामी है मानो देखो, वह ब्राह्मण है वह अपने में द्रव्यपति है वह अपने में हीनता में हीन है और कृतियों में रत्त कर रहा हैं परन्तु ये कैसा अनुपम जगत है। मेरे पुत्रों! कैसी अनुपम धारणा है अरे, नना प्रकार की मालाएं बनती है परन्तु माला भी सूत्र में पिरयेही हुई हैं जैसे हमारा जीवन हैं मानो एक-एक परमाणु मनका बन करके ब्रह्म सूत्र में पिरोया हुआ हैं या उसे आत्मसूत्र कह सकते हैं और उसमें पिरोते-पिरोते बेटा! मानव कहाँ चला जाता हैं वाह रे मेरे प्यारे! इतना ऊर्ध्वा में साधक बन जाता हैं ये साधना में परिणत हो होता हुआ मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों की उड़ानें उड़ने लगता हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, विचार-विनिमय विशेष नही विचार केवल ये कि हम परमपिता परमात्मा की महती का गुणगान गाते हुए, और परमपिता परमात्मा के इस अनूठे जगत को जान लेना चाहिए अनूठे जगत में परिणत हो जाना चाहिए, मेरे पुत्रों! देखो, मानवीय जीवन एक पवित्रता की धारा बन करके मानो हम पार हो जाएं तो आओ मेरे प्यारे! आज का हमारा वाक् क्या है कि अपने को ऊर्ध्वा बनाएं गार्हपथ्य और गृहपथ्य नाम की अग्नि पूजन करें वैश्वानर नाम की अग्नि का पूजन करें जिससे मुनिवरों! देखो, गार्हपथ्य हो जाएं मेरे पुत्रों! देखो, ग्रतं ब्रह्मा राजा वही ऊँचा होता है। जो तपस्वी कहलाता हैं अपने राष्ट्र को उन्नत कहलाता हैं वर्णनं भू वर्तम किसी के अधिकार को न लेने का नाम ही राष्ट्रपिता कहा जाता हैं और यदि देखो, राष्ट्रपिता बन करके अपने राष्ट्र को उन्नता की आभा में ले जाना अपने जीवन को वही मानो गमन कराते रहते हैं तो आओ, मेरे प्यारे! इस सन्दर्भ में नही जाना चाहता हूँ विचार केवल ये कि मुनिवरों! देखो, राजा तपस्वी बनता हैं तो समाज को अमृत देता है माता-पिता तपस्वी हैं तो मुनिवरों! देखो, समाज को प्रजा देते हैं और वह प्रजा मुनिवरों! देखो, सन्तान के रूप में नही प्रजा को सन्तान में और प्रजा में दोनों में अन्तर्द्वन्द्व रहता हैं इससे पूर्व काल में भी हमने वर्णन कराया क्या प्रजा कहते है जो राष्ट्र के व्यापक विचारों में निहित रहती हो जो स्वर संगम में रमण करने वाली हो मेरे पुत्रों! देखो, उदगम ब्रह्वे वर्णनं तो इसी प्रकार मानो अपने में क्रियाकलाप में परिणत होता हुआ सागर से पार होने की कल्पना करता रहता है तो आओ, मेरे प्यारे! नाचिकेता ने यही कहा यमाचार्य से क्या प्रभु मैं स्वर्ग में जाना चाहता हूँ तो उन्होंने स्वर्ग की मीमांसा करते हुए कहा जब तक अपने में तपस्या नही की जाएगी मानव को स्वर्ग प्राप्त नही होगा मेरे प्यारे! देखो, स्वर्गश्चं ब्रह्मा स्वर्ग ततं लोकं वर्णा वेदां जगतां ब्रीहि कृतं देवाः मेरे प्यारे! देखो, उसी प्रतिभा में रत्त हो करके प्रायः देखो, सागर से पार होने का प्रयास करें तो आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा विचार क्या कि हमारा गृह पवित्र जब बनेगा जब माता-पिता तपस्वी होगें राष्ट्र जब ऊँचा बनेगा जब राम जैसे सखा बारह-बारह वर्षों तक मुनिवरों! देखो, रजोगुण तमोगुण को शान्त करने में लगे रहेंगें मेरे पुत्रों! देखो, वह राष्ट्र पवित्रता को प्राप्त होता हैं तो विचार आता रहता है कि प्रत्येक मानव अपने मे मानवीयतव को धारण करता रहे और मानवतव को अपने में धारण करता हुआ इस सागर से पार हो जाएं। ऐसा बेटा! हमारा आज का विचार हैं हमारा ये मन्तव्य है कि हम अपने में अपने ही अपने में रत्त हो करके अपने को धारयामि बनायें। तो आओ, मेरे प्यारे! ये आज का विचार ये कि प्रत्येक मानव अपने मे सदैव पवित्रता में सदैव रमण करता रहे और विचार देता रहे अब मेरे प्यारे! देखो, हम प्रभु से आह्वान करते रहते हैं निर्णय देते रहते हैं निर्णयात्मकता को प्राप्त होते रहें मेरे पुत्रों! देखो, आज का केवल विचार हमारा ये कि वह परमात्मा हमारा पुरोहित हैं, और पुरोहित मानो देखो, वह कहलाता है, जो पराविद्या के देने वाला हैं। वह पराविद्या हम अपने में ग्रहण करते रहें हम ब्रह्मवेत्ता बन करके वैदिक बना करके बेटा! समाज को उन्नत बना सकते हैं।

तो आओ, मुनिवरों! देखो, विशेष विचार न देता हुआ मुझे वह काल बारम्बार स्मरण आता रहता है, जब राम ने तप किया तमोगुण और रजोगुण दोनों जब सामान्यता में आ गएं, उसके पश्चात बेटा! देखो, अयोध्या के

राष्ट्र और भरत तपस्या के लिए चले गएं। बेटा! भरत भी मानो देखो, तपस्वी थे और राष्ट्र को त्याग करके उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ जैसे मेरे से देखो, एक ऐसा अनुभव चला गया है, जिससे देखो, मैं आज अपने को सुखद अनुभव कर सकता हूँ, मेरे प्यारे! देखो, वह भरत भी तप करने चले गएं राम का तप देखो, अपने राष्ट्र क्रियाकलाप करने लगा तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार-विनिमय क्या हमारे वाक् उच्चारण करने का अपने जीवन को महान बना करते हुए बेटा! सागर से पार होने के लिए सदैव तत्पर रहें ये है बेटा! आज का वाक् देव की महिमा का गुणगान गाते रहें, और देवतव और ब्रह्मवर्चोसि बनते रहें, ये आज का बेटा! हमारा वाक् अब सम्पन्न होने जा रहा हैं। आज के विचारों का अभिप्रायः ये कि संसार जब भी ऊँचा बनता है एक दूसरें में परिणत होता हुआ पवित्रता को धारण करता रहता है, ये है बेटा! आज का वाक् अब समय मिलेगा तो मैं तुम्हे शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा आज के विचारों का अभिप्रायः क्या है कि प्रत्येक मानव को तपस्वी हो जाना चाहिए। तपस्या करके ही राष्ट्र को उन्नत बनाता है माता अपने में देखो, पवित्र बन करके देखो, गृह को ऊँचा बनाती हैं, पितरजन मानो देखो, गृह को ऊर्ध्वा में लाने से गमनता को प्राप्त होते हैं। तो ये है बेटा! आज का वाक् आज का वाक् हमारा वेद का क्या कहता है वेदाम् भू वर्णानं वेदो अस्सुतं देवत्वां लोका मेरे प्यारे! देखो, वेद के मर्म को जानने वाला मानव अपने में प्रकाश को चाहता हैं, वेद एक प्रकाश है, और मानव के अन्तःकरण को प्रकाशित है। जैसे मानो सूर्य का प्रकाश मानव के नेत्रों को प्रकाशित करता रहता हैं। परन्तु देखो, वह वेद रूपी प्रकाश मानव का जो अन्तःकरण है वह मुनिवरों! देखो, साकल्य के रूप में पवित्र बनता हैं, तो मेरे पुत्रों! देखो, हम अपने में अपनेपन को अपने में धारण करके सागर से पार होने का प्रयास करें। हम प्रकाश में जाएं देखो, ज्ञान का नाम प्रकाश है, अज्ञान का नाम अन्धकार है, हम ज्ञान में चले जाएं वैदिक बन जाएं राष्ट्र और समाज को उन्नत बनायें राष्ट्र अपने में महान हो जाएगा तो ये है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः ये कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार हाने का प्रयास करना चाहिए और वह प्रयास केवल यही है कि माता-पिता पवित्र हों, बाल्य भी संरक्षण में रमण करने वाला हो और परमात्मा के समीप जाने वाला मानव समाज हो, जिससे उसमें देखो, विकृतता न आए तेजस्वी प्रणो ये है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा अब वेदों के मन्त्रों का पठन-पाठन होगा। ओ३म् देवाः आभ्यां रथप्राण वाचन्नमा रथं वायु गतं रथाः ओ३म् तनु रथाप्रा.....।०३ मार्च १९९१

९ मृत अमृत बोध १५-०३-१९९१

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं और जितना भी यह जड़-जगत् अथवा चैतन्य-जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल मं प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा हमारे पुरोहित हैं और पुरोहित उसे कहा जाता है जो पराविद्या के देने वाला है।

दो विद्याएं

हमारे यहाँ, विद्या के सम्बन्ध में नाना प्रकार का विचार-विनिमय होता रहा है। दो प्रकार की विद्या का हमारे यहाँ विश्लेषण होता रहा है-एक परा-विद्या है, एक अपना है। अपना-विद्या उसे कहते हैं, जिससे संसार का ज्ञान होता है और - उसे कहा जाता है, जिसमें (साधक) परमपिता परमात्मा की महती का वर्ण करता रहा है और उसमें आध्यात्मिकवाद और यौगिकवाद सदैव निहित रहता है। इसीलिए वे परमपिता परमात्मा पुरोहित कहा जाता है, जो दोनों प्रकार के ज्ञान और विज्ञान का स्वामित्व और निधित्व करने वाला है। तो हम उस परमपिता परमात्मा, जो महिमावादी और जो हमारा पुरोहित है, सखा है, हम उस परमपिता परमात्मा की महती का सदैव गुणगान गाते रहें। क्योंकि वह संसार का रचयिता है, वह रचने वाला है इसीलिए, हम विचार-विनिमय की महिता अथवा उसके गुणों का सदैव गुणगान करते रहें।

प्रेरणा स्रोत

आज का हमारा वेदमन्त्र हमें कुछ प्रेरणा दे रहा है, क्योंकि परमपिता परमात्मा का जितना भी ज्ञान है, विज्ञान है, वह प्रेरणादायक है और इस संसार में जितनी भी प्रेरणाएं हैं, उन प्रेरणाओं का स्रोत हमारा हृदय माना गया है, और हमारे हृदय का जो समन्वय रहता है, वे परमपिता परमात्मा के हृदय से रहता हैं तो इसीलिए हृदय में नाना प्रकार की प्रेरणाएं आती रहती हैं और मानव उन प्रेरणाओं का स्रोत बना हुआ है। प्रेरणा पाता रहता है, प्रेरित होता रहता है और नाना प्रकार के क्रियाकलापों में सदैव वह रत्त रहता है।

हृदय की आकांक्षा

आओ, मुनिवरों! देखो, आज का हमारा वेद का मन्त्र कुछ कह रहा है। क्योंकि संसार में मानव जितने भी नाना प्रकार के अनुष्ठान करता रहा है, जितने भी संसार के क्रियाकलाप हैं, मानव जो भी करता रहता रहा है, सर्वत्र उसके गर्भ में कोइ न कोई प्रेरित (भाव) है, मानो कोई प्रेरणा है, और प्रत्येक मानव के हृदय में एक आकांक्षा लगी रहती है कि मैं आनन्द को प्राप्त करूं, क्योंकि प्रत्येक मानव आनन्द का उत्सुक रहता है। और वह नाना प्रकार के क्रियाकलापों में सदैव रत्त रहता है। अनुष्ठान कर रहा है, वह याग कर रहे हैं, कहीं आध्यात्मिक याग में परिणित हो जाता है और कहीं वह भौतिक-याग में रत्त हो जाता हैं परन्तु वह नाना प्रकार के क्रियाकलाप क्यों कर रहा है? बेटा! उसके पिछले विभाग में यह है कि प्रत्येक मानव अपने में आनन्द को प्राप्त करना चाहता है और उसके मनोनीत हृदय में एक ही प्रेरणा रहती है, एक ही आभा रहती है कि मैं आनन्द को प्राप्त करूं। परन्तु वह पुत्र से स्नेह कर रहा है, पुत्री से स्नेह कर रहा है, और भी नाना प्रकार के मानव क्रियाकलापों में रत्त हो करके, उससे वह यही चाहता है कि मैं आनन्द को प्राप्त हो जाऊँ और क्योंकि सत् हूँ, सत् और चित्त मेरे समीप हैं, उसके

पश्चात् भी वह आनन्द के लिए प्रेरित रहता है।

शरीर और आत्मा

मेरे प्यारे! देखो, मुझे बहुत-सी वार्त्ताएं स्मरण आती रही हैं। ऋषि-मुनियों का जो विचार है, वह बड़ा भव्य रहा है। राजा भी अपने राष्ट्र का पालन कर रहा है, मानो वह भी अपने राष्ट्र में एक अश्वमेध याग कर रहा है, कहीं वाजपेयी याग में लगा हुआ है, कहीं मानो अजामेध याग में परिणित हो रहाहै, नाना प्रकार से देखो, मानो राष्ट्र को उन्नति में लगाता है। उसके हृदय में यही प्रेरणा रहती है, कि मैं आनन्द को प्राप्त करूं।

देखो, मानव, एक दार्शनिक रूपों में गमन करता है, और एक मेरी प्यारी माता अपने में व्याकुल हो रही है और जब वह व्याकुल हो रही है तो एक दार्शनिक कहता है, हे मातेश्वरी! तू क्यों रूदन कर रही है? क्यों इस प्रकार व्याकुल हो रही है? तो माता कहती है कि मेरा पुत्र मृत्यु को प्राप्त हो गया है इसीलिए मैं मानो देखो, व्याकुल हो रही हूँ। वह दार्शनिक कहता है, हे माता! यह आत्मा तेरा पुत्र है या शरीर तेरा पुत्र है? मुनिवरों! देखो, माता मौन हो जाती है। यदि वह शरीर को अपना पुत्र कहती है तो शरीर तो ज्यों का त्यों शव के रूप में विद्यमान है और यदि वह आत्मा को अपना पुत्र कहती है, तो बेटा! आत्मा को माता नहीं जानती है कि आत्मा कितना विशाल है, कैसा उसका रंग-रूप है, परन्तु वह माता दोनों ही स्वरूपों में अपने में मौन हो जाती है। तो विचार आता रहता है कि दार्शनिक अपने में चिन्तन करता हुआ कहता है, हे ममब्रह्मा! तू व्याकुल न हो, क्योंकि ज्ञान ही मानो सार्थक तेरा गुण है। आत्मा का जो गुण है, वह ज्ञान और प्रयत्न है। तू आत्मा के क्षेत्र में रमण करने का प्रयास कर।

जमदग्नि-आश्रम में प्रकाश-चर्चा

मेरे प्यारे! आओ, आज मैं तुम्हें इस क्षेत्र में नहीं ले जाना चाहता हूँ। आज मैं तुम्हें, बेटा! एक ऋषि-मुनियों के क्षेत्र में ले ले जाना चाहता हूँ, जहाँ ऋषि-मुनि नाना प्रकार की उड़ाने उड़ते रहे है। वे अपने में बड़ी विचित्र उड़ाने उड़ते रहे हैं। बेटा! मुझे वह काल स्मरण आ रहा है, जब महात्मा महर्षि जमदग्नि-आश्रम में, बेटा! एक सभा हुई। क्योंकि हमारे ऋषि-मुनियों का एक मन्तव्य रहा है, चिन्तन करने का कि वे यह चाहते हैं, आध्यां भूः वर्णं ब्रह्मः वृत्तं देवाः , वेद का वाक्य कहता है कि देखो, इस भौतिक-जगत् को आध्यात्मिकवाद में जो परिवर्तित कर देता है, वही मानो देखो, बुद्धियुक्त अपने में रत्त रहता है। विचार-विनिमय क्या? मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ अन्धकार के ऊपर परम्परागतों से ही, विचार-विनिमय होता रहा है कि अन्धकार से हम प्रकाश में कैसे जा सकते हैं? कौन-सा ऐसा अनुष्ठान है, जिसमें हम सदैव रत्त रह सकते है?

मेरे पुत्रो! देखो, मुझे वह काल स्मरण आ रहा है, जिस काल में, बेटा! देखो, महात्मा जमदग्नि-आश्रम में एक सभा हुई थी और महर्षि जमदग्नि-आश्रम में उस सभा में नाना ऋषिवर विद्यमान थे, जिनमें बेटा! देखो, महर्षि प्रवाहण, महर्षि दालभ्य, महर्षि शिलभ, महर्षिदालभ्य, महर्षि रेणकेतु, देवर्षि नारद, महर्षि सोमव्रतीति और महर्षि वैशम्पायन और, मुनिवरों! देखो, इसमें ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धि, ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु, और ब्रह्मचारी व्रतीव्रता, मेरे प्यारे! श्वेत्ताश्वेतर और महर्षि भारद्वाज इत्यादि ऋषि-मुनियों का बेटा! एक समूह विद्यमान था, जिसमें बेटा! महर्षि पिप्पलाद और, मुनिवरों! देखो, चाक्रायणी गार्गी भी विद्यमान थी। मेरे पुत्रो! देखो, उस सभा में नाना ऋषि-मुनि अपने में एकान्त विद्यमान हो करके कुछ विचार-विनिमय करने के लिए तत्पर हुए।

मृत्यु-बोध

इतने में, बेटा! एक वेदमन्त्र महर्षि महात्मा जमदग्नि ने उद्गीत रूप में गाया और उन्होंने कहा, हे ऋषियों! तुम्हें यह प्रतीत है कि आज मैंने तुम्हें निमन्त्रित करते हुए, मानो कुछ विचार-विनिमय करने के लिए हम सब तत्पर

रहे हैं, और हमारा यही मन्तव्य है, ब्रह्मणा आवृत्तं देवतव प्रह्वा मृत्युंज्य ब्रह्वा कृतं देवः । उन्होंने कहा कि यह वेदमन्त्र क्या कह रहा था, कि संसार में मृत्यु क्या है? इस मृत्यु के ऊपर मानव, बेटा! परम्परागतों से अध्ययन करता रहा है, परन्तु मनन और चिन्तन करता रहा है और यह विचारता रहा है कि यह मृत्यु क्या है, जिसके ऊपर मानव अपने में रूदनयुक्त हो रहा है? मेरे प्यारे! देखो, उसमें जब वह प्रथम वेदमन्त्र का उद्गीत गाया, ऋषि अपने में मौन हो गये। अब ऋषिवर भी सर्वत्र मौन हो गये।

मेरे पुत्रो! इतने में चाक्राणी गार्गी उपस्थित हुई। चाक्राणी गार्गी ने यह कहा कि मेरे विचार में यह आता है कि शरीर का और आत्मा का विच्छेद होना ही, मानो देखो, इसी में अन्धकार प्रतीत होता है, मृत्यु प्रतीत होती है। आत्मा का विच्छेद हो गया शरीर में, मानो देखो, उसी का नाम मृत्यु है। इतने में, बेटा! देखो, महर्षि भृंगी ने कहा कि हे दिव्या! मैं यह जानना और चाहता हूँ कि देखो, आत्मा और शरीर का, दोनों का विच्छेद होने का नाम मृत्यु नहीं बनता। क्योंकि मृत्यु उसे कहते हैं, जो केवल अन्धकार है मानो शून्य-बिन्दु है, उसी को अन्धकार की प्रतिभा में रत्त कहते हैं।

परमाणुवाद और विकास

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि पिप्पलाद ने कहा सर्वणं ब्रह्वे कृतं देवत्वां अवृत्ति विधः मानो तुम यह कैसे उच्चारण कर सकते हो, ऋषिवर! कि मानो एक शून्य-बिन्दु में अन्धकार है? क्योंकि शून्य-बिन्दु में तो जगत् विद्यमान रहता है। क्योंकि यह जो संसार है, यह क्या है? यह जो जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, यह बिन्दु, और बिन्दु से विकास है और विकास में पुनः देखो, यह बिन्दु में परिणित हो जाता है। मानो देखो, जगत् का जो विकास है, यह परमाणुवाद है और परमाणुवाद में तुम यह स्वीकार करते हो कि देखो, अग्नं ब्रह्वे देखो, महतत्व के परमाणुओं की गति प्रारम्भ होती है, अन्तरिक्ष में परमाणुओं की गति हुई, वह परमाणु अग्नि के रूप में आए और अग्नि में अग्नि के परमाणुओं का देखो, जब उग्र रूप बनता है, तो उस समय आपोमयी जल के परमाणु उत्पन्न हो जाते हैं और जल के परमाणुओं से स्वाभाविक गुरूतव उत्पन्न हो जाता है। मानो देखो, परमाणुओं से ही संसार का निर्माण हो जाता है। यह कैसे स्वीकार करेंगे? मेरे प्यारे! देखो, उनका भी विचार सार्थक बन गया, अमृतं ब्रह्मणा वृत्तं ।

अन्धकार से प्रकाश तक

मेरे प्यारे! महर्षि पिप्पलाद मुनि ने जब यह कहा कि देखो, यदि मेरा विचार लिया जाएं तो एक वेदमन्त्र मुझे स्मरण है और वेदमन्त्र कहता है, अन्धकारां भूः वर्णनं ब्रह्वे कृतं देवत्वं प्रह्वा वर्णस्सुति असुतां देव धनं ब्रह्वा । महर्षि पिप्पलाद मुनि ने ब्रह्मवेत्ताओं के मध्य में कहा कि मेरे विचार में तो मृत्यु मानो देखो, अन्धकार को कहते हैं। अन्धकार को त्यागा और मृत्यु चली गई, प्रकाश आ गया और वही प्रकाश मानव का जीवन माना गया है।

मेरे पुत्रो! जब महर्षि पिप्पलाद मुनि ने अपना यह व्यत्व्य दिया, अपना निर्णय दिया तो इसके ऊपर कुछ विचार-विनिमय होने लगा, परन्तु इसके ऊपर किसी ने कोई टिप्पणी अब तक नहीं की हैं। देवर्षि नारद मुनि ने कुछ टिप्पणी प्रारम्भ की। उन्होंने कहा, देखो, यदि अन्धकार मृत्यु है तो अन्धकारं भू वर्णनं , अन्धकार क्या है? उन्होंने कहा, अन्धकार उसे कहते हैं, जो जैसी वस्तु है, उसको वैसा न उच्चारण करना ही, मानो देखो, अन्धकार कहा जाता है। यदि जैसी वह वस्तु हे, उसका उसी प्रकार का जब विश्लेषण होता है, अथवा उसके ऊपर विचार-विनिमय होता है और मानव समाधिष्ट हो करके भी विचार-विनिमय करता है, उसका जो अन्तिम तथ्य माना गया है, उसका नाम प्रकाश माना गया है। परन्तु अन्धकार उसी को कहते हैं, जो जैसा नहीं है, उसे उस प्रकार का वर्णित किया जाता है।

मेरे पुत्रो! देखो, वह ऋषि-समाज में अवृत्तम् उद्गीत गा करके अपने में मौन हो गये। मेरे प्यारे! पिप्पलाद

मुनि ने जब अपना यह निर्णय दिया। इतने में, बेटा! देखो, संध्या का काल हो गया, संध्या का काल होते ही ऋषि-मुनियों ने कहा कि इसके ऊपर विचार-विनिमय कल प्रातःकालीन् होगा। परन्तु अब तो इस प्रकार हमारा जो वर्णनं वृत्ति देवात्वां संध्या-काल आ गया है, सूर्य और रात्रि का, दोनों का सम्मिलन हो गया है, अब हम मानो यह विचार नहीं करेंगे। सन्धि का काल हो गया। मेरे प्यारे! सब ऋषि-मुनि अपने-अपने कक्ष में जा पहुंचे।

पिप्पलाद और शकुन्तका की प्रकाश-चर्चा

महर्षि पिप्पलाद मुनि को बहुत समय हो गएं थे मानो देखो, उनका आश्रम भी निकटतम था, वहाँ से सांत्वना दे करके, बेटा! अपने आश्रम के लिए प्रस्थान किया। वह अपने आश्रम में पहुंचे तो वहाँ उनकी पत्नी शकुन्तका, तेरे प्यारे! ऋषि के चरणों को स्पर्श करके व्याकुल होने लगी। उन्होंने कहा, देवी! सात वर्षीय पुत्र था, वह मृत्यु को प्राप्त हो गया है। हे प्रभु! इसीलिए में व्याकुल हो रही हूँ। उन्होंने कहा हे दिव्या! तुम्हें यह प्रतीत है कि मैं ब्रह्मज्ञान की वार्त्ता प्रकट करना रहता हूँ और ब्रह्मवेत्ताओं में मैं अपना निर्णय देता रहता हूँ कि मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नहीं होती है। हे देवी! तुम ऐसा उद्गीत गा रही हो कि जिससे मुझे विश्वास नहीं हो रहा है कि जब मैं यही कह रहा हूँ कि मृत्यु कोई वस्तु नहीं है, तो तुम व्याकुल क्यों हो रही हो?

शरीर-संरचना का रहस्य

मेरे पुत्रो! देखो, दद्ड़ीय गोत्र में उनका जन्म हुआ था, देवी का, वह महान् थी, परन्तु ब्रह्मवेत्ता होने से उन्होंने कहा तो प्रभु! यदि मानो देखो, यह मृत्यु कोई वस्तु नहीं होती तो, हे प्रभु! यह मेरा शरीर क्या है? उन्होंने कहा यह जो तुम्हारा शरीर है, यह परमाणुओं का संघात है और यह परमाणु देखो, अपनी आभा में भ्रमण करने लगते हैं और परमाणु ही बलवती हो करके एक-दूसरे परमाणु को जन्म देते हैं और जन्म देने से ही सर्वत्र मानो यह शरीर इतना प्रबल हो जाता है। तुम्हें यह प्रतीत हैं कि माता के गर्भस्थल में शिशु रूप होता है, और वही शिशु रूप माता की लोरियों का पान करता है। लोरियों का पान करके माता के संरक्षण में मानो देखो, परमाणुओं से माना बलवती होता रहता है। और वही बाल्य जब बलवती हो करके देखो, वह अमृतम् देखो, दुग्धां ब्रह्वा माता की लोरियों को त्याग करके वह मानव प्रकृति के, माता वसुन्धरा के क्षेत्र में आ जाता है, माता वसुन्धरा के गर्भ से जो नाना प्रकार के खाद्यान्न उत्पन्न हो रहा है, अथवा खनिज उत्पन्न हो रहा है, परमाणु स्पर्श होते रहते हैं और बलवती होता रहता है, वह युवा-अवस्था को प्राप्त हो जाता है। युवा से मानो देखो, वृद्धपन आ जाता है। हे देवी! देखो, यही तुम्हारा शरीर है। यह परमाणुओं का संघात है।

शरीर से पूर्व परमाणु-गति

मेरे पुत्रो! देखो, देवी ने कहा प्रभु! चलो मैंने यह स्वीकार कर लिया है, परन्तु मैं यह जानना चाहती हूँ, जब मानो यह मेरा शरीर नहीं था तो यह परमाणुवाद कहाँ रहता था? उन्होंने कहा हे दिव्या! जब यह तुम्हारा शरीर नहीं था तो यही परमाणुवाद मानो देखो, माता के गर्भस्थल में विद्यमान था। माता के गर्भस्थल में इन्हीं परमाणुओं से तुम्हारे शरीर का निर्माण हो रहा था। माता के गर्भस्थल में निर्माणवेत्ता निर्माण कर रहा था और वह निर्माणं ब्रह्मः वर्णनं ब्रह्वे कृतम् मानो वही परमाणुवाद है, जो माता के गर्भस्थल में निर्माणवेत्ता निर्माण कर रहा था और वह निर्माणं ब्रह्मः वर्णनं ब्रह्वे कृतम्ः मानो वही परमाणुवाद है, जो माता के गर्भस्थल में मानो एक बिन्दु में शिशु है और वह शिशु ही, मानो परमपिता परमात्मा उसका निर्माण करने वाला है।

शरीर-निर्माणवेत्ता

वह जो देवता है, जो निर्माण कर रहा है, बेटा! इस मानव शरीर का मेरी भोली माता को ज्ञान नहीं होता, कौन निर्माण कर रहा है? कौन निर्माणवेत्ता है, मेरे पुत्रो! देखो, अमृताम् ब्रह्मः वह अमृत को प्राप्त हो रहा है। माता

की रसना के निचले विभाग में एक चन्द्रकेतु नाम की नाड़ी होती है, उस नाड़ी का समन्वय माता की पुरातत नाम की नाड़ी से होता है, और पुरातत नाम की जो नाड़ी है, उसका समन्वय माता की लोरियों से होता है, और वहाँ से पंचम नाड़ी बन करके चलती है, जिसका सम्बन्ध माता की नाभी से होता है और नाभी का समन्वय, हम जैसे शिशु जब माता के गर्भस्थल में होते हैं, उस नाभी का नाभी से समन्वय हो करके, बेटा! वहाँ से चन्द्रमा अमृत दे रहा है, सूर्य प्रकाश दे रहा है और आपोमयी ज्योति बन करके, बेटा!। वह तरल पदार्थो को प्रदान कर रहा है।

मेरे प्यारे! कैसा वह मेरा देव है! कैसा विज्ञानवेत्ता है! माता के गर्भस्थल में निमार्ण कर रहा है, परन्तु बहत्तर करोड़, बहत्तर लाख, दस हजार, दो सौ नाड़ियों का निर्माण हो रहा है। मेरे पुत्रो! देखो, माता को कोई ज्ञान नहीं हो रहा है, कौन निर्माणवेत्ता है? कौन निर्माण कर रहा है? नाना प्रकार का, मुनिवरों! देखो, निर्माण, लघु मस्तिष्क का निर्माण, रेणकेतु मस्तिष्क का निर्माण हो रहा है, वृत्तिका-मस्तिष्क का निर्माण हो रहा है, बेटा! बुद्धि भी कई प्रकार की हैं-बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा और प्रज्ञावी कहलाती हैं, ये मन की पवित्र धाराएं कहलाती है।

आज, बेटा! मैं प्रभु का वर्णन तो इतना नहीं कर पाऊंगा। विचार-विनिमय क्या? वे परमपिता परमात्मा निर्माणवेत्ता हैं। माता के गर्भस्थल में, बेटा! वह निर्माण कर रहा हैं मेरे पुत्रो! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार अपना विश्लेषण दिया अपनी वार्त्ता प्रकट की तो देवी ने नतमस्तक हो करके कहा हे प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ, भगवन्! जब मानो देखो, यह माता का गर्भाशय नहीं होता तो उससे पूर्व यह परमाणुवाद कहाँ रहता है? मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि कहत है, हे देवी! यही परमाणुवाद है, जब माता का गर्भाशय नहीं होता हो, तो यह परमाणु मानो कुछ वीरत्त्व रूप में होते हैं, कुछ वीरांगना रूप में होते हैं।

वीरांगना

मेरी पुत्री, जब देखो, ओजस्वी बन करके वीरांगना बन जाती है, तो बेटा! ये रज रूप में परमाणु विद्यमान रहते हैं और जब मानव ब्रह्मवर्चोसि का पालन करता है, वह ब्रह्मचारी कहलाता है, वीरत्त्व कहलाता है, बेटा! वीरत्त्व परमाणु मानो अपने में ही रत्त होते रहते है। मेरे प्यारे! वह वीरत्त्व कहलाता है, और मेरी पुत्री वीरांगना कहलाती है। देखो, वीरांगना उसे कहते हैं, बेटा! जो उद्गीत गाती हो, और उद्गीत गाती हुई, मुनिवरों! देखो, सर्पराज और मृगराज भी, मुनिवरों! देखो, इतनी निर्भयता उसके दिव्या के हृदय में समाहित हो जाती है कि वे भी चरणों की वंदना करते रहते हैं। मुझे वह काल स्मरण आ रहा है जब, बेटा! देखा चाक्राणी गार्गी गान गाती थी, वेदमन्त्रों का उद्गीत जब वह गाती थी, तो मेरे पुत्रो! देखो, सिंहराज, मृगराज, सर्पराज, मुनिवरों! देखो, ध्वनि को अपने में ध्वनित करते रहे हैं मुनिवरों! देखो, वही ध्वनित होना है और देखो, हम वीरत्त्व की रक्षा कर सकते हैं और वह वीरांगना कहलाती है।

ब्रह्मचर्य के आयाम

ब्रह्मचारी, बेटा! देखो, जब इसकी, वीरत्त्व की रक्षा करता है तो मेरे पुत्रो! वह ब्रह्मचारी कहलाता है। और ब्रह्मचारी उसे कहते हैं, जो ब्राह्मण होता है। और ब्राह्मण उसे कहते हैं, जो मुनिवरों! देखो, ब्रह्म को जानने वाला है। और जो ब्रह्म को जानता है, वह ब्रह्मचरिष्यामि बन करके ब्रह्म की चरी को जानता हैं। मेरे प्यारे! देखो, मैं दूरी नहीं ले जाऊंगा। वेद का मन्त्र तो बेटा! एक विशाल वन की परिधि में रमण कर रहा है और वह वन कहलाता है, परन्तु केवल विचार-विनिमय यह है कि जो दृष्टिपात है, वह देवताओं की सभा में, बेटा! सुशोभनीय हो जाता है।

मेरे पुत्रो! देखो, मुझे वह काल बारम्बार स्मरण आता है, ऋषि कहता है हे देवी! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने जब ब्रह्मचर्य की विवेचना की और जब वे एक शतपथ नाम ब्राह्मण की पोथी का निर्माण करने लगे तो उन्होंने एक प्रश्न किया उसमें कि यह ब्रह्मचारी कौन है? तो उन्होंने कहा कि-ब्रह्मचारी वह, है जो वीरत्त्व की रक्षा करने

वाला है। वही ब्रह्मचारी है। पुनः कहता है कि वह ब्रह्मचारी कौन है? वह कहता है, जो ब्रह्म और चरी को जानने वाला है, वह ब्रह्मचारी है। मुनिवरों! देखो, जो चरी और ब्रह्म को जानता है, क्योंकि चरी प्रकृति को कहते हैं और ब्रह्म कहते हैं, परमपिता परमात्मा को। जो अंगो-उपांगों से, दोनों को जानने वाला है वही ब्रह्मचारी है। उन्होंने पुनः जब यह प्रश्न किया कि ब्रह्मचारी कौन हे? उन्होंने कहा कि ब्रह्मचारी उसे कहते हैं, जो साधक होता है, और साधना के क्षेत्र में जा करके, जो प्रत्येक श्वास को मानो देखो, अपना मनका बना लेता है और मनका बना करके जो ब्रह्म-सूत्र में पिरोना जानता है, वही ब्रह्मचारी कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, आगे वेद का ऋषि कहता है, यह ब्रह्मचारी कौन है? उन्होंने कहा ब्रह्म और चरिष्यामि ब्रह्मणा तत्त्वं ब्रह्वे वृत्तं देवः जो ब्रह्मणां ब्रहे देखो, जो अपने को ब्रह्म में और ब्रह्म को सदैव अपने में स्वीकार करता है, वह ब्राह्मण कहलाता है।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे बहुत-सा काल स्मरण आता रहता है, ऋषि-मुनि इस प्रकार अपना मनन और चिन्तन करते रहे हैं। अपने जीवन को जो इस प्रकार चिन्तनमय बनाता है वह, मुनिवरों! देखो, वर्चोसि कहलाता है और वह वर्चस्वी बन करके, मुनिवरों! देखो, महान् बनता है। मेरे प्यारे! देखो, मैं दूरी नहीं जाऊंगा, विवेचना उतनी कर पाऊंगा, जितना हमारा वेद का मन्त्र कह रहा है। वेद का मन्त्र कहता है कि ब्रह्म की चरी क्या है? जो ज्ञान है और विज्ञान है, उसको क्रियात्मकता में लाने का नाम ही, मुनिवरों! देखो, चरी को चरना है। इसीलिए दृष्टिपात वह कहलाता है जो, मुनिवरों! ब्रह्म-विद्या में रत्त हो करके और ब्रह्मचरिष्यामि बन जाता है और ब्रह्मचरिष्यामि ही, मुनिवरों! ब्रह्म की चरी को चर लेता है।

मेरे प्यारे! देखो, वेद के ऋषि पिप्पलाद मे कहा, हे देवी! तुम्हारे आँगन में यह विचार आया अथवा नही? उन्होंने कहा प्रभु! आपको धन्य है! मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहता है कि देखो, ब्रह्मचारी ही देवताओं की सभा में देवतव को प्राप्त होता है। वह देवता कहलाता है, क्योंकि ब्रह्म कहते हैं परमात्मा को, चरी कहते हैं प्रकृति को, जो दोनों को एक साथ ले करके गमन करता है, उसमें विकृत नहीं होता, वह सदैव उसी में रत्त रहता है, बेटा! उसी का बखान करता है, वह ब्रह्मचारी है। तो विचार आता है कि वह देवताओं की सभा में देवतव के प्राप्त होता है। मेरे प्यारे! देखो, मेरी पुत्री जो वीरांगना है, वह वीरांगना कहलाती है, जो ब्रह्म वृत्तं ब्रह्वे देखो, वीरत्त्व और मानो देखो, चरी की रक्षा करती हुई अपने में वेदों का उद्गीत गाती है, वेदों का गान गाने वाली है, वह वीरांगना कहलाती है।

वीरत्त्व से पूर्व परमाणु-स्थिति

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि यह उद्गीत गा करके अपने में मौन हो गये। जब अपने में मौन हो गएं तो उन्होंने कहा हे प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ, भगवन्! जब यह वीरत्त्व भी नहीं होता, तो यह परमाणुवाद कहाँ रहता है, भगवन्! तो, मेरे प्यारे! देखो, पिप्पलाद मुनि ने कहा हे देवी! जब यह मानो देखो, वीरत्त्व भी नहीं होता, वीरांगनत्व भी नहीं होता, जो यही परमाणु मानो अन्न में विद्यमान रहते हैं, अन्नां भूः वर्णनं ब्रह्मः वृत्तं देवात्वां लोकाः उन्होंने कहा यह जो अन्नाद है, इसी में निहित रहते वाला यह जगत् है।

दो प्रकार के अन्न

उन्होंने कहा हे देवी! यही मानो अन्न है। प्रभु की सृष्टि का जो विधान है, वह कितना विचित्र है! उसका विधान कितना महान् कहलाता है! एक ही पौधा है, और उस पौधे पर दो प्रकार का अन्न है! एक अन्न को तो मानव पान करता है और एक अन्न को पशु पान करता है और एक अन्न को, मेरे प्यारे! पशु पान करता है! अरे, पशु पान करता है, वह दुग्धाहार कराता है, वह पय दे रहा है और जो, मुनिवरों! देखो, मानव पान करता है वह ओज और तेज की उत्पत्ति कर रहा है। मेरे प्यारे! एक अन्न को मेरी प्यारी माता भोजनालय में तपा रही है, और एक अन्न को, मुनिवरों! पान करता हुआ गो नाम का पशु पय दे रहा है। हे मानव! तू पान कर रहा है, अपने में

मानो देखो, ओज और तेज की उत्पत्ति कर रहा है। यह, मुनिवरों! देखो, एक ही पौधा है, और एक ही पौधे पर दो प्रकार का अन्न है।

मेरे प्यारे! पिता ने, सृष्टि के पिता ने मुनिवरों! देखो, सात प्रकार के अन्न को उत्पन्न किया। और वह सात प्रकार का अन्न बेटा! कौन-सा है? बेटा! मानो दो अन्न एक ही पौधे पर हैं। एक पौधा, भूः वर्णानं ब्रहे कृतम् ।

तीसरा अन्न - हूत

मेरे प्यारे! देखो, तीसरा अन्न अन्नाद कहलाता है। अरे, वही तो अन्नाद की प्रतिभा में रत्त रहने वालाहें मुनिवरों! देखो, देव ब्रहा , दो प्रकार का अन्न तो देवी! यह है और अन्न ब्रहे एक अन्न वह कहलाता है, जो हूत कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान है, और वह मानो देखो, अग्नि के मुखारबिन्दु में हूत कर रहा है और वह हूत करता हुआ मुनिवरों! देखो, स्वाहा कह करके अपने साकल्य को, चरू को अग्नि के मुखारबिन्दु में परिणित कर रहा है। क्योंकि यह जो अग्नि हे, यह देवताओं का मुख कहलाता है और देवताओं के मुख में, बेटा! देखो, याग कर रहा है, हूत कर रहा है। मुनिवरों! वह देवताओं को प्राप्त हो रहा है। मेरे प्यारे! वह देवयाग कहलाता है, क्योंकि देवता उससे तृप्त हो रहे हैं। वह देवतव कहलाता है, क्योंकि अग्नि हमारे अन्तर्हृदय में भी विद्यमान है, अग्नि ही, मेरे प्यारे! देखो, काष्ठों में, बाह्य-जगत् में जो अग्नि प्रसारित हो रही है, भेदन कर रही है, मेरे पुत्रो! देखो, वह जो भी अन्नाद अपने में ग्रहण करती है, वह सर्वत्रता को प्रदान कर देती है। मेरे प्यारे! देखो, उसे कहते हैं- हूत । हूत करने का नाम यही है। बेटा! यज्ञमान अपनी दिव्या से कहता है, हे देवी! आओ, हम देखो, अपने देवताओं के मुखारबिन्दु को कुछ अन्नाद देना चाहते हैं, जिससे देवता हमारे गृह में, मानो देखो, हमारी मनोवृत्ति को ऊंचा बनाते रहें। मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ कई प्रकार के यागों का चयन प्रायः वैदिक साहित्य में होता रहा हैं। तो इसे हूत कहा जाता है।

चौथा अन्न - प्रहूत

मुनिवरों! देखो, चतुर्थ जो अन्न है, उसे प्रहूत कहा जाता है। मेरे प्यारे! देखो, प्रहूत किसे कहते है? जो पुरोहितजन हैं, जैसा मैंने प्रारम्भ के शब्दों में वेद का उद्गीत गाते हुए कहा कि पुरोहित तो परमपिता परमात्मा है, परन्तु जो बुद्धिमान प्राणी होते हैं, त्याग और तपस्या में रत्त रहने वाले हैं, वे भी, मेरे प्यारे! देखो, पुरोहित कहलाते हैं। तुम्हें प्रतीत होगा, देखो, त्रेता के काल में जब पहुंचोगे तो तुम्हें पुरोहित ही दृष्टिपात आयेंगें। मेरे प्यारे! देखो, ... सोहजनी, मुज्फर नगर, १५-०३-१९९१

१० निर्वाचन-प्रणाली ३०-०३-१९९१

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं और उसका जो अनन्तमयी ब्रह्माण्ड है, वह प्रायः अनन्तमयी निहित हमें दृष्टिपात आ रहा है, क्योंकि एक-एक परमाणु में ब्रह्माण्ड है, और ब्रह्माण्ड अपनी आभा में सदैव निहित रहा है।

आन्तरिक-बाह्य जगत् समन्वय

सृष्टि के प्रारम्भ ये ले करके वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता परमपिता परमात्मा के इस अनन्तमयी जगत् में विद्यमान हैं, और उसी के ऊपर अपने वे अन्वेषण करते रहे हैं। अपने में चिन्तनीय विषय बना करके अपने को और ब्रह्माण्ड को, प्रायः बाह्य जगत् और आन्तरिक जगत् दोनों का समावेश करने का प्रयास करते रहे हैं, क्योंकि यही मानवीयतव कहलाता है। जो बाह्य जगत् है, वही अन्तर्जगत् है। तो बाह्य जगत् को जो आन्तरिक जगत् में दृष्टिपात करता है, मानो वह अपने में मनन वृत्तम् वह मनन कर रहा है और वह अपने में स्वीकार कर रहा है कि मैं परमपिता परमात्मा के जगत् में निहित हूँ।

चित्त मण्डल

मुनिवरों! देखो, एक मानव अपनी एकान्त स्थली में विद्यमान हो करके और अपने मनस्त्व, जो चित्त के मण्डल में वह अपने को ले जा रहा है, क्योंकि चित्त उसे कहते हैं, जहाँ नाना संस्कार अपने में विद्यमान रहते हैं तो इसीलिए वह आन्तरिक जगत् को बाह्य जगत् में उनको दृष्टिपात करने का प्रयास करता रहा है। तो मानवीय क्षेत्र में, बेटा! सृष्टि के प्रारम्भ से ही प्रायः यह क्रियाकलाप चल रहा है। मानो कहीं से यह स्वप्न भी हुआ है, कई जन्म जन्मान्तर भी व्यतीत हो जाते हैं उसी धारा में, परन्तु प्रयास भी करता रहा है, कि मैं परमात्मा के अनूठे जगत् और अनूठी यह जो प्रक्रिया है, मैं उसको जानने का प्रयास करता रहूँ।

वैदिक-प्रकाश में संसार अन्वेषण

मेरे प्यारे! हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रतिभा में मानव सदैव अपने में गमन करता रहा है और उसके मनोनीत हृदय में यह भावना रहती है कि मैं अन्धकार को त्याग करके प्रकाश में चला जाऊँ। प्रायः यह भावना प्रत्येक मानव की अथवा प्राणीमात्र की रही है, कि मैं अन्धकार में न जाऊँ। वह प्रकाश में रत्त रहना चाहता है और विचारता है कि, यह संसार क्या है? जब भी दार्शनिक अपनी आभा में विद्यमान रहते हैं, और दार्शनिक बन करके दार्शनिकत्व में रत्त हो जाते हैं तो वह अपनी दार्शनिकता से यह विचारते हैं कि यह संसार क्या हैं? क्या यही संसार है?- एक ही माता के गर्भस्थल से हमने जन्म लिया और जन्म ले करके बाल्यकाल में हमने अपनी जीवन को इस पृथ्वी माता की, वसुन्धरा की गोद में व्यतीत किया उसके पश्चात् युवा हो गये, तो मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार के क्रियाकलापों में रत्त हो गये, मानो वृद्धपन आ गया तो शैय्या पर विद्यमान हो गये। तो ऋषि अपने प्रश्न करते रहते हैं कि यही संसार है?

गर्भ-शिक्षा और ब्रह्मचर्याश्रम

मेरे प्यारे ऋषिवर! दूसरे स्वरूप में इसका निरूपण करते रहे हैं। वे कहते हैं कि वास्तव में संसार तो वह है कि माता भी इतनी बुद्धिमान हो कि अपने गर्भस्थल में शिशु को शिक्षा देनो वाली हो और वह बाह्य जगत् में आ

जाएं तो अपनी विद्या अध्ययन में इतना ज्ञान हो जाएं कि उसे प्रत्येक इन्द्रियों का ज्ञान हो जाएं। विद्या-अध्ययन को अभिप्रायः केवल यह नहीं है कि हमने केवल अक्षरों का बोध कर लिया है। अक्षरों के बोध को मानो शिक्षा नहीं कहते। शिक्षा उसे कहते हैं जो आचार्यों के चरणों में विद्यमान हो करके अपने में वे क्रियाकलाप करना है।

देव-पूजन

आचार्य के चरणों की वन्दना करता हुआ और वह देव-पूजन कर रहा है, वह देवताओं के पूजन में लगा हुआ है। क्योंकि पूजन का अभिप्रायः यह है कि प्रत्येक देवताओं के रहस्यों में रत्त रहना और उसे क्रियात्मक स्वरूप देने का नाम ही मानो देखो, वही हमारे यहाँ देवपूजा का अभिप्रायः होता है। पूजा का अभिप्रायः है कि उसके गुणों का हमें गुणाधान, अपने में धारण कर लेना चाहिए। मानो देखो, उसी का नाम पूजा है। जब इस प्रकार का देखो, पूजन प्राणी करता है और वह अपने में ब्रह्मवर्चोसि बन करके मानो देखो, श्वास की गतियों को वह प्रकृति के श्वास में परिणित कर देता है तो मानो देखो, विचार आता है कि यह संसार क्या है? मानो देखो, इसी का नाम संसार है।

गृहपथ्याग्नि-चयन

आगे चल करके गृह में प्रवेश हो गया है। गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन कर रहा है, मानो देखो, गृह को स्वर्ग बनाने में लगाहुआ है। वह स्वर्ग बनाता है। अपने में, अपने में ही मानो देखो, द्रव्य का सुदपयोग करता है और द्रव्य के सदुपयोग होने से मानो देखो, वह गृहपथ्य नाम की अग्नि कही जाती है। उस अग्नि का चयन करने वाला अपने में चयन करता रहा है।

वैश्वानर-अग्नि-पूजन और वानप्रस्थाश्रम

तो विचार आता है कि यह संसार का द्वितीय अमृत कहलाता है उसके पश्चात् गृह से उपराम हो गया तो अग्नि की पूजा कर रहा है वह अग्नि क्या है, बेटा! जिसका वह पूजन करना चाहता है? पूजन का अभिप्रायः, मानो देखो, अग्नि का चयन है। तो हमारे अन्तर्हृदयों में अग्नि प्रदीप्त हो रही है, उस अग्नि को जानने का नाम, देखो, उसकी पूजा है। जैसे माता के गर्भस्थल में एक अग्नि है और वह अग्नि, मुनिवरों! देखो, बाल्य को गृह में तपायमान करती है और तपायमान करके उसको अखण्डमयी ज्योति कहा गया है। जैसे, परमपिता परमात्मा के इस अनूठे जगत् में, मानो देखो, बाह्य और आन्तरिक जगत् में, एक अग्नि प्रदीप्त हो रही है, उस अग्नि को हमारे यहाँ वैश्वानर बन करके, और गृहपथ्य बन करके, वही अग्नि, मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्माग्नि बन जाती है।

ब्रह्माग्नि-पूजन और सन्यासाश्रम

ब्रह्माग्नि को ही अधिपति माना गया है, तो विचार आता रहता है, वही अग्नि, मेरे प्यारे! ब्रह्माग्नि बन करके अपने में चयन करती रही है। वही अग्नि, मेरे प्यारे! मानव को तपायमान करती रहती है। वही अग्नि, मानो देखो, ब्रह्मज्ञान की धाराओं में रत्त रहती है।

एक मानव कहता है, अहं ब्रह्मः, अहं वरणस्सुतं ब्रह्मः । वेद का वाक्य कहता है कि अहं ब्रह्मः, मानो देखो, मेरे अन्तर्हृदय में जो अग्नि जागरूक हो रही है, वही अग्नि मानो देखो, ब्रह्माग्नि कहलाती है और, ब्रह्माग्नि का जब मैं चयन करूंगा तो मेरा अन्तरात्मा और मेरी अन्तर्भावना मानो देखो, अग्नि में परिणित होती चली जाएगी। मेरे प्यारे! देखो, इसका नाम एक मानवी आभा में जीवन माना गया है, जिस जीवन के लिए मानव प्रायः प्रयत्नशील रहता है। एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके चिन्तन कर रहा है कि परमपिता परमात्मा का जो अनूठा जगत् है, मानो वह जगत् वह कहलाता है, जहाँ आत्मा और परमात्मा के मिलान की चर्चा करने लगता है, आत्मा-परमात्मा का मिलान करने के लिए वह सदैव तत्पर रहता है, वही उसका पूजन है, वह उसकी एक मनोनीत धारणा है और,

वही आन्तरिक जगत् से बाह्य जगत् में आना है और आन्तरिक जगत् से बाह्य जगत् में प्रवेश करना है। मेरे प्यारे! देखो, वेद का मन्त्र हमें यही तो कह रहा है, प्रब्रह्म कृतं देवत्वां चित्रो , मेरे प्यारे! देखो, यही तो चित्रण है। जब मानव ऐसा करने लगता है, तो अपने में प्रकाश के लिए, वह कल्पना करता है। और वेद का मन्त्र कहता है, मानव तू प्रकाश में जाने का प्रयास कर और वही जो प्रकाश है, वही तो तेरे जीवन की महानता और पवित्रता मानो गई है।

ब्रह्मचारी के मस्तिष्क का अध्ययन

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष क्षेत्रों में नहीं ले जा रहा हूँ, मुझे स्मरण आ रहा है, बेटा! मैं महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में तुम्हें ले जाना चाहता हूँ। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज, मेरे पुत्रो! देखो, अपने आसन् पर विद्यमान थे। शान्त मुद्रा में विद्यमान हैं, मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि और ब्रह्मचारी सुकेता दोनों ब्रह्मचारियों को उनके पिताजन मानो देखो, विद्यालय में वेदारम्भ के लिए उन्होंने उन्हें आवृत्त करा दिया और यह कहा कि प्रभु! ये हमारे दोनों ही बाल्य हैं, हमारी इच्छा यह है कि मानो देखो, यह अंगिरस गोत्र का है और यह मानो दद्दड़ीय गोत्र का है, इन दोनों ब्रह्मचारियों को मैं तुम्हारे विद्यालय में प्रवेश कराना चाहता हूँ। भारद्वाज मुनि बोले बहुत प्रियतम! तो भारद्वाज मुनि ने देखो, दोनों के मस्तिष्क का अध्ययन किया , क्योंकि जब मस्तिष्क का अध्ययन किया जाता है, तो वह जो अध्ययन है, वही तो महान् कहलाता है। मानो देखो, इस विद्या को जानने वाले, जब विद्यालयों में ब्रह्मचारी होते हैं तो यह राष्ट्र और समाज अपनी आभा में सदैव नृत्य करता रहा है और महानता में यह समाज आ जाता है।

रावण के मस्तिष्क का अध्ययन

मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहा है, मैं बहुत समय की वार्त्ता तुम्हें प्रगट कर रहा हूँ, जिस समय महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज के हृदय में यह कामना जागरूक हुई कि, मैं मानो देखो, वरुणकेतु ब्रह्मचारी को इस लंका का स्वामीतव निधित्व कराना चाहता हूँ। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि-मुनियों की और राष्ट्रवेत्ताओं की बड़ी एक भव्य सभा हुई और उस सभा में, मुनिवरों! देखो, वहाँ ऋषि-मुनियों का पदार्पण कराया तो महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज को उस सभा का सभापति नियुक्त किया गया और जब सभापति नियुक्त किया गया तो उसमें यह वाक्य आया कि देखो, इस ब्रह्मचारी का देखो, राष्ट्र ब्रह्मः देखो, इनका राज्याभिषेक होना चाहिए।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भूः वर्णम् जो वेद के मर्म को जानने वाले हैं, जो मानव का अध्ययन करने वाले हैं, वे विशेषज्ञ कहलाते हैं, तो उस समय महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज ने विशेषज्ञता की और उन्होंने वरुण के मस्तिष्क का अध्ययन किया। मस्तिष्क का अध्ययन करके उन्होंने विचारा कि एक नाड़ी है और वह सुषुम्ना के द्वार को होती हुई ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश कर रही है और वह मानो देखो, वही दूसरी नाड़ी है जो ब्रह्मरन्ध्र में जा करके ओझल हो रही है।

रावण के अयोग्य होने का वाचन

मानो देखो, इसी प्रकार उन्होंने नाना प्रकार की नस-नाड़ियों के ऊपर विचार-विमर्श किया और महात्मा कुक्कुट ने कहा कि यह जो नाड़ी मानो ब्रह्मरन्ध्र में जा करके लुप्त हो रही है, इसका अभिप्रायः यह है कि राष्ट्र का इसे अधिकार नहीं है, मानो देखो, दूसरी नाड़ी है, जो ब्रह्मरन्ध्र से होती हुई मानो देखो, रीढ़ के विभाग में परिणित हो रही है, उसमे मिलान हो गया है। इससे यह सिद्ध हुआ कि यह विज्ञानवेत्ता बहुत प्रबल है। मानो देखो, जब तीसरी नाड़ी का अध्ययन किया कि सुषुम्ना के द्वार से होती हुई नाड़ी के द्वारा वह गुणान कर रही है तो इसका अभिप्रायः यह है कि इसको आगे चल करके अभिमान हो सकता है।

मेरे प्यारे! देखो, इन नस-नाड़ियों का अध्ययन करने वाले मानो देखो, ब्रह्मवेत्ता कहलाए जाते हैं। और ब्रह्मवेत्ताओं ने जब यह वर्णः महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज से महात्मा पुलस्त्य ने कहा कि भगवन्! आप देखो, इनका राज्याभिषेक कीजिए। उन्होंने कहा -प्रभु! मैं इनका राज्याभिषेक नहीं कर पाऊँगा। उन्होंने कहा - प्रभु! क्यों? उन्होंने कहा कि मैं इसीलिए नहीं कर पाऊँगा कि इसे अधिकार नहीं है राष्ट्र का। क्योंकि राष्ट्र का जिसे अधिकार होता है तो उसमें अपनी प्रबलताएं होती हैं। मानो देखो, एक योगी योग करना चाहता है, योग में प्रवेश करना चाहता है,? जब वह योगी के समीप आता है, जिज्ञासु बन करके तो उसी जिज्ञासा से यह ज्ञान हो जाता है, योगी को कि यह मानो देखो, महान् जिज्ञासु नहीं हैं, यह केवल अपना नामोकरण चाहता है, वह अपने नामोकरण के लिए आया है, उसे अभिमान आ जाता है, और उससे धर्म और मानवता की मर्यादा नष्ट हो जाती है।

मेरे प्यारे! महात्मा कुक्कुट ने कहा इसीलिए ऋषिवर! आज मैं मानो देखो, अप्रहे आप बड़े तपस्वी हैं, जिज्ञासु हैं और आप मानो देखो, इसमें वृणां ब्रहे आप व्यर्थ ही अपने जीवन को समाप्त कर रहे हैं, क्योंकि आपको तो तपस्या करनी चाहिए। आप मानो कुटुम्ब के मोह में न आईए। क्योंकि जो महात्माजन हो करके विवेकी नहीं बनते हैं और वे केवल एक कुटुम्ब और आवृत्तियों को ले करके अपने को मोह ममता में परिणित कर लेते हैं, जाना उनकी तपस्या अतपस्या में परिवर्तित हो जाती है। हे ऋषिवर! आप तो तपस्वी हैं और आपका ऋषि-मुनियों में बड़ा नामोकरण है, मानो तुम्हारा उज्ज्वलता में स्थान है, परन्तु इस बात के मोह में मत आईए, क्योंकि राष्ट्रीय मोह तो उन्हें होता है, जो नामों की इच्छा में लगे रहते हैं, मानो देखो, नामोकरण की इच्छा में आप मत आईए। परन्तु महात्मा महात्मा पुलस्त्य मुनि महाराज मौन रहे।

मेरे प्यारे! महात्मा कुक्कुट ने यह कहा कि प्रभु! मैं इसका राज्याभिषेक नहीं कर सकूंगा, क्योंकि एक नाड़ी इसकी कहती है कि इसको अधिकार नहीं है, दूसरी नाड़ी कहती है, विज्ञानवेत्ता है और तीसरी नाड़ी यह कहती है कि यह आगे चल करके अभिमान में परिणित हो जाएगा, तो हे प्रभु! मैं ऐसे राजा का राज्याभिषेक नहीं कर पाऊंगा।

राष्ट्र का अधिकारी

देखो, जब भी निर्वाचन प्रणाली ऋषि-मुनियों के मध्य में प्रायः होती रही है, तो उसी समय, मुनिवरों! देखो, राष्ट्र एक ऊर्ध्वा में गमन करता रहा है। और, राष्ट्रीयता एक मानो देखो, वह कहलाती है, जो स्वतः अपने में कटिबद्ध रहने वाला हो, अपनी इन्द्रियों का संयम करने वाला हो, आत्मा परमात्मा की आभा में जो रत्त रहने वाला हो, परन्तु वही राष्ट्र का अधिकारी होता है।

अभिमान का मूल

मानव को अभिमान किसको नहीं होता, अभिमान उसको नहीं होता जो धर्म के मर्म को जानता है। धर्म के मर्म को जानने वाले को अभिमान नहीं होता और सांसारिक मानो देखो, जो अधुरे ज्ञान में रमण करता है, उसे यह अभिमान हो जाता है कि तू महान् बुद्धिमान है, तू वेदज्ञ है, तू राष्ट्रवेत्ता है। परन्तु इस प्रकार की जो धारणा बन जाती है,? उस धारणा में ही मानो देखो, अज्ञान निहित रहता है और तब अज्ञान में परिणित हो करके वह अभिमान में परिणित हो जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज ने कहा, हे राजन्! मैं राज्याभिषेक नहीं कर सकूंगा। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा पुलस्त्य अपने में मौन हो गएं और जब वह मौन हो गएं तो उन्होंने कहा, सम्भवम्, मैं इन्हीं का राज्याभिषेक चाहता हूँ। मेरे पुत्रो! देखो, महात्मा कुक्कुट ने कहा, हे ऋषिवर! आप इनका राज्याभिषेक कराईए, परन्तु देखो, यह राष्ट्र एक समय अग्नि का काण्ड बन करके रहेगा। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा कुक्कुट यह अपना

निर्णय दे करके पिछले भाग में विद्यमान हो गए। वह मानो देखो, उस अध्यक्ष पद को त्याग करके निचले भाग में विद्यमान हो गये।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा पुलस्त्य ने विचारा कि महात्मा कुक्कुट से अधिक योग्य और विवेकी महात्मा महान् पुरूष नहीं है और राज्याभिषेक कौन कर सकता है? मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भुंजु जो तपस्वी थे, वह भी आसन् पर विद्यमान हैं, परन्तु देखो, उन्होंने उनका आह्वान किया और यह कहा आईए, ऋषिवर! आप देखो, राज्याभिषेक कीजिए। उन्होंने कहा, प्रभु! जब महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज मानो देखो, निचले विभाग में विद्यमान हो गएं और आप मेरा आह्वान करना चाहते हैं, आप मुझे सभापति बनाना चाहते हैं! मैं उनका राज्याभिषेक करूं, तो आप मेरे नामों का यशोऽमृत-गान गाते रहना चाहते हैं? मानो देखो, जब उन्होंने कहा, नहीं, तुम राज्याभिषेक करो।

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भुंजु विद्यमान हो गएं और महात्मा भुंजु ने उस मानो अधिपथ्य, इस सभापतित्व को अपने में ग्रहण कर लिया और ग्रहण करके उन्होंने कहा, कहो कि क्या सब महापुरूषों की इच्छा है कि मैं इनका राज्याभिषेक करूँ? सबने एक ही स्वर में हो करके कहा कि जब महात्मा पुलस्त्य की इच्छा इन्हें राजा बनाने की है, तो राज्याभिषेक किया जाएं मेरे प्यारे! देखो, महात्मा भुंजु ने कहा, समाधानं ब्रह्मे कृतम्। वेद का मन्त्र उद्गीत गा करके मंगल ब्रह्म वर्णस्सुतं देवत्वं ब्रह्मः वर्णस्सुतं वाचस्सुतं देवत्वाम् मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने यह उद्गीत गाते हुए वेदमन्त्रों का उन्होंने उनका राज्याभिषेक किया। राज्याभिषेक करके वह अपने में विद्यमान हो गएं और विद्यमान हो करके उन्होंने अपना उपदेश दिया और यह कहा कि - मैंने आज राज्याभिषेक किया है, मेरी इच्छा यह है कि राष्ट्र अपनी आभा में गमन करता रहे और राजा अपने कर्त्तव्य का पालन करता रहे मानो देखो, हमारी यह सर्वत्रता की कामना है, हमारी यही इच्छा है।

राज्याभिषेकानन्तर वरुण का संदेश

मेरे प्यारे! देखो, उस समय वरुण का एक उपदेश, एक संदेश हुआ उस सभा-मंच पर विद्यमान हो करके। मुनिवरों! देखो, वरुण ने कहा कि जैसा ऋषि-मुनियों ने मेरा राज्याभिषेक किया है, मैं उनका बड़ा आभार प्रगट करता हूँ, क्योंकि राष्ट-प्रियता जब होती है, देखो, जब हमारे यहाँ एक कुलपति हो और वह राष्ट्रवेत्ता हो और मानो देखो, वह हमारे पुरोहित के रूप में विद्यमान हो, जैसे परमपिता परमात्मा सर्वत्र ब्रह्माण्ड के पुरोहित हैं और वह पुरोहित बन करके पराविद्या को देने वाले हैं। क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ में जिस परमपिता परमात्मा ने पराविद्या को दिया है और अपरा और परा दोनों को ही उन्होंने प्रदान किया तो मैं दोनों प्रकार की विद्या का अध्ययन करता रहूँगा। मानो दोनों प्रकार की विद्याओं का प्रभु के संरक्षण में चिन्तन करता रहूँगा। एक पराविद्या होती है, एक अपरा होती है। तो अपरा विद्या में रत्त रहने वाला महान् कहलाता है, अपरा में देखो, यह संसार है और परा में ब्रह्म है, चेतना है, ज्ञान है और विज्ञान है। परन्तु देखो, उसमें मुझे रत्त रहना है, जहाँ परमात्मा एक-एक परमाणु से गुथा हुआ दृष्टिपात आता है। मेरे प्यारे! उन्होंने अपना संदेश दिया कि मैं राष्ट्र को मानो देखो, अपने अश्वमेध-याग से, वाजपेयी-याग से, गो-मेध और यहाँ अश्वमेध-यागों से राष्ट्र को सजातीय बनाता रहूँगा।

गोमेध याग

क्योंकि देखो, राजा जब बनता है तो गो-मेध याग होना चाहिए। गो-मेध उसे कहते हैं, जिस राजा के राष्ट्र में दुग्ध देने वाला, पशु हो और वह दुग्ध देने वाला पशु हो, गो-धन हो। क्योंकि राष्ट्र की सबसे प्रिय देखो, वह गो-धन सम्पदा होती है। उसके पश्चात् देखो, उसके प्रति हमें याग करना चाहिए। अमृतां भूः वर्णम् और देखो, अन्य धन होना चाहिए। यहाँ याग का अभिप्रायः है कि गो के द्वारा, गो-दुग्ध और घृत के द्वारा प्रत्येक गृह में देखो, सुगन्ध

याग की होनी चाहिए, जिससे राष्ट्र अपने में पवित्र बनता रहे। देखो, उन्होंने, वरुण ने कहा, मेरी इच्छा यह भी है कि यहाँ गो-धन की पूजा हो। पूजा का अभिप्रायः यह है कि उसका उपयोग किया जाएं। मानो देखो, उसकी सेवा का अभिप्रायः यह है कि वह प्रसन्न रहे मानो जिस राजा के राष्ट्र में गो-धन प्रसन्न रहेगा और दुग्ध देने वाला पशु होगा उस राजा का राष्ट्र पवित्र कहलाता है।

मेरे प्यारे! देखो, वरुण ने कहा कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब राष्ट्र की चर्चा करते थे तो प्रायः यह कहते थे कि गो-घृत के द्वारा, दुग्ध के द्वारा ही याग होने चाहिए। प्रातःकालीन् प्रत्येक गृह में अग्नि प्रचंड करते हुए वेदमन्त्रों की ध्वनि से जब यागों की सुगन्ध आती हो, यागों की ध्वनियाँ आती हो और स्वाहा शब्द का मानो वहाँ प्रतिपादन किया जाता है, वे मानो देखो, राष्ट्र और गृह दोनों ही पवित्र होते हैं। उस राजा के राष्ट्र में महानता की प्रतिभा सदैव रत्त रहती है।

स्वाहा ध्वनि के रूप में राष्ट्रीय सहयोग

इस प्रकार जब उस ब्रह्मचारी ने यह कहा तो सर्व सभा मानो देखो, शून्यवत् हो गई और उन्होंने कहा मेरा तुम सहयोग दो। प्रजा से कहा, हे प्रजाओ! तुम मेरा सहयोग दो और सहयोग क्या है राजा के लिए कि प्रजा, प्रत्येक प्रजा अपने कर्त्तव्य का पालन करती रहे और राजा स्वतः याग करे तो प्रजा अपने में भी याज्ञिक बने और देखो, प्रातःकालीन् वेद-ध्वनि की मानो ध्वनियाँ होती रहें। वे मुनिवरों! देखो, प्रत्येक गृह में गुंजायमान रहें। ऐसा मुनिवरों! देखो, उन्होंने अपनी दीक्षा अमृतम् देखो, उन्होंने अपना संदेश दिया राष्ट्र को और यह कहा कि मेरा यही मानव अग्नि की धाराओं में अपने गृह को सुगन्धित करेगा मानव समाज अपने में मानवीयता के लिए सदैव तत्पर रहेगा और अपने में मानवीयता के लिए सदैव तत्पर रहेगा और मानवीयता का उत्सुक रहेगा और जहाँ मानवीयता आ जाती है, वहीं राष्ट्र और गृह दोनों पवित्र बन जाते हैं।

अश्वमेध-याग

मेरे पुत्रो! देखो, उस समय, जब वरुण ब्रह्मचारी ने यह कहा तो प्रजा आनन्दित हो गई और उन्होंने कहा, मैं गो-मेध याग ही नहीं, अश्वमेध यागों में भी परिणित होना चाहता हूँ। गो-मेध याग का अभिप्रायः तो यही है कि उनकी सेवाओं से उनकी रक्षा होनी चाहिए और देखो, अश्वमेध-याग की पूजा होनी चाहिए, क्योंकि अश्व नाम, राजा का है, मेध नाम, प्रजा का है। पर्यायवाची शब्दों में जब जाएंगे तो बहुत पर्यायवाची हमें सिद्ध होंगे, परन्तु विचार केवल यही है कि हम अश्वमेध यागी बनें और अश्वमेध उसे कहते हैं, मुनिवरों! देखो, अश्व नाम घोड़े का है, और अमृतम् अश्व नाम यहाँ राजा का माना गया है। राजा अश्व है और मेध नाम प्रजा का है। जब राजा और प्रजा दोनों सम्मिलित हो करके और प्रीतिपूर्वक अपने कर्त्तव्यवाद में संलग्न हो करके मुनिवरों! देखो, राष्ट्र के और समाज के लिए क्रियाकलापों में सदैव रत्त रह करके याग करते हैं, तो मानो देखो, वह अश्वमेध-याग कहलाता है। राजा कोई भी कार्य ऐसा न कर पाए, जिससे समाज से विपरीत हो जाएं या समाज में अशान्ति हो जाएं यही तो अपने में शान्ति का आ जाना है। वरुण ब्रह्मचारी ने राज्याभिषेक होने के पश्चात् यह प्रजा को और राष्ट्र को अपना संदेश दिया और वह संदेश यह है कि प्रत्येक मानव अपनी-अपनी आभा में रत्त रहे।

पिण्ड में ब्रह्माण्ड

मानो देखो, विज्ञान तो प्रत्येक मानव का मौलिक गुण है, क्योंकि परमपिता परमात्मा ने जब मानव के शरीर को रचा तो इस मानो बहुत सूक्ष्म शरीर में ब्रह्माण्ड को रच दिया है और ब्रह्माण्ड एक शरीर में नहीं, मानो इस शरीर में नाना ब्रह्माण्ड हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया। एक समय बाल्यकाल में मानो मध्यरात्रि में वेदमन्त्रों का चिन्तन कर रहे थे और वेदमन्त्र यह कह रहा था, ब्रह्माण्डं ब्रवे कृतं देवः कि हे प्रभु! इस ब्रह्माण्ड में

तो अनन्त ब्रह्माण्ड हैं, परन्तु तुम यह कहते हो कि पिण्डो ब्रह्माण्डे तो इस पिण्ड में कितने ब्रह्माण्ड हैं? उन्होंने कहा, इस पिण्ड में भी अनन्त ब्रह्माण्ड हैं। पिण्ड में परमाणु हैं। वे बाह्य जगत् में भी हैं। उस परमाणु का विभाजन करने से और योग में जाने से हमे यह सिद्ध होगा कि उस एक ही परमाणु में ब्रह्माण्ड है, अणु में ब्रह्माण्ड है। तो यह ब्रह्माण्ड अपनी आभा में अभ्योदय हो रहा है। तो विचार आता है कि ऐसा जो ब्रह्माण्ड है, ऐसी जो प्रतिभा है वह पिण्डो ब्रह्माण्डे में गमन करने वाला है। इसी प्रकार यह जो जगत् है, परमात्मा का अनुपम जगत् है, यह नाना ब्रह्माण्ड वाला है। ऐसी ही मानव का शरीर भी एक-एक परमाणु से गुथा हुआ है और प्रत्येक परमाणु में ब्रह्माण्ड है।

मेरे पुत्रो! देखो, वरुण ब्रह्मचारी ने कहा मेरे पूज्यपाद गुरुओं ने जब मुझे यह वर्णन कराया तो मानो देखो, मैं अत्यन्त प्रसन्न हो गया और मैंने अपने में यह स्वीकार कर लिया कि-प्रभु! के संरक्षण में हूँ। प्रभु के संरक्षण में हमें रहना चाहिए, क्योंकि-प्रभु! का संरक्षण ही हमारे लिए देखो, मानवीयता की आभा में रत्त रखने वाला है।

मेरे पुत्रो! देखो, इस प्रकार उनका संदेश राष्ट्र के लिए प्रियतम रहा। उन्होंने यह कहा कि अश्वमेध-याग होना चाहिए। और अश्वमेध-याग जो है वही, मुनिवरों! देखो, राष्ट्र और समाज को पवित्र बनाता है। तो इस प्रकार नाना प्रकार के यागों का चयन हमारे वैदिक साहित्य में प्रायः आता रहा है। तो वरुण ब्रह्मचारी ने अन्त में अपना यह उपदेश दिया कि संसार में देखो, मात् अप्रण प्रणेति मानो देखो, माताओं का हमें पूजन करना चाहिए। माताओं का पूजन क्या है? मानो देखो, उनका साहस पवित्रता में रत्त रहना चाहिए, और विद्यालयों में ऐसी मानो कक्षाएं होनी चाहिए, जिससे योग में, प्राण में, प्राण और अपान में रत्त रहने वाली शिक्षा हो। देखो, विद्यालय उससे महान् बनते हैं,जब मेरी पुत्रियों को गृह-सूत्रों का अध्ययन, देखो, वैदिक-मन्त्रों का अध्ययन कराया जाता है, उसका प्रभाव होता है और उसका क्रियात्मक चयन कराया जाता है। तो इस प्रकार, मुनिवरों! देखो, उन्होंने कोई भी ऐसी स्थली नहीं त्यागी, जिसको वह उद्गीत न गा सके, विज्ञान क्या और देखो, वह राष्ट्रवाद क्या क्योंकि राष्ट्रवाद ही इसे कहते हैं।

राष्ट्रवाद

राष्ट्रवाद कहते हैं,? अनुशासन को। जब मानव अपनी इन्द्रियों पर अनुशासन कर लेता है और उनके अनुसार बर्तने लगता है। इस प्रकार, राष्ट्र भी अनुशासन का नामोकरण कहा गया है। प्रजा और राजा दोनों सम्मिलित हो करके अश्वमेध-यागी बनें और देखो, धनुर्यागी बनें, जिससे धर्नुविद्या हो। धर्नुविद्या भी राजा के राष्ट्र में बहुत अनिवार्य है। धर्नुविद्या उसे कहते हैं, जहाँ देखो, ब्रह्मचारियों को धर्नुविद्या में सुयोग्य बनाया जाता हैं। अणु और परमाणु के माध्यम से उन्हें यन्त्रों में मानो प्रविष्ठ कराया जाता है। और वही, मुनिवरों! देखो, अपने में यन्त्रमार्गी बन करके सागर से पार होने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं।

इस प्रकार वरुण ब्रह्मचारी ने अपना उपदेश दिया और यह कहा कि राजा को समय-समय पर मानो पुरोहित की आज्ञा होनी चाहिए और पुरोहित के संरक्षण में जो राजा राष्ट्र का पालन करते हैं या कर्त्तव्य का पालन करते हैं, उससे राष्ट्र पवित्र बनता चला जाता है। मेरे पुत्रो! देखो, यह वाक्य उच्चारण कर, यह संदेश दे करके वह अपने में मौन हो गये। महात्मा पुलस्त्य ऋषि महाराज उपस्थित हुए और पुलस्त्य ने कहा, मेरी यह मनोकामना ही है कि राष्ट्र, देखो, जब भी ऊँचा बनता है, देखो, यौगिकता से ऊँचा बनता है। राष्ट्र मानो द्रव्य की लोलुपता वाले राष्ट्रवेत्ताओं से कदापि ऊँचा नहीं बनता। राष्ट्र ऊँचा जब भी बनता है जब राजा यौगिक हो। क्योंकि राजा को बलिष्ठ कहते हैं, जो पुरूषों में बलिष्ठ होता है। मानो देखो, इस प्रकार पुरोहित उन्हें कहते हैं, जो पराविद्या को देने वाले हों। इस प्रकार, देखा राष्ट्र और समाज अपने में पवित्रता की धारा को और यौगिक क्षेत्र में रमण करता रहे। वह भी अपनी स्थली पर विद्यमान हो गये।

मेरे प्यारे! देखो, विचार-विनिमय क्या? मैं बहुत दूरी चला गया विचार तो मैं कुछ और ही देने जा रहा था, परन्तु देखो, वह विद्यालयों की चर्चाएं और राष्ट्रवेत्ताओं की चर्चा में चला गया। मेरे प्यारे! देखो, महात्मा ब्रह्मे देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में, बेटा! ब्रह्मचारी अपने में शिक्षा-अध्ययन करने लगे। ये चर्चाएं, मैं तुम्हें कल प्रगट कर सकूंगा कि वह किस प्रकार की शिक्षाओं में रत्त रहे हैं। तो बेटा! देखो, आज का हमारा वाक्य क्या कह रहा है? वाक्य यह कह रहा है कि परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में देखो, अयोग्यता में सुयोग्यता नहीं होनी चाहिए। जब अयोग्यता में सुयोग्यता आ जाएगी, उसी समय देखो, समाज में अशान्ति आ जाएगी और अशान्ति यहाँ तक बलवती हो जाएगी कि उसमें स्वार्थपरता आ जाएगी। क्योंकि समाज जब भी ऊँचा बना है, वह जब बना है, जब निस्वार्थ आ गया है और निस्वार्थ में प्रेम होता है और स्वार्थपरता में मानो देखो, विभाजन की प्रतिक्रिया होती है। यह विभाजन की प्रतिक्रिया मानव के जीवन में नहीं होनी चाहिए।

तो विचार-विनिमय क्या? आज का हमारा वाक्य क्या कह रहा है? कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार-सागर से पार होने का प्रयास करें। बेटा! आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद दोनों ही मानो देखो, पारायण रहने चाहिए। दोनों की गतियाँ एक ही सूत्र में रहनी चाहिए। क्योंकि एक ही सूत्र के दोनों मनके हैं। ये मनके एक सूत्र में पिरोने से ही महान् बनते रहें, इस समाज और मानव का तब अपने में अभ्योदय होता रहेगा। तो आज का वाक् अब समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन होगा, क्योंकि आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ राष्ट्र के सम्बन्ध में अनुशासन के सम्बन्ध में विवेचितकर रहा था। तो आज का विचार यह सम्पन्न। अब वेदों का पठन-पाठन। नई सड़क, दिल्ली-६ दिनांक ३०-०३-१९९१

११ याग की अनिवार्यता ११-१०-१९९१

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं, और वह यज्ञोमयी स्वरूप माने गएं है। मानो याग उसका आयतन है, और उसका सदन है, और प्रायः वह उसी में वास कर रहा है।

याग में व्यापकवाद

आज का हमारा वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा के यज्ञोमयी स्वरूप का वर्णन कर रहा है, और यह कह रहा है कि वे परमपिता परमात्मा यज्ञों में निहित रहते हैं, क्योंकि यागों का अभिप्रायः यह है-जहाँ व्यापकवाद हो उस व्यापकवाद की आभा में एक याग उसमें ओत-प्रोत रहता है। क्योंकि जैसे मानव का एक अनुपम विचार होता है और उसका समन्वय हृदय से होता है और हृदय का समन्वय जब ज्ञान में परिणित हो जाता है, अथवा ज्ञान से सम्बन्ध हो जाता है, जो हृदय में एक व्यापकवाद आ जाता है और मानव के हृदय और परमात्मा के हृदय का, दोनों का समन्वय हो जाता है, तो मानो वह अपने में अभ्युदय हो जाना है। और, वह मानव इस संसार को यज्ञों में ही परिणित कर देता है, क्योंकि व्यापकवाद का नाम ही एक याग के रूपों में वर्णित किया गया है।

संसार रूपी यज्ञशाला

आज का हमारा वेदमन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गान गा रहा है, और परमात्मा के गुणों का वर्णन कर रहा है, क्योंकि परमपिता परमात्मा ने यह जो संसार है, यह एक प्रकार की यज्ञवेदी के रूप में मानो इसका गठन किया है, और इसका निर्माण किया है। क्योंकि वही निर्माणवेत्ता है, तो वह उसी में रत्त रहने वाला है, इसीलिए यह जो संसार रूपी यज्ञशाला है, यह परमात्मा का गृह है और सदन है, मानो देखो, वही उसमें वास कर रहा है। इसीलिए हम परमपिता परमात्मा को और उसके क्रियाकलापों को यज्ञोमयी स्वीकार करें और अपने में याज्ञिक बन करके अपने जीवन का महान् बनाते रहें।

याग-विविधा

एक आचार्य अपने ब्रह्मचारी को शिक्षा दे रहा है, मानो वह याग में परिणित हो रहा है। विद्यालय में शिक्षार्थी को एक शिक्षा में परिणित करने वाला है, वह मानो देखो, ज्ञान-विज्ञान में उसे परिणित कर रहा है, तो यह भी एक प्रकार की यज्ञवेदी है, क्योंकि वहाँ निर्माण हो रहा है। जैसे माता अपनी लोरियों का पान करा करके अपने बाल्य का निर्माण करा देती है, इसी प्रकार प्रत्येक मानव अपने में यागों में परिणित रह करके इसको यज्ञोमयी स्वीकार करके, मानो देखो, इसमें रत्त रहना चाहिए।

याज्ञवल्क्य-आश्रम में याग-शिक्षा

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में ले जाना चाहता हूँ, जहॉ विद्यालय में, मानो देखो, नैतिक शिक्षा में वह प्रायः प्रातःकालीन यागों का आयोजन किया करते थे। हमारे यहाँ, विद्यालयों में सबसे प्रथम मानो ब्रह्मचारी को जब शिक्षा प्राप्त होती, जो उसके पश्चात् उसे याग का सब विधानवत् वर्णन करते रहे हैं।

याग में नैतिकवाद

मुनिवरों! देखो, मुझे वह काल स्मरण है, जब महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने विद्यालय में

ब्रह्मचारियों के मध्य में विद्यमान हो करके शिक्षा दे रहे थे। क्योंकि आज मुझे याग के ऊपर अपना कुछ विचार-विनिमय करना है, याग की मुझे कहीं से प्रेरणा प्राप्त हो रही है, उसी प्रेरणा के आधार पर आज मैं यागों के सम्बन्ध में अपना कुछ मन्तव्य देना चाहता हूं। यूँ तो भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का आयोजन होता रहा है, परन्तु आज केवल यह कि वह जो नैतिक शिक्षा में मानो प्रायः यागों का आयोजन किया जाता है, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने विद्यालय में विद्यमान हो करके, ब्रह्मचारियों को जब वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते और यह कहते रहे हैं कि हे ब्रह्मचारियों! तुम प्रातःकालीन् अपने जीवन का यज्ञमयी वेदी स्वीकार करके, अपने जीवन को महान् बनाने की चेष्टा करो, उसी में रत्त रहने का प्रयत्न करो। तो जब इस प्रकार मुनिवरों! ब्रह्मचारियों को वह शिक्षा दे रहे थे तुम प्रातःकालीन् याज्ञिक बनो और तुम्हारा जीवन जो परमपिता परमात्मा ने निर्माण किया है, वह एक यज्ञशाला के रूप में है और वह यज्ञशाला में ही रमण करने वाला है, उसमें तुम सदैव रत्त हो जाओ।

सुविधा में याग-अपरिहार्यता

इस प्रकार जब ब्रह्मचारियों को वह शिक्षा दे रहे थे, तो एक यज्ञदत्त नाम का ब्रह्मचारी उपस्थित हुआ और यज्ञदत्त ने कहा हे भगवन्! हम याग कैसे करें? क्या-क्या साकल्य होना चाहिए। तो उस समय ऋषि ने कहा, तुम्हारी यज्ञशाला हो और यज्ञशाला भी भिन्न-भिन्न प्रकार के कोणों वाली होती है, परन्तु यज्ञशाला दस खम्भों वाली हो और यज्ञशाला मानो देखो, सुन्दर सजातीय होनी चाहिए और उसके पश्चात् तुम्हारा साकल्य हो। गो-रस, मानो देखो, गो-घृत हो और श्रद्धामयी तुम्हारा जो घृत है, उसमें ओत-प्रोत हो करके, तुम प्रातःकालीन और सांयकालीन, जब भी तुम्हें समय प्राप्त हो, उसके पश्चात् तुम प्राणों की आहुति देना प्रारम्भ करो, क्योंकि प्राण ही हमारे यहाँ एक देवत्त्व कहलाया जाता है।

वह कहता है, यज्ञमानं ब्रह्मणं वृत्ते ब्रह्मचारी कहता है, देखो, प्राणाय स्वाहा अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, और उदानाय स्वाहा, कह करके अपने प्राणों का उद्बुद्ध करता है। तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी का जब प्राण उद्बुद्ध हो जाता है तो वह विद्या रूपी जो तरंगें उसके हृदय में से उत्पन्न होने लगती हैं और वह विद्या को ग्रहण करता है। अपने में महानता के लिए सदैव उपास्य और उषां व्रते, देखो, उसी में रत्त रहने का प्रयास करता है।

मेरे प्यारे! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि- तुम्हारा साकल्य हो, इसमें अन्न हो, जिसमें श्रद्धा रूपी मानो घृत भी हो और वह स्थूल रूप में भी घृत के द्वारा तुम याग करो। जब इस प्रकार मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा तो वे बड़े प्रसन्नचित्त हुए। और उन्होंने कहा, तुम्हारी दस खम्बों वाली यज्ञशाला होनी चाहिए, जैसे परमपिता परमात्मा ने यह जो ब्रह्माण्ड की जब रचना की है, संसार रूपी यज्ञशाला की, तो मानो यह दस खम्बों वाला एक ब्रह्माण्ड कहलाया जाता है, जो दसों प्राणों के प्राण रूपी खम्भों के ऊपर स्थित रहता है और इसमें मानो एक-दूसरे में प्राणी आवास कर रहा है, प्राणी मात्र एक-दूसरे में ओत-प्रोत हो रहा है।

असुविधा में याग-नैतिकता

ब्रह्मचरिष्यामि के लिए भी अनिवार्य-समिधा याग

इस प्रकार, मुनिवरों! देखो, जब ऋषि ने कहा तो यज्ञदत्त ने कहा हे प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि जब मानो कहीं यज्ञमान एक यज्ञ करना चाहता है, और उसको यह सुविधा नहीं है कि यज्ञशाला भी नहीं है और देखो, साकल्य भी नहीं है, तो यह, भगवन्! याग कैसे करे? उन्होंने कहा, यज्ञमान को चाहिए कि वह यज्ञ करना चाहता है, चाहे वह ब्रह्मचारिष्यामि हो, परन्तु देखो, वह अग्न्याधान करे और अग्नि में मानो देखो, समिधा के द्वारा याग करे। समिधाओं के द्वारा याग करता हुआ कहे प्राणाय स्वाहा अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा,

और उदानाय स्वाहा, कह करके हूत करना चाहिए। अग्नि प्रदीप्त हो रही है, क्योंकि अग्नि देवताओं का मुख माना गया है। अग्नि में ही मानो देखो, सर्वत्र अमृतं ब्रह्मे यही अग्नि मानो देखो, माता के गर्भस्थल में जब प्रदीप्त होती है, तो इसी अग्नि को पान करता हुआ, मानो देखो, शिशु अपने में अग्निमयी स्वीकार करता है। वह यज्ञवेदी है, उसमें अग्नि प्रदीप्त हो रही है। इसी प्रकार अग्नि देवताओं का मुख होने से, मानो देखो, वह देवत्त्व कहलाता है तो उसमें प्राणों की आहुति देना चाहिए। हे ब्रह्मचारियों! तुम्हें, मानो देखो, प्रातःकालीन् अपनी अग्नि को प्रचण्ड करने के लिए प्राणों को अपना साक्षा बनाना होगा और समिधाओं के द्वारा अग्नि प्रदीप्त करके तुम याग करो। वह अग्नि उस समय तुम्हारा एक आवृत्त बन जाता है, तो उसके द्वारा तुम याग करो। वही तुम्हारा वर्चस्व बन जाता है और वर्चस्वी बनना इस संसार में बहुत अनिवार्य है।

जल-याग की नैतिकता

उन्होंने कहा, हे भगवन्! हम यह जानना चाहते हैं कि जब मानो देखो, अग्नि भी, कहीं मानो समिधा भी हमें प्राप्त न हो और अग्नि भी न हो तो भगवन्! यज्ञमान याग कैसे करेगा? हम उस याग को जानना चाहते हैं। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा, देखो, अग्नं ब्रह्मः यदि अग्नि भी न हो, समिधा भी न हो, तो तुम मानो देखो, जल के द्वारा, जल को अंजलि में ले करके कहो, प्राणाय स्वाहा अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा ।

सृष्टि में जल-याग

यह जल तुम्हारा अमृत है यह जल ही तो मानो देखो, बाल्य का ओढ़न और बिछौना रहता है। माता के गर्भस्थ में जब मानो देखो, शिशु होता है और शिशु के प्रवेश होते ही मानो देखो, जल ही, आपो ही इसका ओढ़न रहता है, आपो ही आसन् रहता है, और आपो ही इसमें पाशे बन करके, मुनिवरों! ओत-प्रोत रहता है। इसीलिए जल को अंजलि में ले करके कहो, प्राणाय स्वाहा अपानाय स्वाहा , व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा । कह करके और तुम हूत करने के लिए सदैव तत्पर हो जाओ और आहुति दो। मुनिवरों! देखो, यह आपो ही इस संसार का, इस ब्रह्माण्ड का अमृत कहलाया जाता है। वही अमृत है और वही वर्चस् है, वही मानो देखो, तुम्हारा उद्गीत है।

मुनिवरों! देखो, वेद का ऋषि कहता है कि तुम जल को अंजलि में ले करके याग करो। वेदमन्त्रों का उद्गीत गाते रहो और जल को अंजलि में ले करके स्वाहा की ध्वनि होनी चाहिए जिससे वायुमण्डल तुम्हारे स्वाहा से परिणित हो जाएं, उसमें भरण हो जाएं। तो इस प्रकार का तुम याग करने के लिए सदैव तत्पर हो जाओ।

तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा, माता के गर्भस्थल में जब शिशु होता है, तो सब देवताजन रक्षा करने के लिए आपो का आश्रय ले करके ही मानो गमन करते हैं। यह प्राणं ब्रह्मः, मानो यही जल समुद्रों से ले करके मानो देखो, वह वर्चस देवतव बनाता है और यह जो चन्द्रमा है, यही आपो को ले करके, मुनिवरों! उसमें परिणित कर देता है, तो परिणाम यह है कि अमृतम् देखो, यही इसका ओढ़न है, यही बिछोना है, और यही पाशे बन करके, बेटा! इसी में हम वास करते हैं।

रज-याग-नैतिकता

मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो ब्रह्मचारी यज्ञदत्त बोले कि हे प्रभु! हम जानना चाहते हैं जब कहीं ऐसा हो कि हमें मानों जल भी प्राप्त न हो तो याग कैसे करें? उन्होंने कहा, तुम पृथ्वी की रज को अंजलि में ले करके उस समय कहो कि प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा ....क्योंकि वह जो रज होती है वह भी तो मानो माता के गर्भस्थल से क्या, मानव को जो निर्माण है, वह रज के द्वारा होता है। इसमें गुरूतव

होता है, और उस गुरूतव के द्वारा, जैसे वैज्ञानिकजन अपने में गुरूतव परमाणु हो ले करके याग करते हैं, इसी प्रकार हमें भी याग करना चाहिए और कहना चाहिए अमृतम् देखो, इस पृथ्वी की रज को ले करके मैं याग कर रहा हूँ।

पिण्ड-विज्ञान

मुनिवरों! देखो, यह पृथ्वी है, जो गुरूतव-अमृत बन करके मानव को स्थूल बनाती है। जितना भी यह स्थूल जगत् मुझे दृष्टिपात आ रहा है, चाहे वह लोक-लोकान्तरों के रूप में हो, चाहे माता के गर्भस्थल में मानो देखो, स्थूल रूप में हो, जितना भी यह पिण्ड बन रहा है, वह आपो और देखो, गुरूतव के रूप में परिणित दृष्टिपात आ रहा है। तो हमें विचारना है कि हम गुरूतव को ले करके पिण्डों को दृष्टिपात करते रहें। एक मानव का पिण्ड बना हुआ है, जो माता के गर्भस्थल में जिसका निर्माण होता है। एक पिण्ड है, जो लोक-लोकान्तरों के रूप में दृष्टिपात आ रहा है। यह सर्वजगत् एक पिण्ड के रूप में दृष्टिपात आता है। हमें इस पिण्डाकार जगत् को दृष्टिपात करना चाहिए। यह लिंगमयी ज्योति कहा जाता है। यह मानो देखो, अपने में ज्योतिमान् बन करके संसार को ज्योतियों में परिणित करता है। यह गुरूतव की प्रतिभा में निहित रहता है। यह पृथ्वी का मानो देखो, गुण माना गया है।

मेरे प्यारे! देखो, यह आपं ब्रह्मः यदि तुम्हें जल भी प्राप्त न हों तो तुम पृथ्वी की रज को ले करके प्राण में प्राण को समेटते चले जाओ, तुम्हारा कल्याण हो जाएगा। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा, प्राणं ब्रह्मे वृत्तं अस्वतं देवा क्या तुम मानो-को ले करके देवत्त्व को प्राप्त हो जाओ।

केवल वाणी से याग की नैतिकता

मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने यह श्रवण किया और उन्होंने यह विवेचना की, तो ब्रह्मचारी यज्ञदत्त ने कहा, प्रभु! हम जानना चाहते हैं, यदि कहीं हमें, गुरूतव भी न प्राप्त हो, हमें पृथ्वी की रज भी प्राप्त न हो, भगवन्! तो याग कैसे करें? उन्होंने कहा, यदि तुम्हें यह भी प्राप्त न हो, तो तुम शान्त-मुद्रा में विद्यमान हो जाओ और उसमें देखो, अपनी वाणी से कहो प्राणाय स्वाहा अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, और देखो, समानाय स्वाहा उच्चारण करे उदानाय स्वाहा कह करके तुम हूत करना प्रारम्भ करो। स्वाहा उच्चारण करते रहो, क्योंकि जो परमात्मा का अनूठा जगत् है, यह परमात्मा की प्रतिभा कहलाई जाती है।

हे ब्रह्मचारियों! तुम वेद-मन्त्रों का उद्गीत गाते रहो और वेद-मन्त्रों का उद्गीत गाने से यह वायुमण्डल तुम्हारा पवित्रता को प्राप्त हो जाएगा, क्योंकि वेद-मन्त्रों का उद्गीत गाने से तुम जब स्वाहा करोगे तो वायुमण्डल में तुम्हारी यह जो ध्वनि है यह जाती रहेगी। यह अशुद्ध ध्वनियों को निगलती हुई और उसका शुद्धिकरण करती चली जाएगी इसलिए तुम मानो देखो, वेद-मन्त्रों का उद्गीत गाते रहो। शान्त-मुद्रा में विद्यमान हो करके, एकान्त स्थली में विद्यमान हो करके, तुम उस अपने हूत को वायुमण्डल में त्यागने वाले बनो, जिससे तुम्हारा मानवीय जीवन पवित्रता को प्राप्त होता चला जाएं।

इसीलिए वेद का ऋषि कहता है, हे ब्रह्मचारियों! तुम मानो देखो, मन-कर्म-वचन को एकाग्र करते हुए एकान्त स्थली में, मानो अपने को एकान्त में ले जाओ और मन को देखो, प्राण से समन्वय करो और देखो, मन और प्राण का आत्मा से समन्वय, हृदय से उसका समन्वय हो जाएं, जिससे तुम अपने अन्तर्हृदय में याज्ञिक बन करके परमात्मा की प्रतिभा को प्राप्त करने लगी। बेटा! जब ऋषि ने इस प्रकार अपना मन्तव्य प्रकट किया तो ब्रह्मचारी बड़े प्रसन्न हुए और ब्रह्मचारियों ने कहा, धन्य है!

मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक दशा में मानव को वेद-मन्त्रों का उद्गीत गाना चाहिए, जिससे वाणी तुम्हारी पवित्र हो जाएं और वायुमण्डल में वह ध्वनि मानो प्रविष्ठ करके अशुद्ध परमाणुओं को निगलती हुई चली जाएं और उसका

शुद्धिकरण हो जाएं और, शुद्ध परमाणुओं से, मेरे प्यारे! परमात्मा का यह जगत् भव्यता को प्राप्त हो जाएं।

विचार आता रहता है, मेरे प्यारे! आज मैं विशेषता में नहीं, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज प्रातःकालीन् ब्रह्मचारियों को इस प्रकार नैतिक-शिक्षा प्रदान करते रहते थे, क्योंकि यह जो ज्ञान है, यह गम्भीरता में प्रवेश रहता है। ज्ञान के ऊपर जो मानव अपने जीवन को ज्ञानी बना देता है, वह अपने में महान् बन करके संसार से पार हो जाता है। अब मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द की के उद्गार - ओ३म् यमा सर्वं भवितं देवं रथाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे अथवा गागर में सागर को भरण कर रहे थे। एक-एक वाक्य की व्याख्या में बड़ा विचित्रताओं का जन्म होता रहता है। तो आज मैं विशेष विचार न देता हुआ विचार केवल यह कि आज जहाँ हमारी यह वाणी जा रही है, हमारा आकाश में विचार जा रहा है, उस स्थली पर एक याग का आयोजन हुआ है और मेरा अन्तरात्मा याग के ऊपर सदैव बड़ा प्रसन्न रहता है और मैं यह कहा करता हूँ, यज्ञं ब्रह्मः ।

मैं सदैव अपने यज्ञमान को अपनी वार्त्ता प्रगट करता रहता हूँ, और यह कहा करता हूँ यजनं ब्रह्मः वरुणां ब्रह्म वसुन्धरं ब्रह्मः वर्चस्वता, यह कहता रहता हूँ, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और सदैव प्रत्येक गृह में देखो, द्रव्य का सदुपयोग होता रहे। जिस गृह में यागों के द्वारा, देखो, याग के द्वारा अमृतम् द्रव्य का सदुपयोग होता है, वह गृह एक आनन्द और प्रकाश में चला जाता है। तो इसीलिए, हे यज्ञमान! तेरे जीवन की प्रतिभा बनी रहे और जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे! ऐसा मेरा मन्तव्य रहता है।

वाममार्गीय समाज

वास्तव में तो देखो, यह जो जगत् चल रहा है, वह वाम-मार्ग का जगत् है। मैं वाम-मार्ग उसे कहा करता हूँ, जिससे मानव उल्टे मार्ग पर गमन कर रहा है, सुरा और सुन्दरी में गमन कर रहा है और अपने द्रव्य का दुरूपयोग करता हुआ वह सुरा में परिणित हो रहा है। तो यह जगत! मानो देखो, उल्टे मार्ग पर है। मैं उसकी विशेष आलोचना या अपने में उच्चारण नहीं करना चाहता हूँ, केवल यह कि यह जो जगत् है उसमें मैं इसको अमृतम् देखो, यज्ञमान का सौभाग्य स्वीकार करता हुआ कहता रहता हूँ, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और द्रव्य का तेरे गृह में सदुपयोग होता रहे! ऐसा मेरा मन्तव्य रहता है। क्योंकि वास्तव में तो आधुनिक काल का जो राष्ट्र है, वह वाम-मार्ग है और देखो, यह जो जगत् है, समाज है उसका यह भी वाम-मार्ग की प्रतिभा में लगा हुआ हैं। आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष नहीं, केवल यह कि उसमें अंकुर को, अपने में अंकुर जागरूक करना चाहिए। अंकुरित हो करके ही मानव देखो, अपने में महान् बनता रहता है।

तो आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी-अभी गागर में सागर की कल्पना की। इनका विचार मानो एक बड़ा भव्यता में परिणित रहता है। आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, केवल यह कि हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे! द्रव्य का सदैव सदुपयोग होता रहे और तुम्हारा जीवन महानता में परिणित होता रहे! अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः- मेरे प्यारे ऋषिवर! अभी-अभी महानन्द जी ने अपना भव्य विचार दिया। इनके विचारों में यज्ञमान के लिए अपना एक भव्यतम विचार रहा है। इनके विचारों में मार्मिकता और इनका हृदय प्रसन्नता में परिणित रहता है। इसीलिए आज का विचार हमारा क्या कह रहा है? कि प्रत्येक मानव अपने में याज्ञिक बने। याग के कई प्रकार के स्वरूप होते हैं। विचारों में याग हो, कर्म में याग हो, वह महान् बना रहे। आज का हमारा वाक्य अब सम्पन्न होने जा रहा है। शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगे। आज का वाक् समाप्त। अब वेदो का पठन-पाठन होगा।

याग चयन

आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि हम याज्ञिक बनें और इस याग को व्यापक रूप से अपने में धारण करें, जैसे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है, उसका यह संसार यज्ञमयी वेदी है। इसको इस प्रकार स्वीकार करके परमात्मा को हम एक-एक कण-कण में दृष्टिपात करते हुए अपने को व्यापकवाद में ले जाएं। आज का विचार अब सम्पन्न। अब वेदो का पठन-पाठन होगा। रजपुरा, मेरठ, दिनांक ११-१०-१९९१

१२ ध्रुवा कला १३-१०-१९९१

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जो परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं। और जितना भी यह जड़-जगत् अथवा चैतन्य-जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं।

प्रबल इच्छा

जब मानव अपनी गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो जाता है, तो उस परमात्मा की प्रतिभा अथवा उसकी महानता उसके समीप रहती है। और उन दोनों का परस्पर मानो समन्वय होता रहता है। इसीलिए प्रत्येक मानव उस परमपिता परमात्मा की महती हो अथवा उसके गुणों का सदैव गुण-गान रहता है, और उसकी प्रबल इच्छा यह बनी रहती है कि परमात्मा के इस अनन्तमयी ब्रह्माण्ड को मैं जानने वाला बनूँ और उसकी महती में मेरी महती और उसी में मैं रत्त हो जाऊं, क्योंकि जिससे इस प्रकृति के आवेशों से उपराम होकर के चेचन देव की आभा में रत्त हो जाऊँ! ऐसी प्रत्येक वाणी की प्रबल इच्छा बनी रहती है।

प्राण-प्रतिभा

वे परमपिता परमात्मा विज्ञानवेत्ता है, क्योंकि जितना भी विज्ञान है, चाहे वह भौतिक रूप में है, चाहे वह आध्यात्मिक रूप में विद्यमान रहता है, दोनों प्रकार के विज्ञान के गर्भ में वे परमपिता परमात्मा निहित रहता है। क्योंकि प्रत्येक मानव सृष्टि के प्रारम्भ से ही अपने में अन्वेषण करता रहा है, और प्राणों को जानने के लिए सदैव उत्सुक रहा है, मानो प्राणों के तारतम्य को जानने के लिए सदैव उत्सुक रहा है, कहीं मानो देखो, प्राणों की चेतना में ब्रह्म को दृष्टिपात करता रहा है, कहीं मानो, मानवीयता में प्रेरित होता रहा है। जो विशेष प्राणों में जो प्राणों का विभाजनवाद दृष्टिपात आता रहता है, वही विभाजनवाद बाह्यजगत् मे, परमात्मा के अनुपम जगत् में भी वही दृष्टिपात आता रहता है, क्योंकि परमाणुओं का आदान-प्रदान, तरंगों का आदान-प्रदान होता रहा है और उन्हीं तरंगों की आभा में कहीं शब्द व्यापक बन जाता है, कहीं मानो स्थूल जो तरंगे हैं, वे सूक्ष्म तरंगों के ऊपर अश्वत्थ हो करके वे भी मानो अपने को व्यापक रूप में धारण करती रही है। जिस प्रकार मानव अपने में अपनेपन का ही भान करता हुआ इन प्राणों की प्रतिभा को जानने लगता है। और प्राण और अपान के मिलान से ही, मेरे प्यारे! मानव इस प्रकृति और प्रकृति की बृही आभा में रत्त होता रहा है।

देव-प्रेरणा

आओ, बेटा! मैं इस सम्बन्ध में, प्राणों के सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं देने आया हूँ, केवल विचार-विनिमय यह है कि आज मैं, मुनिवरों! तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ मानव को एक-दूसरे से प्रेरणा प्राप्त होती है और अपने में प्रेरित हो करके प्रायः ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने उड़ने लगता है। मुनिवरों! तुम्हें इससे पूर्व काल में जाबाला पुत्र सत्यकाम की चर्चाओं के ऊपर विचार दे रहा था, मानो देखो, उनकी चार कलाओं के ज्ञान की चर्चाएं कीं। क्योंकि चार प्रकार का जो ज्ञान है, अथवा कलाएं हैं, वे वृषभ ने अथवा गऊ के बछड़े ने उन्हें प्रदान कीं। और जब उन्हें चारों कलाओं का ज्ञान कराने के पश्चात् उन्होंने (वृषभ ने) यह कहा कि द्वितीय जो ज्ञान है, वह तुम्हें अग्नि देवता प्रगट करा सकेंगे । मेरे प्यारे! देखो, हमारे इस मानव शरीर का जितना भी क्रियाकलाप

हो रहा है, उन क्रियाकलापों में देवता अपने-अपने देवत्त्व को प्राप्त हो रहे हैं।

अग्नि द्वारा सत्यकाम को चार कलाओं का ज्ञान

मुनिवरों! देखो, जब गऊओं को ले करके सत्यकाम अपने आश्रम को, अपने गुरुआश्रम को गमन करते हैं, तो मुनिवरों! देखो, अगला जो सांयकाल उन्हें हुआ, तो सायंकाल को गऊए अपने-अपने स्थान पर स्थिर हो गईं। वे जब मानो स्थिर हो गईं तो उन्होंने सायंकाल को याग किया और अग्निहोत्र किया। अग्निहोत्र मानो, गो-घृत और गो-दुग्ध के द्वारा वह याग करने लगे, अग्नि प्रचण्ड करते हुए। मानो देखो, अग्नं ब्रह्मणा वृत्ते वह रात्रि अस्तम् मानो देखो, याग करने के पश्चात् अपने में शान्त हो गये। रात्रि समय अपने विश्रामगृह में, अपने विश्राम में परिणित हो गये।

परन्तु अगला हो दिवस प्रातःकालीन् हुआ तो प्रातःकालीन् उन्होंने इसी प्रकार अग्नि को प्रदीप्त किया और अग्नि का आह्वान किया और यह कहा कि - अग्नि अग्नि देवत्वं प्रमणा प्रहा वृत्तं चतुष्टां कलः वृत्तं ब्रहे वृत्ताः मेरे प्यारे! इस प्रकार अग्नि का आह्वान करते हुए उन्होंने गो-दुग्ध और गो-घृत के द्वारा मानो याग किया और याग करने के पश्चात् नाना प्रकार का साकल्य अथवा चरू ले करके उसमें हूत किया, जब सुगन्धित वायु मण्डल बन गया, तो समय अग्नि देवता प्रगट हुए और अग्नि ने कहा, हे सत्यकाम! मैं तुम्हें चार कलाओं का ज्ञान कराए देता हूँ। उन्होंने, बेटा! उन चार कलाओं में सबसे प्रथम, ध्रुवा, ऊर्ध्वा, समुद्र कला और अन्तरिक्ष कलाओं का, मानो देखो, यह चार प्रकार का ज्ञान उन्हें दिया। अवृतम् मानो देखो, अन्तरिक्ष से ले करके अग्नि कला का उन्होंने वर्णन कराया और यह कहा कि, हे सत्यकाम! इन चारों प्रकार की कलाओं का तुम ज्ञान अपने में मानो परिणित करते हुए, अपने में धारण करते हुए तुम ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने उड़ी।

ध्रुवामयी विष्णु

मेरे प्यारे! देखो, वह सत्यकाम इनके ऊपर विचार-विनिमय करने लगे। सबसे प्रथम कला का नाम ध्रुवा कला कहा जाता है। आज के हमारे वैदिक पठन-पाठन में भी ध्रुवा का वर्णन आ रहा था ध्रुवा विष्णु वर्णानं ब्रह्म वृत्तं मानो देखो, जितना भी पालन होता है, वह सर्वत्र ध्रुवा में होता है। जब माता अपने पुत्र का पालन करती है, अथवा अपनी सन्तान का पालन करती है, तो माता ध्रुवामयी बन जाती है। पितर होने के पश्चात् भी ध्रुवा में गमन करने लगता है। मेरे प्यारे! ध्रुवा कहते हैं, जो मानो ऊर्ध्वागमन न करता हो, वह ध्रुवा में रमण कर जाएं। हमारे यहाँ, विष्णु नाम भी ध्रुवा माना गया है। मुनिवरों! देखो, ध्रुवा नाम विष्णु का है, जो पालन करने वाला है।

परमात्मा का विष्णु-याग

हमारे यहाँ, वैदिक साहित्य में, वैदिक मन्त्रार्थ में, मानो देखो, विष्णु नाम ध्रुवा का है और विष्णु ब्रह्मः वह ध्रुव विष्णु भी ध्रुवा में गमन करने वाला है, क्योंकि पालनकर्त्ता है। विष्णु ही तो पालन करने वाला है। जब आचार्यगण तीनों गुणों का वर्णन करते है, तो वर्णन करते हुए जब मानो विष्णु का वर्णन आता है, तो विष्णु को वर्णन करते हुए, उन्होंने ध्रुवा में विष्णु को माना है, क्योंकि ध्रुवा में पालन होता है। जब, मुनिवरों! देखो, प्रातःकालीन् और जब देखो, संध्या के काल में परमात्मा से भक्तजन अपना मिलान करते हैं, तो जिज्ञासु जब यथार्थता के गर्भ में प्रवेश करते हैं, तो वहाँ भी ध्रुवा का वर्णन आता है और यह कहा है कि ध्रुवां विष्णु ब्रह्मः वह विष्णु ध्रुवा में रमण करने वाला है।

मेरे प्यारे! देखो, वह परमात्मा का नामोकरण यहाँ विष्णु माना गया है, क्योंकि विष्णु ही ब्रह्मण । वह ध्रुवा में गमन करने वाला, जितना भी पालन करता है, वह ध्रुवा में होता है और वह विष्णु कहा जाता है। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में, पर्यायवाची शब्दों में जब हम प्रवेश करते हैं तो ध्रुवा में जहाँ मानो परमपिता परमात्मा का वर्णन

आता है, वही ध्रुवा में उस माता का वर्णन आता है, जो पालन करने वाली है। जहाँ माता का वर्णन आता है, वहीं सूर्य का वर्णन भी आता है, क्योंकि वह भी प्रकाश देता है और पालन करने वाला है, जहाँ मानो देखो, सूर्य का आता है, वहीं मानव के शरीर में जो आत्मा रहती है, उस आत्मा का नाम भी विष्णु रूप माना गया है। वह विष्णु इसलिए है क्योंकि वह भी पालन करने वाला है, जिसके रहने से मानव चैतन्य बना रहता है। वह उसका पालन करने वाला है। तो पालना के गर्भ में, मानो उसके मूल में वह विद्यमान रहता है। मेरे प्यारे! देखो, जितना भी ध्रुवागमन करने वाला है, वह सब पालना के मूल में आता रहा है। जहाँ परमपिता परमात्मा का वर्णन आता रहा है कि परमात्मा ध्रुवा में गमन करने वाला है। ध्रुवा मं होने से ही, मुनिवरों! देखो, उसको विष्णु कहा जाता है। वह पालन करने वाला है, इसीलिए उसको रक्षक कहते हैं। वह पालना में रत्त रहने वाला है। जब मानव सत्य में रमण करता है, तो सत्य भी पालन करने वाला है, क्योंकि सत्य में ही पालन होता है। तो इसीलिए हमारे यहाँ विष्णु नाम परमपिता परमात्मा का है और विष्णु नाम पालन करने वाले को कहा जाता है।

वैष्णवी माता

जहाँ परमात्मा का नाम विष्णु है, वहाँ विष्णु नाम माता का है, माता भी पालन करने वाली है। लोरियों का पान करा रही है, परन्तु बाल्य को शिक्षा दे रही है, शुद्ध-बुद्ध-निरंजन का उपदेश दे रही है और देते हुए कहती है, वह विष्णु बन करके ध्रुवा कहलाता है। मानो नम्र हो करके बाल्य को शिक्षा दी जाती है और जो शिक्षा देता है वह उसकी पालना कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो, माता जब मानो बाल्य की पालना करती है, तो मानो लोरियों का पान करा देती है। अपने अहम् भाव को त्याग करके जब वह पालना में रत्त और देखो, दुग्ध का पान कराती है, तो देखो, उससे पालना में रत्त हो रही है और वह विष्णु बन करके, मुनिवरों! देखो, उसे शिक्षा देती है और लोरियों का पान कराते-कराते, मुनिवरों! देखो, नैतिकता में परिणित करा देती है। तो उस माता का नाम विष्णु है।

वह विष्णु ही तो पालन करने वाला है। वह ध्रुवा में गमन करने वाला ध्रुवं ब्रह्मः , ध्रुवं प्राणे विष्णुः हे विष्णु! तू पालन करने वाला है। हे माता! तुझे वेद ने विष्णु कहा है। मेरे प्यारे! देखो, जब यह वर्णन आता रहा है कि विष्णु नाम माता का है, क्योंकि माता पालना करने वाली है। शिक्षा दे करके महान् बना देती है, तो मुनिवरों! देखो, जितना भी नम्रमा में मानो देखो, नम्र हो करके मानव अपने जीवन को व्यतीत करता है, वह ध्रुवा में विष्णु बन जाता है। वही विष्णु, मुनिवरों! देखो, माता के रूप में विद्यमान रहता है।

त्रिगुणी माता

माता का नाम, जहाँ सतोगुण के रूप में वर्णित किया गया है, वहीं माता का नाम मुनिवरों! देखो, रजोगुणी भी कहा जाता है। रजोगुण में बाल्य का शासन करती है और वह देखो, शासन करके शासनास्था बन करके बाल्य को अनुशासित में लाती है। वही माता पालन करने वाली है और वही मानो उत्पत्ति के मूल में विद्यमान रह करके वह तमोगुण में परिणित हो करके, मुनिवरों! देखो, तीनों गुणों का व्यवविधान होता रहा है। वही सतोगुण है, तो वही रजोगुण है और वही, मुनिवरों! तमोगुण के रूप में वर्णित माना गया है। एक ही मनके ये तीन मनके हैं और एक ही सूत्र में पिरोऐ जाते हैं। सूत्र में पिरोऐ जाने से, मुनिवरों! देखो, वह विष्णु के रूप में उसमें गुथे हुए रहते हैं, एक-दूसरे के पूरक कहलाते हैं। तो इसीलिए माता का नाम विष्णु कहा जाता है।

आत्मा का विष्णु रूप

जहाँ, बेटा! माता का नाम विष्णु माना गया है, आत्मां विष्णु ब्रह्मः वृत्तं देवत्वाम् हे विष्णु! तू आत्मा है और वह मानव के शरीर में विद्यमान रहता है। मानो देखो, अनुष्ठान में जब आत्मा विद्यमान होता है, तो वह आत्मा के कारण ही मानव का शरीर चेतनित बना रहता है। एक-एक परमाणु चेतना में रत्त रहता है, एक-एक तरंग मानो

चेतनित बनी रहती है। उसी आत्मा का जब मानव अपने में अन्वेषण करता है अथवा आत्मा का परमात्मा से मिलान करता है, तो योगेश्वर बन जाता है।

विष्णु के अलंकार

मैंने तुम्हें एक वार्त्ता बहुत पुरातन काल में प्रकट की थी। एक समय महानन्द जी से मुझे एक वाक्य प्रतीत हुआ कि विष्णु नाम आत्मा का है और आत्मा अक्षयक्षीर सागर में विश्राम करता है, मानो अक्षयक्षीर सागर में जब विश्राम करता है, तो लक्ष्मी उसके चरणों में ओत-प्रोत हो जाती है। जब लक्ष्मी ओत-प्रोत होती है, तो मानो देखो, वह नारद अपनी वीणा को ले करके वह गानं ब्रह्मे वह वीणा का स्वर लेने लगता है, और गन्धर्व उस समय गान गाने लगता है। ऐसा मानो देखो, प्रतीत होता है, आलंकारिक शब्दों में, हमारे यहाँ अलंकारों में मानो इतिहास नहीं होता, वह मानो देखो, अलंकार होता है। अलंकारों में ज्ञान को जानने के लिए, उपमा अंलकार दिया जाता है।

अक्षयक्षीर सागर और लक्ष्मी

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने इस प्रकार वर्णन करते हुए अक्षयक्षीर सागर नाम, मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ ज्ञान का सागर कहा जाता है। जहाँ ज्ञान और विवेक की धाराएं तरंगें होती हैं, उसका नाम अक्षयक्षीर सागर कहा जाता है। जब यह आत्मा मानो देखो, अक्षयक्षीर सागर में ज्ञानयुक्त हो करके और प्रकृति को नीचे दबा करके प्रकृति का अव्यव नहीं रह पाता, मानो उस समय वह ज्ञान के प्रकाश के सागर में रत्त हो करके, अक्षयक्षीर सागर में रत्त हो जाता है। तो उस समय मुनिवरों! देखो, आत्मा जब अक्षयक्षीर सागर में यह जो लक्ष्मी है, जो ममतव के रूप में विद्यमान रहती है, इसको वह नीचे दबा लेती है और नीचे दबा करके, मानो शेषनाग की शैय्या पर विद्यमान हो करके मेरे प्यारे! देखो, वह विष्णु रूप बन करके उसमें विद्यमान हो जाती है।

नारद और गन्धर्व

मेरे पुत्रो! ऐसा अंलकारों में अलंकृत किया गया है कि वह, मुनिवरों! देखो, नारद हमारे यहाँ वीणां ब्रह्मे वृतम् वह नारद नाम देखो, बेटा! देखो, मन को कहा गया है यह मन अपनी वीणा, चंचलता रूपी वीणा को त्याग करके, यह स्वरों को त्याग करके, वीणा को त्याग करके यह, बेटा! देखो, विष्णु का गान गाने लगता है। विष्णु के स्वरूप में, यह वीणा में परिणित हो जाता है और गन्धर्व जो मानो बुद्धि है, बुद्धि उस प्रभु का गान गाने लगती है और गान गा करके, मुनिवरों! देखो, देखो, वह विष्णु शेषनाग की शैय्या पर विद्यमान होता है।

शेषनाग

शेषनाग उसे कहते हैं, जो पांच फनों वाला शेषनाग है। मेरे प्यारे! देखो, पांच फनों वाला शेषनाग है। मेरे प्यारे! देखो, पांच फनों वाला शेषनाग कौन-सा है? जिसको नीचे दबाया करता है? जितने भी प्रकृति के अव्यव माने गएं हैं, अथवा जितना इस ब्रह्माण्ड में प्रकृतिवाद है, ममतववाद है, वह पांच अव्यवों में विद्यमान रहता है जिसको, देखो, पांच फनों वाला शेषनाग कहा जाता है।

मुनिवरों! देखो, पांच फनों वाला जो शेषनाग है, वह काम, क्रोध, मद, लोभ, और मोह रूप में विद्यमान रहता है। क्योंकि यदि साधना में, एक मानव रत्त हो गया साधना करते यदि क्रोध की मात्रा आ गई है, तो साधना में मृत्यु का कार्य है। जैसे, शेषनाग मानो देखो, स्पर्श करते ही मानव को मृत्यु के सदृश्य पहुंचा देता है, इसी प्रकार वह पांचो फनों वाला शेषनाग है। जिसके ऊपर, मुनिवरों! देखो, वह अमृतं ब्रह्म व्रणे वह विष्णु विद्यमान रहता है। और यह जो लक्ष्मी है, यह उनके मानो चरणों में ओत-प्रोत हो जाती है, चरणों को छूने लगती है और उसमें ओत-प्रोत हो करके, बेटा! यह क्षमा की पात्र बन जाती है। तो इसका परिणाम क्या? मुनिवरों! देखो, इसका नाम विष्णु है। यह अक्षयक्षीर सागर में रहने वाला है अथवा जिसके द्वारा यह सर्वत्र प्रकृतिवाद भ्रमण किया जाता

है और मानो देखो, प्राण साधना में प्रवेश करता हुआ अथवा वेद रूपी प्रकाश में रत्त हो करके, उस प्रकाश का, मुनिवरों! वह स्वामी बन जाता है और प्रकाश में जब रमण करने लगता है, प्रकाश में जब रत्त हो जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, वह वेद का अनुपम प्रकाश जो परमात्मा का क्या, प्रकृति का, जितना भी ज्ञान है, अथवा विज्ञान है, वह उसमें रत्त हो करके और, मुनिवरों! देखो, मन और प्राण का, दोनों का समन्वय करता हुआ यह ब्रह्मरन्ध्र से ले करके यह अथवा मूलाधार से ले करके, ब्रह्मरन्ध्र में यह अपनी स्थिति स्थिर बना लेता है। तो उस समय, बेटा! देखो, उसको ज्ञान और विज्ञान के अथवा देखो, उस सागर में प्रवेश हो जाता है, जहाँ इसे ब्रह्माण्ड साक्षात्कार दृष्टिपात आने लगता है।

मेरे प्यारे! सर्वत्र ब्रह्माण्ड के जो अनव्यय हैं, वे और अनव्ययां में यह ब्रह्माण्ड मानो देखो, विद्यमान हो जाता है, तो मेरे प्यारे! देखो, उस समय इस विष्णु का नाम आत्मा कहा जाता है। आत्मा का नाम विष्णु है, इसी के कारण मानो सर्वत्र तरंगों में, मानो एक तरंगे तरंगित हो करके वह उसी में चेतनाबद्ध रहता है, तो मेरे प्यारे!। वह चेतनाबद्ध हो करके वह देखो, जब तक यह चेतना शरीर में बनी रहती है, जब तक मुनिवरों! देखो, जब तक आत्मा विद्यमान है, अथवा चेतना के रूप में आत्मा का तारतम्य बना रहता है, अथवा प्राण स्वरूप इसके साथ-साथ गमन करता हुआ यह चेतना में परिणित रहता है, तो मेरे प्यारे! उस समय इस आत्मा का नाम विष्णु है। तो विष्णु क्योंकि वह पालन करने वाला है, वह पालना के मूल में विद्यमान रहता है, इसीलिए आत्मा का नाम विष्णु हे मेरे प्यारे! हम विष्णु को जानने वाले बने क्योंकि विष्णु ही हमारा पालन करने वाला है।

आओ, मेरे प्यारे! देखो, जहाँ परमात्मा का नाम विष्णु है, जहाँ देखो, माता का नाम विष्णु है, वहीं विष्णु नाम बेटा! आत्मा को माना गया है आत्मां विष्णु ब्रह्मणे वर्णास्सुतम् मानो यही तो अक्षयक्षीर सागर में, ज्ञान के सागर में जाने के पश्चात् यह ब्रह्माण्ड को जानने वाला बनता है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब यह काम, क्रोध, लोभ, मोह, और अहंकार यह जो अक्षयक्षीर सागर में जो शेषनाग है, यह इसमें सर्वत्र प्रकृति के अव्यय विद्यमान रहते हैं, उन प्रकृतिवाद को यह नीचे दबा करे और यह ज्ञान और विज्ञान के सागर में रमण करता रहता है।

सूर्य का विष्णु-रूप प्रकाशक सूर्य

मेरे प्यारे! विचार आता रहता है कि मानो जहाँ इस आत्मा का नाम विष्णु है, वैदिक साहित्य में कहा है, मन्त्रार्थ होने से सूर्य ब्रह्मां आत्मन् भू सर्वस्सुतं ब्रवे वेद का आचार्य कहता है कि जहाँ आत्मा का नाम विष्णु है वहीं पालन करने वालों में, बेटा! सूर्य भी आता है, सूर्य का नाम भी विष्णु है, जो प्रकाश के देने वाला है। प्राचीदिक मानो प्रातःकाल यह उदय होने वाला है, प्रकाश को ले करके, अन्धकार को अपने में धारण करके यह चला आता है और प्रकाश को देता हुआ, मेरे प्यारे! सत्रह मात्राओं का यह प्रकाश बन करके आता है। वनस्पतियाँ भी प्रकाश में सर्वत्र अपना-अपना क्रियाकलाप प्रारम्भ करने लगती हैं। मेरे प्यारे! देखो, माता अपने बाल्यों को उदय होते ही और उदय हो के माता अपने पुत्रों! को जागरूक कर लेती है। और, मुनिवरों! देखो, यहाँ पशु और देखो, जितने भी जलचर हैं, अथवा प्राणीमात्र है, वह सर्वत्र प्राणीमात्र देखो, उस आभा को प्राप्त होने लगता है।

मेरे प्यारे! सूर्य ऐसा मानो देखो, उद्गम है मानो यह पालन करने वाला है। मेरे प्यारे! देखो, मैंने कई कालों में तुम्हें वर्णन किया है, विज्ञान के माध्यम से, यदि विज्ञान के युग में हम प्रवेश करते हैं तो जहाँ सूर्य की किरण, मानो प्रातःकालीन सूर्य की किरण जब, मुनिवरों! देखो, रेणाकेतु मण्डल में प्रवेश करती है, जिसको हम मानो देखो, अष्टतं ब्रह्मे देखो, स्वाहा की दृष्टि से अमृत का जन्म देने लगते हैं, अमृत को हम पान करने लगते हैं। मेरे प्यारे! देखो, उस अमृत को जन्म देने वाला, बिखेरने वाला सूर्य कहा जाता है।

सूर्य विज्ञान और आयुर्वेद

वह सूर्य जब प्रातःकालीन् मानो देखो, रात्रि के अन्तिम चरण में, अपनी अमृतमयी आभा को यह बिखेर देता है और इसको प्रत्येक मानव, प्राणी मात्र अपने में पान करने लगता है। बेटा! देखो, वनस्पति भी जागरूक हो करके वह प्रकाश को अपने में धारण करने लगती है। मेरे प्यारे! देखो, माता अपने बाल्यों को जागरूक करके कहती है, बाल्यो! जागरूक हो जाओ। अब भानु उदय हो गया है, अब उसका उदय हो गया है अब उसका अपने में सेवन करो अथवा उसको इन्द्रियों के द्वारा सेवन करोगे तो तुम्हारा देखो, जन-जीवन महान और पवित्र बनेगा। इस प्रकार माताएं क्या प्राणी मात्र, बेटा! उसी की आभा में मानो जागरूक हो जाते हैं, जागरूक हो करके मानो देखो, हिमालय की कन्दराओं में ऐसी-ऐसी वनस्पत्तियाँ हैं, मानो देखो, उसी समय वह अपनी आभा को, अपने जीवन ज्योति को देखो, अपने में संग्रह करती देखो, सर्वत्र दिवस शान्त रहती हैं और वह प्रातःकाल रात्रि के अन्तिम चरण में उस आभा को प्राप्त करने वाली बनती हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, उनमें अमृत का भरण हो जाता है, उन औषधियों को वैद्यराज जानते हैं और वैद्यराज मानो देखो, उसी सूर्य घृणी नक्षत्र का और सूर्य से जब उस नक्षत्र का मिलान होता है उसी नक्षत्र में उस बूटी को मानो देखो, अपने में धारण करते हैं।

मेरे प्यारे! देखो, भिन्न-भिन्न रूग्णों मे वह दी जाती है। आज मैं आयुर्वेद के ऊपर या वनस्पतियों के ऊपर विचार देने नहीं आया हूँ। विचार-विनिमय केवल यह कि यह जो सूर्य, जो प्रकाशक है, प्रकाश देने वाला है, वह मानो देखो, उसको वेद विष्णु कहता है। और विष्णु इसीलिए कहता है, क्योंकि वह प्रकाशक है और प्रकाश को देने वाला है। मेरे प्यारे! देखो, वह ज्योति ले करके आता है। रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर लेता है चन्द्रमा की शीतलता को भी अपने में धारण करके उसे भी तपायमान कर देता है तो वह अदिति कहलाता है। वह आदित्य के रूप में, ब्रह्मचर्य को अपने में देखो, ब्रह्म की चरी को चरने वाला और देखो, ब्रह्म की चरी को चर करके वह प्राणी मात्र को रक्षार्थ के रूप में परिणित कर देता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, विचार हमारा क्या? हम यह विचार देना चाहते हैं कि वह जो पालन करने वाला है, अमृतं ब्रह्मः वर्णास्सुतम्ः मेरे प्यारे! देखो, सूर्य पालन करने वाला है, वह पालना के मूल में विद्यमान रहता है और उसी की पालना करने वाला मानव अपने में धारण करता हुआ सूर्य के विज्ञान में रत्त हो जाता हे, जो उसके पालना के रहस्यों को जान लेता हैं अथवा उसके मूल को जान लेता है, वह माता वसुन्धरा के गर्भ में, जो नाना प्रकार का खाद्यान्न और खनिज प्रदार्थ, मानो तपायमान हो रहा है अथवा अंकुर रूपों में विद्यमान रहता है, वह उसी में रत्त हो करके, बेटा! उसको जानने लगता है अथवा उसको अपने में धारण करने लगता है।

माताओं का सूर्य-विज्ञान

जो मेरी प्यारी माताएं उस सूर्य-विज्ञान को जान लेती हैं और सूक्तों का जो अध्ययन करने वाली, वेद में इस प्रकार के नाना प्रकार के मन्त्र आते हैं, परन्तु वे माताएं गर्भ-विद्या को जान लेती हैं और जान करके मानो देखो, नाभी के द्वारा प्रातःकालीन् उषा काल में वह उस बाल्य को जो गर्भ में विद्यमान है, उसको वह उन चरणों का अभ्योदय, मानो उसकी आभा को वह अपने में सिचंन करने लगती हैं। कहीं रसना के द्वारा, कहीं मानो देखो, श्वासों के द्वारा, इस प्रकार देखो, जब सूर्य और चन्द्र-प्राण का मिलान करते ही मुनिवरों! उसको अपने में संचय करने लगते हैं। ये विद्याएं, बेटा! देखो, माताओं को प्रायः देखो, हमारे यहाँ वैदिक साहित्य वालों ने इसका अध्ययन कराया है।

मैंने तुम्हें कई काल में रहा था कि महर्षि दुर्वासा मुनि महाराज इस विद्या को जानते थे और दुर्वासा मुनि, मुनिवरों! देखो, जिस देवता के सन्तान को जन्म देता हो, माता को उसी प्रकार का वही मन्त्र और उसी प्रकार का देखो, उसी समय निर्धारित करके और उस विद्या को पान कराया जाता है। माता जब उसी में रत्त रहती तो उसके

गुणों वाली सन्तान को जन्म देने वाली, मेरी प्यारी माताएं बनती रही है।

कुन्ती की देवसन्तान विद्या

मैं आज देखो, इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं, द्वापर के काल में देखो, महारानी जो कुन्ती थी वह बड़ी तपस्विनी कहलाती थी। मुझे उनका जीवन चरित्र जब स्मरण आने लगता है, तो भंयकर वनों में मानो देखो, वनस्पतियों की जो सुगन्ध अथवा उनकी तरंगों को ग्रहण करती रही है, और वेदमन्त्रों का उद्गीत गा करके उसी प्रकार सूर्य, देखो, सूर्य सिद्धान्त के ऊपर जितने भी वेदमन्त्र हैं, उनका प्रायः अध्ययन और वह यह चाहती है कि मैं इन्द्र जैसे इन्द्र देवता के - बालक को जन्म देने वाली माँ बनूं तो माता उसी प्रकार मन्त्र का अध्ययन करना, उसी प्रकार का तप करना और, मुनिवरों! देखो, वनों में जो औषधियाँ होती हैं, जैसे सुधती नाम की औषधि कहलाती है, एक मृचिका होती है, एक कुशकण्डी होती है, इन औषधियोंका खरल करके इन औषधियों का पंचाग बना करके जो माताएं पान करती रही हैं अनेक गर्भ से, बेटा! इन गुणों का वह सन्तान को जन्म देना चाहती है, इसी प्रकार मानो देखो, गुणो को ध्यानावस्थित करती रही हैं। मुझे कुन्ती का जीवन स्मरण है और भी नाना माताओं का जीवन भी स्मरण है।

आज मैं इस सन्दर्भ में जाना नहीं चाहता हूँ। विचार-विनिमय, मुनिवरों! केवल यह कि हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में जब ज्ञान और विज्ञान के ऊपर विचार-विनिमय किया जाता है, तो नाना प्रकार का ज्ञान-विज्ञान मानव के, मस्तिष्क से मेधावी में प्राप्त हो जाता है। और मेधा मानो देखो, वह प्रज्ञा से प्रेरणा पा करके, मुनिवरों! देखो, वह प्रकृति के सूक्ष्मतम रहस्यों को जानने लगता है। तो विचार आता रहता है मैं आज इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि हमारे यहाँ यह जो सूर्य है, यह देवता है अथवा पालन करने वाला है। यह प्रातःकाल मानो प्रकाश लेकर के आता है और उसी प्रकाश को हम जब ग्रहण करते हैं, तो मुनिवरों! देखो, कोई मेधावी बनता है, कोई बुद्धिमान बन जाता है, कोई प्रज्ञावी बन जाता है, कोई मेधावी और मुनिवरों! ऋतम्भरावदी बन करके परमात्मा की सृष्टि को जानने लगता है।

ध्रुवा में नम्रता

तो आओ, मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें नहीं प्रगट करने आया हूँ। केवल विचार-विनिमय यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए एक-एक कला में, बेटा! संसार का ज्ञान और विज्ञान विद्यमान रहता है जो सत्यकाम को अग्नि देवता ने प्रगट कराया। अग्नि देवता ने कहा ध्रुवा कला ध्रुवां विष्णु ब्रह्मणः यहजो ध्रुवा में विष्णु रहता है। जो संसार में मानो नम्र हो करके गमन करता है, मेरे पुत्रो! देखो, उसे परमात्मा की प्रतिभा प्राप्त होती है। जो मानो देखो, अभिमानी बन करके रहता है, वह परमात्मा की प्रतिभा उससे दूर चली जाती है। तो वह वेद का ऋषि कहता है ध्रुवा विष्णु वह ध्रुवा में मानव को गमन करना चाहिए। ध्रुवा में ज्ञान और विज्ञान मानो देखो, पालन करने की प्रवृत्ति उसमें और पालन करने वाला वे परमपिता परमात्मा, उन्हें प्राप्त होता रहता है। आत्मा का ज्ञान होता है और सूर्य का ज्ञान और विज्ञान उनके समीप आने लगता है।

उषा और सुनीता काल

मेरे प्यारे! देखो, वह सूर्य-विज्ञान अपने में कितना महान् रहा है। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें कहा है कि यह जो सूर्य है, यह ध्रुवा में मानो देखो, यह प्रातःकालीन उषा-काल में यह अमृत को बिखेरता है। प्रातःकालीन मानो देखो, प्रकाश को महान् जो तेजोमयी, जो उसे ऊर्ध्वा कहते हैं, उसे बिखेरता रहता है। सायंकाल को, मुनिवरों! देखो, यह अश्वपति बिखेरकर देखो, धारण जिसको सुनीता कहते हैं, उसको बिखेरता रहता है, सांयकाल हो जाता है, जहाँ रात्रि का दिवस का अथवा मिलान हो जाता है। जहाँ सूर्य-अस्त है और देखो, रात्रि अन्धकार का

सूचक आ गया है, तो मुनिवरों! देखो, वह अपने में ही अपनेपन का चिन्तन में लाता है, उसको संध्या काल कहते हैं। जहाँ परमात्मा का और आत्मा का दोनों का मिलन होता है, उसको सन्धि कहते है। मेरे प्यारे! देखो, वहाँ प्रकाशां भूः वर्णं आभ्यां ब्रह्मः लोकाम्।

तो मेरे प्यारे! देखो, आज मैं तुम्हें दूरी नहीं ले जा रहा हूँ, विचार-विनिमय क्या उस समय देखो, ब्रह्मचारी सत्यकाम को वहीं मुनिवरों! देखो, अपनी स्थली में गऊँओं के मध्य में विद्यमान हो करके इस प्रकार के ज्ञान की उपलब्धि उन्हें हो गई। इस प्रकार के ज्ञान और विज्ञान में वह रत्त हो गये। मेरे प्यारे! देखो, उन्हें एक प्रकाश हो गया। उन्होंने कहा - देखो, ध्रुवा-कला उसे कहते हैं, जिसमें पालन करने की क्षमता आ जाती है, क्योंकि पालन ध्रुवा में होती है। मेरे प्यारे! देखो, ऊर्ध्वा में अमृताम् देखो, बृहस्पति कहलाता है। जो मुनिवरों! देखो, वह विद्या का केन्द्र है, वेदां भूः वर्णानं ब्रह्मः ऊर्ध्वं ब्रहे वह ऊर्ध्वा में गमन करने वाला है।

मेरे प्यारे! देखो, आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार-विनिमय केवल यह कि आज मुनिवरों! देखो, मैंने ध्रुवा-कला की देखो, विवेचना दी इसकी कलाएं तो इतनी अनन्त हैं कि मैं इसको वर्णन करने में असमर्थ रह जाता हूँ। बेटा! परन्तु विचार-विनिमय केवल यह कि हमें, बेटा! विष्णु बनना है। मेरी प्यारी माता को विष्णु बनना है। वह ध्रुवा में ही पालन करती है, मानो वही रजोगुण में शासन करने वाली है वही तमोगुण में, बेटा! उत्पत्ति के मूल में विद्यमान रहती है। मेरे पुत्रो! यह तीन मनके कहलाते हैं, एक ही सूत्र में पिरोऐ जाते है, उसी में सूत्रित हो जाते है। तो विचार-विनिमय केवल यह कि मुनिवरों! देखो, हमें इस ध्रुवा को, ध्रुवा-कला को जानना चाहिए।

देखो, वह अग्नि देवता में, देखो, महात्मा ब्रह्मचारी, जो ब्रह्मचारी होते हैं ब्रह्मचर्य की और, बेटा! ब्रह्मचर्य की प्रतिभा का नाम अग्नि कहलाता है। जब वह अग्नि प्रचण्ड होती है, वह ज्ञान रूप बन करके, प्रेरित करके, मुनिवरों! देखो, उसे ब्रह्मचारी कहते हैं। हे ब्रह्मचारी! आ तुझे मैं चार कलाओं का ज्ञान करा देता हूँ। मानो सबसे प्रथम कला का नाम ध्रुवा, देखो, ध्रुवा है, उसके पश्चात् ऊर्ध्वा और मुनिवरों! देखो, पृथ्वी-कला और अमृतं ब्रह्मेः वर्णा , अग्नि-कला का उन्होंने वर्णन कराया। तो मेरे प्यारे! इन तीन वाक्यों की मैं चर्चाएं कल प्रगट कर सकूंगा।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि मुनिवरों! हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए और देखो, स्वयं विष्णु बन करके और विष्णु नम्रता का नामोकरण है, क्योंकि उसमें मानव पालन करने वाला है। वह पालना के मूल में विद्यमान है, तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महती को सदैव जानने वाले बनें। मेरे प्यारे! देखो, मुझे एक वार्त्ता प्रायः देवत्वाम् देवासुर संग्राम भी इसी प्रतिभा में ओत-प्रोत होता रहा है, जहाँ मानव की प्रवृत्ति में देवासुर संग्राम होता है, वह भी मानो देखो, किरणों में भी होता है, सूर्य की किरणों में भी, मानो देवासुर संग्राम होता है और वही किरणें, मुनिवरों! देखो, अन्तरिक्ष में एक विशाल रूप से मानो स्थिर रहती हैं, जहाँ वास्तविक सूर्य की जो किरणें हैं वे किरणें, मुनिवरों! देखो, शीतल बन करके पृथ्वी-मण्डल पर आती हैं। वे देखो, पालना के मूल में ही तो विद्यमान हैं। मेरे पुत्रो! देखो, वह यदि नग्न हो जाएं, यदि सूर्य की किरण नग्न हो जाए, उस मानव तरंगों से परमाणुओं से नग्न हो जा, तो न तो यह पृथ्वी का मानव रहेगा, न तो प्राणी मात्र रहेगा, सर्वत्र लुप्त हो जाएगा। मानो देखो, इस प्रकार मानव को गमन करना है।

मैं इसके पश्चात्, बेटा! शेष चर्चाएं तुम्हें कल प्रकट कर सकूंगा। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि मुनिवरों! देखो, हम विष्णु बने और विष्णु बन करके अपना कल्याण करें और कल्याणार्थ देखो, विष्णु नाम हम परमपिता परमात्मा को वाची बनाएं और अपनी मानो माता को वाची बनाएं और उसी प्रकार विष्णु नाम आत्मा का है और देखो, वह विष्णु नाम, मेरे प्यारे! सूर्य का है, जो पालन कर रहा है। दिनांक १३-१०-१९६९

१३ आध्यात्मिक याग अतिथि-०१३

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है।, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गएं हैं और जितना भी यह जड़-जगत् अथवा चैतन्य-जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। हम उस परमपिता परमात्मा की प्रायः महिता का वर्णन करते रहते हैं, क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र के द्वारा हम उस महामना जो हमारा पुरोहित है अथवा हमारा निर्माण करने वाला है और जगत् का नियन्ता है, उस महान प्रभु की महिमा का गान गाते चले जा रहे थे।

अन्तरात्मा की पिपासा

आज का हमारा वेदमन्त्र उस परम चेतना की महिमा का वर्णन कर रहा था, क्योंकि वह मेरा देव इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के चेतनित करने वाला है और उसकी जो चेतना है, वह प्रत्येक प्राणीमात्र में सदैव निहित रहती है और प्रत्येक मानव, बेटा! उस चेतना के आंगन में सदैव अने रहने की कामना करता रहता है। प्रत्येक वेदमन्त्र के द्वारा, मुनिवरों! हमारे ऋषि-मुनियों ने परम्परागतों से, बेटा! उसे प्रायः सखा रूप में स्वीकार किया है।

वह मेरा प्यारा प्रभु कैसा अलौकिक सखा है? बेटा! इसका वेदों ने सुन्दर रूपों से निरूपण किया है, अथवा उसकी महिमा का गुण-गान गाया है। प्रायः मानव यह विचारता रहता है कि तू गान अपनी वाणी से गा रहा है। परन्तु वाणी का जो एक उद्गार होता है, वह अन्तरात्मा से चला करता हैं, क्योंकि अन्तरात्मा को पिपासा होती है और वह पिपासा होती है अपने प्यारे सखा के लिए। क्योंकि पुत्र की कामना सदैव होती रहती है कि मैं अपनी ममतामयी माता की लोरियों में जाने के पश्चात् अपनी इस पिपासा को शान्त करना चाहता हूँ। इसी प्रकार वह जो अन्तरात्मा है, जिसके अधीन सर्वत्र इन्द्रियाँ रहती हैं, उसकी एक पिपासा होती है कि आज मैं अपने प्यारे पिता और माता के समीप जाना चाहता हूँ।

परमात्मा का माता रूप

मुनिवरों! जो माता जननी है, जो माता जन्म देने के पश्चात् भी लालन-पालन करने वाली है, जिसकी ममता का कोई पार नहीं पाता, आज हम उस माता की लोरियों में आनन्द का पान करने के लिए पिपासु होना चाहते है, मन में देखो, एक महत्ता की धारा होती है कि आज मैं अपनी उस प्यारी माता की उस मनोहर गोद में जाना चाहता हूँ, जो हम सबका लालन-पालन करने वाली है। उस माता की कितनी सुन्दर लोरियां है, जिसके पान करने के पश्चात् एक परम आनन्द की उपलब्धि होने लगती है। वह जो सोम है, जिसको पान करके प्रकृति अपने आंगन में रमण कर रही है। आज जिस सोमरस को पान करके ही मानव का हृदय, सोम बन जाता है, यह आत्मा की पिपासा ही है मुनिवरों! यह अपने प्यारे सखो के लिए सदैव याचना करती रहती है। जिस प्रकार बालक आसन पर विराजमान है और क्षुधा से पीड़ित हो रहा है, वह नाना प्रकार के संसार के वैभव को नहीं पुकारता, वह ममतामयी माता को पुकारता है, माँ! आ, मुझे अपनी लोरियों का आनन्द पान करा जिससे मेरी क्षुधा शान्त हो जाएं, जिससे मेरी पिपासा - शान्त हो जाएं।

हे माता! वास्तव में तू कैसी माँ है? तेरा जो अनुकरण है, तेरी जो रचना है, तेरी जो महत्ता हमारे शरीरों में

व्याप्त हो रही है, इस प्रकृति के कण-कण में व्याप्त है। हे माता् तू सबको अपने आँगन में धारण करने वाली है। हम भी तेरी आनन्दमयी लोरियों का पान करना चाहते हैं, जिस आनन्द को पान करने के ० मानव इस संसार में कुछ और पाने की कामना नहीं करता। माता! वह कौन-सा समय आयेगा जब मैं अपने में यह अनुभव करूंगा कि आज मैं सौभाग्यशाली बन गया हूँ, मेरा जीवन अमृतमयी बन गया है? वह कौन-सा समय होगा, जब मानव की इस प्रकार की पिपासा होती है, जागरूकता होती है, तो मानव अपने प्यारे प्रभु की गोद में चला जाता है?

अन्तरात्मा का गान

मुनिवरों! देखो, वेदों का जो ज्ञान है, वह मन और प्राणके द्वारा तो गाया ही जाता है। परन्तु उसका सम्बन्ध परमात्मा से होता है। इसीलिए आज संसार में प्रायः मानव को गान गाना चाहिए। परन्तु वह अपनी अन्तरात्मा से गाना चाहिए। जब मानव अपनी अन्तरात्मा से अपने प्यारे प्रभु को पुकारता रहता है, वह अपने प्यारे सखा के लिए वह वन्दना करता रहता है। तो वह जो माता है, वह कैसी पवित्र है? संसार की माता अपने पुत्र को त्याग सकती है, परन्तु आत्मा की जो वह पवित्र माता है, जिसके द्वारा सब साधन प्राप्त होते हैं, जिसके द्वारा वायु प्राप्त होती है, अग्नि प्राप्त होती है, जल प्राप्त होता है, पृथ्वी प्राप्त होती है, सर्वत्र जो देवता है, जो देते ही रहते हैं उनकी जितनी भी सम्पदा है, वह मानव को प्राप्त होती रहती है। वह जो मेरी माँ है, वह सब कुछ अर्पित कर देती है। उसी को हमारे यहाँ आचार्यों ने, बेटा! गायत्री छन्दों में वर्णन किया गया है। उस माता का प्रायः वर्णन अन्तरात्मा से होता है। हमें उस अन्तरात्मा की मनोहरता को स्वीकार करना चाहिए।

आत्मा का द्यौ से सम्बन्ध

आज हम आए हैं कुछ वैदिक सम्पदा पर विचार-विनिमय करने के लिए। वैदिक सम्पदा क्या है? वैदिकता क्या है? इसके ऊपर हमें विचार-विनिमय करना है। वैदिकता कहती है कि मानव का अन्तरात्मा जब लोक में विचारने लगता है, जैसे मानव के शरीर में मस्तिष्क होता है और उस मस्तिष्क में भी ब्रह्मरन्ध्र होता है, यह इस शरीर रूपी यज्ञशाला का द्यौ कहलाता है। यहाँ हृदय की प्रतिभा भी मानी गई है। जब साधक उसका अनुमोदन करने लगता है, उसको जानने के पश्चात् द्यौ-लोक में ऐसी सुन्दर आभा विराजमान रहती है, जिस आभा को जानने के पश्चात् मानव का जीवन ऐसा नहीं रह पाता, जिसको मानव नहीं जानता। आध्यात्मिक यागी, बेटा! हृदय रूपी वेदी में याग करता है। यह कैसा सुन्दर यज्ञ है? द्यौ-लोक में मानव को कितनी सम्पदा प्राप्त होती है? कितनी सुगन्धि प्राप्त होती है। जिस सुगन्धि को प्राप्त करने के पश्चात् मानव का जीवन सुगन्धिमय हो जाता है। वह स्वयं सुगन्धि बन जाता है।

आत्मा की अग्नि और साकल्य

बेटा! आज हम कुछ द्यौ-लोक की विवेचना कर रहे थे। जिस चर्चा के सम्बन्ध में हमारा जीवन एक अमृत बन करके महत्ता में परिणित हो जाता है। वैदिक विचार लोक-लोकान्तरों के सम्बन्ध में क्या कह रहा है? जैसे हमारे मानव शरीर में अग्नि है, जठराग्नि है, परन्तु उसको प्रदीप्त करने के लिए सुन्दर घृत की आवश्यकता होती है। जैसे मानव शरीर में अग्नि प्रदीप्त हो रही है परन्तु उस अग्नि को प्रदीप्त करने के लिए, उत्तेजना देने के लिए मानव को समिधा व घृत की प्रायः आवश्यकता रहती है, मानव की जो सुन्दर अग्नि है, वह ज्ञान स्परूप है, जो ज्ञान में रमण करने वाली पवित्र आभा है। आज उसके ऊपर हमें विचार करना है। परन्तु वह किस प्रकार पवित्र होगी? जबकि हम अपनी इन्द्रियों के विषयों को लेकर सामग्री बनाएंगे।

आत्मा की समिधा-तीन गुण

महर्षि दालभ्य, महाराजा शिलभ और प्रवाहण यह तीनों ही मदालता माता के पुत्र थे। तीनों का जीवन

संसार में अग्रणी रहती था। इनका विचार-विनिमय हो रहा था, महाराजा शिलभ ने महर्षि दालभ्य से कहा कि महाराज! हृदय की जो अग्नि है, समिधा है, वह क्या है? उस समय महर्षि दालभ्य ने कहा कि- मेरे विचार में तो यह आता है कि मानव के शरीर की जो अग्नि है, वह तो प्राणं ब्रह्मः लोकाः मानो वह तो आभा को कहा गया है। रहा यह कि इस अग्नि को कौन प्रदीप्त कर रहा है? समिधा क्या है? तो ऋषि-मुनियों - तीन गुणों को जब हम एकाग्र हो करके समिधा बना लेते हैं। रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण इन तीनों की समिधा बना करके और घृत में लय कर देते हैं तो अग्नि प्रदीप्त होती रहती है।

आत्मा का घृत-मन

मुनिवरों! घृत उस काल में बनता है जैसे गौ रूपी पशु के शरीर में नाना प्रकार की वनस्पतियों को पान करने के पश्चात् प्रायः शरीर में मन्थन होता रहता है और मन्थन किया हुआ जो अमृतमय घृत होता है उस घृत को जब हम मन्थन कर लेते हैं, तो वह घृत बन जाता है। बेटा! औषधियों का जो सूक्ष्म रस है, उसी का नाम घृत कहा गया है। इसी प्रकार प्रभु के इस जगत् में प्रायः ऐसा होता रहता है। मानो देखो, यह जो मन है वह प्रकृति का सूक्ष्म तत्त्व है, यह प्रकृति का जो औषध है, प्रकृति में जो नाना प्रकार की औषध है, उसका जो सूक्ष्म तन्तु है, उसी का नाम मन कहा गया है। महर्षि दालभ्य ने कहा कि - वह जो सूक्ष्म रस है, उसी को हमारे यहाँ मन कहा गया है। मन प्रकृति की ऐसी-ऐसी सुन्दर आभा को रच देता है। ऐसा स्थूल शरीर बना देता है, निर्धन बन जाता है, धनवान बन जाता है, राजा बन जाता है, ऋषि और पत्नी बन जाता है, पति बन जाता है, परन्तु स्वप्न की दशा में जब मानव परिणित हो जाता है तो एक नवीन जगत् रच देता है। इसका मूल कारण यह है कि वह प्रकृति का सूक्ष्म तत्त्व है, क्योंकि प्रकृति का यदि कोई संसार में सूक्ष्म तत्त्व है, तो उसी को हमारे यहाँ मन कहा गया है।

अग्नि की ऊर्ध्वागति

बेटा! जब मन का प्राण के साथ में उसका सन्निधान होता है, जब मन और प्राण दोनों का सन्निधान होता है, सामग्री एकत्रित होती है, हम तीनों गुणों का सामग्री बना लेते हैं तो उस समय मन और प्राण दोनों की आहुति देकर के इस मानव शरीर का जो हृदय है और हृदय में जो एक महान् अग्नि प्रदीप्त हो रही है, वह अग्नि ऐसे प्रदीप्त हो जाती है जिस प्रकार यज्ञशाला में घृत को प्रविष्ट करते ही अग्नि की ऊर्ध्वगति बन जाती हैं। इसी प्रकार उसकी ऊर्ध्वगति बन जाती है। यह प्रकृति का सूक्ष्म रहस्य माना गया है।

अन्य लोक-लोकान्तरों में यज्ञ-स्वरूप

आज जब हम मन और प्राण के द्वारा इस घृत से आहुति देते हैं, जब एक विचार हमारे मस्तिष्क में और आता है कि-प्रभु! के ब्रह्माण्ड में, द्यौ-लोक में जो लोक-लोकान्तर हैं, उनमें कुछ लोक इस प्रकार के हैं, जिनमें केवल आत्मिक चिन्तन होता है। कुछ लोक इस प्रकार के है, जहाँ आत्मिक यज्ञ होता है, और कुछ इस प्रकार के हैं जहाँ पदार्थों के द्वारा यज्ञ होता है। पदार्थो के यज्ञ का और आध्यात्मिकवादी यज्ञ दोनों का समन्वय क लिया जाता है। इस प्रकार के लोक हैं, जहाँ विज्ञान में परमाणुवादमय यज्ञ होता रहता हैं। नाना प्रकार के लोक-लोकान्तर, मेरे प्यारे! प्रभु के ब्रह्माण्ड में है।

वैदिक ज्ञान की सार्वभौमिकता

मुनिवरों! देखो, जिस प्रकार हमारे यहाँ गौ रूपी है, उसकी ही लोरियों से दुग्ध का जन्म होता है। वनस्पतियों का रस बनता है, रस बन करके उसका घृत बनाया जाता है। इसी प्रकार जब हम सूर्य मण्डल की यात्रा करते हैं, बृहस्पति में जाते हैं, आरुणि में जाते हैं, अरून्धति में जाते है, वशिष्ठ-मण्डल में जाते हैं, सप्तऋषि मण्डल में जाते हैं, ध्रुव-लोकों में जाते हैं, ज्येष्ठा नक्षत्रों में जाते हैं, अचंग्ड लोकों में जाते हैं, मानधूप लोकों में

जाते हैं, आरुणि लोकों में जाते हैं, सोमभूत लोकों में जाते हैं, अश्विनी लोकों में जाते हैं, सौर मण्डलों में जाते हैं तो हमें यह प्रतीत होता है कि यहाँ कैसा पशु होता है, कौन-सा तत्त्व प्रधान होता है? वनस्पतियों का कैसा स्वरूप होता है? इसमें यज्ञ का कैसा साकल्य होता है? बेटा! वहाँ भी अपने रूपों में जैसा तत्त्व प्रधान होता है उसके अनुसार सभी प्रदार्थ पाए जाते हैं, क्योंकि वेद का ज्ञान सर्वत्र विद्यमान है। क्योंकि कोई ऐसी विद्या नहीं है, जो वेदों में प्रायः न हो।

वैदिक रहस्य का स्पष्टीकरण

जितना भी मस्तिष्क अविक्षिप्त होगा, पक्षपात् से रहित होगा, विचारक होगा, यौगिक मस्तिष्क होगा उतना ही मानव के हृदय में एक जानकारी की ऐसी अमूल्य निधि आने लगती है, जिससे मानव वास्तव में विभोर हो जाता है। वेदों के रहस्य को मानव रूढ़ि से नहीं जान सकता, उसको जब मन रूपी अपने घृत से उस मस्तिष्क को, अग्नि को प्रदीप्त करते हैं ज्ञान के द्वारा, हृदय की नाना प्रवृत्तियों को, बाह्य- प्रवृत्तियों को जब आन्तरिक बना लेते हैं और मस्तिष्क में विचार-विनिमय प्रारम्भ हो जाता है उस विचार को ध्यानावस्थित कहते हैं। ध्यान की अवस्था होते ही उस वेद के मन्त्र में, परमात्मा की वाणी में, जो रहस्य होता है, वह समाप्त हो जाती है। उसका वास्तविक स्वरूप उसके समीप आ जाता है। क्योंकि हमारे यहाँ प्रायः ऐसा माना गया है कि वेदों में मन और प्राण दोनों की जो विशेषता है, जहाँ मन और प्राण का समन्वय हो जाता है, क्योंकि ध्यानावस्थित हम उसी को कहते हैं, जहाँ मन और प्राण दोनों की सहकारिता होती है, वह जो ध्यानावस्थित है, उसमें वेद की रूढ़ि नहीं रहती। उसका मस्तिष्क उन रहस्यों को जानने लगता है। जहाँ रूढ़ि नहीं होती वहाँ वास्तविक ज्ञान होता है। वह ज्ञान से भरा एक महान् विज्ञान होता है। इसलिए वेद के रहस्यों को जानने वाला प्रायः योगी ही होता है। योगी ही वेद के रहस्यों को जानता है। क्योंकि प्रकाश का प्रकाश से समन्वय कर देना जो जानता है, इनका निदान जानता है जैसे चतुर वैद्यराज होता है वह रूग्ण का अच्छी प्रकार निदान जानता है तो वह उसको औषध भी प्राप्त कराता है। इसलिए वेदों के अर्थों को, वेद की आभा को केवल वह योगी जानता है जो अपने प्राण और मन दोनों को समन्वय कर देता हैं। वह वेद के ऐसे प्रकाश में चला जाता है कि उसके जीवन में रात्रि अथवा अन्धकार नहीं होता।

लोक-लोकान्तरों में घृत की आभा

मेरे प्यारे ऋषिवर! महर्षि दालभ्य, ने महात्मा शिलभ और प्रवाहण से कहा कि हम नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में जाते हैं तो वहाँ कैसी औषध हैं? कैसा घृत है? इसके ऊपर विचार-विनिमय करना है। जब हम यह विचारते हैं कि वहाँ का घृत कैसा है? और औषध क्या है? तो ऋषियों ने उत्तर दिया- जिसका जैसा वायुमण्डल होता है वैसा ही वहाँ का औषण होता है। जहाँ जो तत्त्व प्रधान होता है, वहाँ उसक प्रकार का औषध और उसी प्रकार से मन्थन करके घृत भी उसी प्रकार का होता है। जैसे अग्नि का घृत क्या है? अग्नि का घृत विद्युत माना गया है। विद्युत में भी २८४ प्रकार की आभा होती है।

वायु में २८४ प्रकार की आभा के आचार्यों ने आरोपण किए हैं। अश्विनी कुमारों ने कहा, महात्मा दधीचि जैसे ऋषियों ने इसका निरूपण किया है। इसी प्रकार आपो (जलों) में भी इसी प्रकार की धारा मानी जाती है। अन्तरिक्ष में भी, पांचों तत्त्वों में २८४ प्रकार की गतियां और आभा होती हैं। इसी प्रकार जैसा लोक होगा जिसमें जो तत्त्व प्रधान होगा उसी प्रकार उसकी आभा बन करके वसुन्धरा में परिणित हो जाती है। इसीलिए हमारे आचार्यों ने इसके ऊपर बहुत ही गम्भीरता से विचार-विनिमय किया है, आज हमें इसे गम्भीरता को विचार लेना चाहिए।

आज जब हम ध्रुव-मण्डल में जाते हैं, मंगल में जाते हैं, बृहस्पति में जाते हैं और भी नाना लोक-लोकान्तरों में परिणित होते हैं तो एक ही आभा दृष्टिपात होने लगती है और हम घृतों को विचारने लगते हैं। उनका घृत एक नित्य कहलाया गया हैं। वास्तव में जैसे सर्वस्य प्रकृति का एक ऋत् और सत्य होता है। एक सत्य की ही उसमें आहुति प्रदान की जाती है। इसी प्रकार मानव को अपने जीवन में ऐसी आभा को अपना लेना चाहिए, जिसको वेद का पवित्र ज्ञान कहते हैं।

अहा! उदर की पूर्ति करना यह वेद का ज्ञान नहीं कहलाता। वेद का ज्ञान वह होता है, जिसका आत्मा से ही प्रायः सम्बन्ध रहता है। आत्मा का ही अनुमोदन किया जाता है। वहीं तो पवित्र ज्ञान होता है। आज हमें इस पवित्र ज्ञान को जानना चाहिए। नाना प्रकार के पशुओं पर विचार-विनिमय करना चाहिए। बेटा! कहीं अग्नि तत्त्व की प्रधानता वाले पशु होतेहैं, कहीं जल की प्रधानता वाले पशु हैं, कहीं वायु की प्रधानता वाले पशु होते हैं, क्योंकि पंच महाभूत के बिना अप्रेत (विकास) नहीं होता, लोक नहीं होता। क्योंकि परमाणुवाद वहाँ भी होता है।

मुनिवरों! विचार यह है कि जैसे पृथ्वी मण्डल में प्राण और मन का घृत बना करके यज्ञ करते हैं जैसे बृहस्पति मण्डल में प्राण की विशेषता है। क्योंकि वहाँ वायु की प्रधानता होने के नाते उसकी आभा विचित्र बन जाती है। परन्तु वहाँ वायु से मिश्रण होने वाला जल है, इन दोनों की प्रधानता होने के नाते वहाँ बहने वाला घृत बन करके जिसको हम औषण कहते हैं, वहाँ वायु औषण होती है, जल औषध होता है दोनों का पान किया जाता है। पशु भी उसी प्रकार के होते हैं। पान करते हैं, उनका घृत बनाया जाता है। जहाँ भी दृष्टिपात करोगे वहीं तुम्हें आध्यात्मिकवाद प्राप्त होगा। क्योंकि आध्यात्मिक जो विज्ञान है उसमें मौलिकता है। जीव का जन्मसिद्ध अधिकार होता है। किसी लोक-लोकान्तर में रमण करने वाला प्राणी क्यों न हो, उसकी आभा एक विचित्रता में सदैव परिणित रहती है। इस सम्बन्ध में मुझे आज अधिक परिचय नहीं देना है।

मन और प्राण का समन्वय

आज हमें महर्षि दालभ्य के शब्दों पर विचार-विनिमय करना चाहिएं। आज जो महर्षि दालभ्य तथा और विचारकों ने कहा है यह वेद का विचार है जिसके ऊपर हमारे ऋषि-मुनियों की टिप्पणियां चला करती हैं, वह टिप्पणी नाना प्रकार का विचार देकर ऋषियों की सभा में विचार-विनिमय होते रहते थे। जहाँ वैज्ञानिक भी हों, परमाणु वैज्ञानिक हों, ध्यानावस्थित रहने वाले हां, आत्म के दिग्दर्शन को पान करने वाले, जहाँ सभी विचारक पुरूष होते हैं, वहीं नाना प्रकार के विचारों का अप्रेत होता है, संशोधन होता है। देखो, हमारे यहाँ जब मन का और प्राण का समन्वय हो जाता है, तो उसकी जो प्रवृत्ति है वह मस्तिष्क में जाती है, मस्तिष्क की प्रवृत्ति हृदय में जाती है, हृदय रूपी गुफा में बैठा हुआ जो पवित्र अन्तरात्मा है वह इन विचारों का, उस सामग्री का, समिधा का संशोधन कर देता है।

मेरे प्यारे ऋषिवर! वह मन रूपी जो घृत है, प्राण रूपी जो घृत है दोनों का अस्वात बना होता है। क्योंकि प्राण में यदि औषधियों का रोपण न होता तो इसमें तप न होता। प्राण जब श्वासों की गति प्रदान करता है, उस समय यह परमाणु लेकर चलता है, यह घृत को ले करके चलता है, मन के ऊपर जब इसका अप्रेत हो जाता है, मिलान हो जाता है तो यह मन भी एक ज्योति का घृत ले करके चलता है।

मन और अन्न का समन्वय

प्रकृति का रहस्य होने के नाते, प्रकृति का सूक्ष्म तन्तु होने के नाते ऋषि-मुनियों ने कहा है कि जो इस मन की उत्पत्ति है वह अन्न के ऊपर होती है। मन अन्न से ही निर्धारित रहता है। क्योंकि मन की जो आभा है वह अन्न से उत्पन्न होती है। इसीलिए ऋषि-मुनियों ने कहा है कि- अन्न जितना शोधन किया हुआ होता है, विचारकों का

होता है, भोली माता जितना पवित्र अन्न पवित्र हृदय को देती है उतना ही बालक का हृदय बनता चला जाता है। जब माता अन्न को पवित्र करके हृदय से देती है। कैसा अन्न? जिससे मन की आभा उत्पन्न होती है। यदि मन के साथ में परमाणुवाद नहीं रहेगा अन्न के साथ में मन नहीं रहेगा तो अपना अन्न का कोई अस्तित्व नहीं रह जाता। इसीलिए ऋषि-मुनियों ने कहा है कि आज अन्न की ही पवित्रता होनी चाहिए। इसी को आचार्यों ने महर्षि गौतम इत्यादि ऋषियों ने इसके ऊपर अपना बहुत सुन्दर विचार दिया है। महर्षि याज्ञवल्कय ने तो इसको प्रत्यक्ष करके मानव के शरीर में प्रकट करने का प्रयास किया। मुझे स्मरण है जब कजली वनों में ऋषि-मुनियों का विचार-विनिमय होता रहता तो मन के ऊपर नाना प्रकार की टिप्पणियां चलती थीं।

संसार का जो घृत कहलाया गया है, लोक-लोकान्तरों का जो घृत है, उसके ऊपर मैं कई कालों में विचार दे चुका हूँ। आज मुझे समय इतना आज्ञा नहीं दे रहा है। आज हमें महान् ज्ञान को विचारना है जो हमें वेद देता है, वेद की जो आभा है, लोक-लोकान्तरों की चर्चा तो किसी काल में करूंगा। जब लोक-लोकान्तरों का विषय वेद-पाठ में आयेगा, वहाँ के पशु का वर्ण आयेगा। आज का विषय तो केवल यह है कि हमें उस महान् प्रभु के ज्ञान को विचारना है। यह आत्मा से सम्बन्धित है और वह अपनी मां को पुकारता रहता है, हे माँ! तू कितनी पवित्र है, तू कितनी भोली है, तू कितनी महान् है, तू जब अपनी लोरियों को अपने प्यारे पुत्रों! को पान कराती हे तो तेरा पुत्र विभोर हो जाता है। संसार में उस कुछ और प्राप्त करना शेष नहीं रहता है। इसी प्रकार ममतामयी जो माँ है जब वह मानव को सोमरस प्रदान कर देती है, तो मानव का जीवन अमृतमयी बन जाता है, पवित्र बन जाता है तो मानव ध्यानावस्थित हो करके एक महान् धारा को अपनाने लगता है। आज सूक्ष्म सा हमारा विचार है, इस विचार के ऊपर किसी और काल में अपने विचार प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा। स्थान और दिनांक अज्ञात।